CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ओशो रजनीश

कुंडलिनी जागरण व शक्तिपात

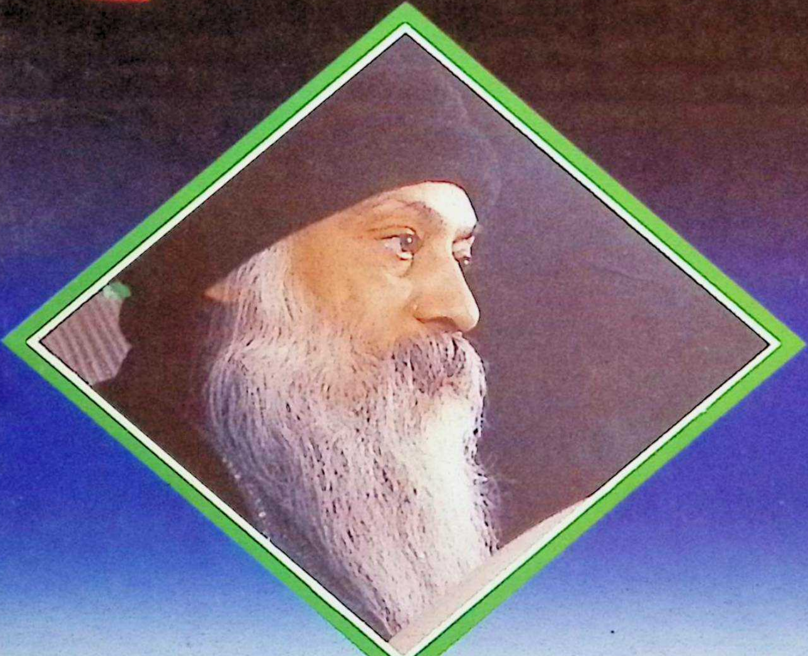

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

भगवान श्री रजनीश
अब केवल 'ओशो'
नाम से जाने जाते हैं।
ओशो के अनुसार उनका नाम
विलियम जेम्स के शब्द
'ओशनिक' से लिया गया है, जिसका
अभिप्राय है सागर में विलीन हो जाना।
'ओशनिक' से अनुभूति की व्याख्या तो
होती है, लेकिन वे कहते हैं कि अनुभोक्ता के
संबंध में क्या? उसके लिए हम 'ओशो'
शब्द का प्रयोग करते हैं। बाद में उन्हें पता
चला कि ऐतिहासिक रूप से सुदूर पूर्व में भी
'ओशो' शब्द प्रयुक्त होता रहा है, जिसका
अभिप्राय है: भगवत्ता को उपलब्ध व्यक्ति,
जिस पर आकाश फूलों की वर्षा करता है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ओशो रजनीश

ओशो रजनीश परम दुर्लभ घटना हैं अस्तित्व की।

बुद्धत्व की उपलब्धि में सदियों-सदियों, जन्मों-जन्मों का एक तूफान शांत होता है—परम समाधान को प्राप्त है और अस्तित्व उसमें नये रंग लेता है। अस्तित्व का परम सौन्दर्य उसमें खिलता है, श्रेष्ठतम पुष्प विकसित होते हैं और अस्तित्वगत ऊंचाई का एक परम शिखर-एक नया गौरीशंकर-वहाँ उस व्यक्ति की परम शून्यता में निर्मित हो उठता है। ऐसा व्यक्ति अपने स्वभाव के अंतिम बिन्दु में स्थित हो जाता है, जहाँ से बुद्ध के भीतर का बुद्ध बोल उठता है, कृष्ण के भीतर का कृष्ण बोल उठता है, क्राइस्ट के भीतर का क्राइस्ट बोल उठता है, पतंजलि के भीतर का पतंजलि बोल उठता है; लाओत्से के भीतर का लाओत्से बोल उठता है और लाखों-लाखों और तूफान परम समाधान की दिशा में मार्गदर्शन पाते हैं।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

डायमंड पाकेट बुक्स में ओशो का अलौकिक साहित्य

एक ओंकार सतनाम
मैं मृत्यु सिखाता हूँ
शून्य समाधि
सम्बोधि के क्षण
शून्य का दर्शन
अमृत की दिशा
सम्भावनाओं की आहट
बहुतेरे हैं घाट
मैं धार्मिकता सिखाता हूँ धर्म नहीं
नये समाज की खोज
एक एक कदम
प्रार्थना के बीज
आकाश भर आनन्द
साधना के आयाम
सहजयोगः अभी और यहीं
सहज योगः ध्यान और प्रेम
सहज योगः साक्षी और प्रेम
सहज योगः प्रार्थना और आनन्द
सहजयोगः महाक्रान्ति
योग-सूत्रः अहंकार और समर्पण
योग-सूत्रःबुद्धों का मनोविज्ञान
योग-सूत्रःनींद, स्वप्न और बोध
योग सूत्रः समाधि के दो रूप
योग-सूत्र : एक वैज्ञानिक दृष्टि
योग-सूत्रः आंतरिक अनुष्ठान
योग-सूत्रः प्रज्ञा और समाधि
योग-सूत्रः सद्गुरु को समर्पण
ध्यान सूत्रः अन्तिम यात्रा
ध्यान सूत्रः एक अपूर्व अभियान
साधना पथ
प्रभु की पगडंडियाँ
शिक्षाः नये प्रयोग
शिक्षा और विद्रोह
शिक्षा और जागरण
शिक्षा में क्रान्ति
भारत के जलते प्रश्न
धर्म और राजनीति
स्वर्णिम भारत
प्रेम है द्वार सत्य का
दिया बले अगम का
शून्यता है महामुक्ति
मुक्त गगन के पंछी
जीवन संगीत
सतगुर मिले तु उबरे
सवद भवा उजियाला
हंसे खेले न करे मन भंग
सहजै रहिबा
उपनिषद-शून्य संवाद
एकमात्र उपाय : जागो
क्रान्ति सूत्र : साक्षी भाव
इक साधे सब सधै
भारत एक अनूठी संपदा
गीताः मनोविज्ञान का परम शास्त्र
गीताः विज्ञान, कला, अध्यात्म
गीताः समस्त योगों का सार
संभोग से समाधि की ओर-I
संभोग से समाधि की ओर-II
संभोग से समाधि की ओर-III
संभोग से समाधि की ओर-IV
भक्तिःपरम प्रेम रूपा
भक्तिःविराट का अनुभव
भक्तिः शून्य की झील में प्रेम का कमल
भक्तिःनिराकार से एकाकार
भक्तिःजीवन रूपांतरण की कला
अस्वीकृति में उठा हाथ
नवी क्रान्ति की रूपरेखा
विचार क्रान्ति
गांधी पर पुनर्विचार
दिया अमृत पाया जहर
रजनीश ध्यान योग
कुंडलिनी और तंत्र
कुंडलिनी और सात शरीर
कुंडलिनी जागरण और शक्तिपात
साक्षी कृष्ण और रासलीला
कृष्णः साधना रहित सिद्धि
कृष्ण और हंसता हुआ धर्म
ऐसी भक्ति करै रैदासा
दरिया झूठ सो झूठ है
जात हमारी हम है
सुखिया सब संसार
दुखिया दास कबीर
जित देखूं तित तूं
जोतहिं जोति समानी
बोलै शेख फरीद
सत भाषै रैदास
क्या मेरा क्या तेरा
मन लगा यार फकीरी में
कृष्ण गुरु भी सखा भी
कृष्ण जिज्ञासा खोज उपलब्धि
शिव साधना
शिव दर्शन
निरगुन का बिसराम
लिखा लिखी की है नहीं
गुरु गोविन्द दोउ खड़े
हीरा पायो गांठ गठियायो
मेरे तो गिरधर गोपाल
राम नाम रस पीजै
राम नाम निज औषधि
दादू सहजै देखिए
नहीं जोग नहीं जाप
तेरा साईं तुज्झ में
आपुई गई हिराय
कुंडलिनी यात्रा

डायमंड पाकेट बुक्स

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ओशो रजनीश

कुंडलिनी जागरण व शक्तिपात

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

संकलन : मा अमृत साधना, मा कृष्ण प्रिया
संपादन : स्वामी नरेन्द्र बोधिसत्व
प्रकाशक : डायमण्ड पाकेट बुक्स, प्रा० लि०
2715, दरियागंज, नई दिल्ली - 2
मुद्रक : जितेन्द्र प्रिंटर्स, शाहदरा, दिल्ली - 32
प्रथम संस्करण : 1993
मूल्य : 15 रुपये
कापीराइट : सर्वाधिकार सुरक्षित, साधना फाउंडेशन, पूना

इस पुस्तक अथवा इस पुस्तक के किसी अंश को इलेक्ट्रानिक, मैकेनिकल फोटोकापी, रिकार्डिंग या अन्य सूचना - संग्रह साधनों एवं माध्यमों द्वारा मुद्रित अथवा प्रकाशित करने के पूर्व साधना फाउंडेशन, पूना की लिखित अनुमति अनिवार्य है।

Kundalini Jagran Wa Shakti Path   Osho Rajneesh [illegible]

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अनुक्रम

1. कुंडलिनी जागरण व शक्तिपात 7
2. यात्रा: दृश्य से अदृश्य की ओर 29
3. श्वास की कीमिया 59
4. आंतरिक रूपांतरण के तथ्य 77
5. मुक्ति सोपान की सीढ़ियां 113

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पहली प्रश्नोत्तर चर्चा

कुंडलिनी जागरण व शक्तिपात

प्रश्न : तीव्र श्वास-प्रश्वास लेना और मैं कौन हूं पूछना, इसका कुंडलिनी जागरण और चक्र-भेदन की प्रक्रिया से किस प्रकार का संबंध है ?

संबंध है और बहुत गहरा संबंध है। असल में, श्वास से ही हमारी आत्मा और शरीर का जोड़ है; श्वास सेतु है। इसलिए श्वास गयी कि प्राण गये। मस्तिष्क चला जाये तो चलेगा, आंखें चली जायें तो चलेगा, हाथ-पैर कट जायें तो चलेगा — श्वास कट गयी कि गये; श्वास से जोड़ है हमारी आत्मा और शरीर का। और आत्मा और शरीर के मिलन का जो बिंदु है, वहीं कुंडलिनी है — उसी बिंदु पर; वहीं वह शक्ति है जिसको कुंडलिनी कहते हैं.... नाम कुछ भी दिया जा सकता है.... वह ऊर्जा वहीं है।

कुंडलिनी ऊर्जा के दो रूप

और इसलिए उस ऊर्जा के दो रूप हैं। अगर वह कुंडलिनी की ऊर्जा शरीर की तरफ बहे, तो काम-शक्ति बन जाती है, सेक्स बन जाती है; और अगर वह ऊर्जा आत्मा की तरफ बहे, तो वह कुंडलिनी बन जाती है। शरीर की तरफ बहने से वह अधोगामी हो जाती है, और आत्मा की तरफ बहने से ऊर्ध्वगामी हो जाती है। पर जिस जगह वह है, उस जगह पर चोट श्वास से पड़ती है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इसलिए तुम हैरान होओगे : संभोग करते समय शांत श्वास को नहीं रखा जा सकता; संभोग करते वक्त श्वास की गति में तत्काल अंतर पड़ जायेगा। कामातुर होते ही चित्त श्वास को तेज कर लेगा, क्योंकि उस बिंदु पर चोट श्वास करेगी तभी वहां से काम-शक्ति बहनी शुरू होगी। श्वास की चोट के बिना संभोग-असंभव है। और श्वास की चोट के बिना समाधि भी असंभव है। समाधि उसके ऊर्ध्वगामी बिंदु का नाम है और संभोग उसके अधोगामी बिंदु का नाम है। पर श्वास की चोट तो दोनों पर पड़ेगी।

श्वास और वासना का घनिष्ट संबंध

तो अगर चित्त काम से भरा हो, तब श्वास को धीमा करना, श्वास को शिथिल करना। जब चित्त में कामवासना घेरे, या क्रोध घेरे, और कोई वासना घेरे, तो श्वास को शिथिल करना, और कम करना और धीमे लेना। तो काम और क्रोध दोनों विदा हो जायेंगे.... टिक नहीं सकते; क्योंकि जो ऊर्जा उनको चाहिए वह श्वास की बिना चोट पड़े नहीं मिल सकती। इसलिए कोई आदमी क्रोध नहीं कर सकता, श्वास को धीमे लेकर। और करे तो वह चमत्कार है। करे तो बिलकुल चमत्कार है; साधारण घटना नहीं है। हो नहीं सकता; श्वास धीमी हुई कि क्रोध गया। कामोत्तेजित भी नहीं हो सकता श्वास को शांत रख कर; क्योंकि श्वास शांत हुई कि कामोत्तेजना गयी।

तो जब कामोत्तेजित हो मन, क्रोध से भरे मन, तब श्वास को धीमी रखना; और जब ध्यान की अभीप्सा से भरे मन, तो श्वास की तीव्र चोट करना। क्योंकि जब ध्यान की अभीप्सा भीतर हो, और श्वास की चोट पड़े, तो जो ऊर्जा है वह ध्यान की यात्रा पर निकलनी शुरू हो जाती है।

तीव्र श्वास की चोट से शक्ति जागरण

तो कुंडलिनी पर गहरी श्वास का बहुत परिणाम है। प्राणायाम अकारण ही नहीं खोज लिया गया था। वह बहुत लंबे प्रयोगों और अनुभवों से ज्ञात होना शुरू हुआ कि श्वास की चोट से बहुत कुछ किया जा सकता है; श्वास का आघात बहुत कुछ कर सकता है। और यह आघात जितना तीव्र हो, उतनी त्वरित गति होगी। और हम सब साधारणजनों में, जिनकी कुंडलिनी जन्मों-जन्मों से सोयी है, उसको बड़े तीव्र आघात की जरूरत है; घने आघात की जरूरत है; सारी शक्ति इकट्ठी करके आघात करने की जरूरत है।

तो श्वास से तो कुंडलिनी पर चोट पड़नी शुरू होती है, मूल केंद्र पर

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चोट पड़नी शुरू होती है। और जैसे-जैसे तुम्हें अनुभव होना शुरू होगा, तुम बिलकुल आंख बंद करके देख पाओगे कि श्वास की चोट कहां पड़ रही है। इसलिए अक्सर ऐसा हो जायेगा कि जब श्वास की तेज चोट पड़ेगी तो बहुत बार कामोत्तेजना भी हो सकती है। वह इसलिए हो सकती है कि तुम्हारे शरीर का एक ही अनुभव है, श्वास तेज पड़ने का, और उस ऊर्जा पर चोट पड़ने का एक ही अनुभव है – सेक्स का। तो जो अनुभव है उस लीक पर शरीर फौरन काम करना शुरू कर देता है। इसलिए बहुत साधकों को, साधिकाओं को एकदम तत्काल यौनकेंद्र पर चोट पड़नी शुरू हो जाती है।

गुरजिएफ के पास अनेक लोगों को ऐसा ख्याल हुआ... और होना बिलकुल स्वाभाविक है; अनेक स्त्रियों को ऐसा ख्याल हुआ कि उसके पास जाते ही उनके यौनकेंद्र पर चोट होती है। यह बिलकुल स्वाभाविक है। इसकी वजह से गुरजिएफ को बहुत बदनामी मिली। इसमें उसका कोई कसूर न था। असल में ऐसे व्यक्ति के पास, जिसकी अपनी कुंडलिनी जागृत हो, तुम्हारी कुंडलिनी पर चोट होनी शुरू होती है, उसकी चारों तरफ की तरंगों से। लेकिन तुम्हारी कुंडलिनी तो अभी बिलकुल सेक्स सेंटर के पास सोयी हुई होती है, इसलिए चोट वहीं पड़ती है; पहली चोट वहीं पड़ती है।

जागी हुई कुंडलिनी से चक्र सक्रिय

श्वास तो गहरा परिणाम लानेवाली है, कुंडलिनी के लिए। और सारे चक्र, जिन्हें तुम चक्र कहते हो, वह सब कुंडलिनी के यात्रा-पथ के स्टेशन हैं; जहां-जहां से कुंडलिनी होकर गुजरेगी, वे स्थान हैं। ऐसे तो बहुत स्थान हैं; इसलिए कोई कितने ही चक्र गिन सकता है, लेकिन बहुत मोटे विभाजन करें तो जहां कुंडलिनी थोड़ी देर ठहरेगी, विश्राम करेगी, वे सात स्थान हैं।

तो सब चक्रों पर परिणाम होगा। और जिस व्यक्ति का जो चक्र सर्वाधिक सक्रिय है, उस पर सबसे पहले परिणाम होगा। जैसे कि अगर कोई व्यक्ति मस्तिष्क से ही दिन-रात काम करता है, तो तेज श्वास के बाद उसका सिर एकदम भारी हो जायेगा; क्योंकि उसका जो मस्तिष्क का चक्र है, वह सक्रिय चक्र है। श्वास का पहला आघात सक्रिय चक्र पर पड़ेगा। उसका सिर एकदम भारी हो जायेगा। कामुक व्यक्ति हो तो उसकी कामोत्तेजना बढ़ जायेगी; बहुत प्रेमी व्यक्ति है तो उसका प्रेम बढ़ जायेगा; भावुक व्यक्ति है तो भावना बढ़ जायेगी।

उसका जो अपने व्यक्तित्व का केंद्र बहुत सक्रिय है, पहले उस पर चोट

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

होनी शुरू हो जायेगी। लेकिन तत्काल दूसरे केंद्रों पर भी चोट शुरू होगी। और इसलिए व्यक्तित्व में रूपान्तरण भी तत्काल अनुभव होना शुरू हो जायेगा कि मैं बदल रहा हूं; यह मैं वही आदमी नहीं हूं जो कल तक था। क्योंकि हमें आदमी का पता ही नहीं है कि हम कितने हैं; हमें तो पता है उसी चक्र का जिस पर हम जीते हैं। जब दूसरा चक्र हमारे भीतर खुलता है तो हमें लगता है कि हमारा व्यक्तित्व गया, यह तो हम दूसरे आदमी हुए; या हम अब वही आदमी नहीं जो कल तक थे। यह ऐसे ही है, जैसे कि इस मकान में हमें इसी कमरे का पता हो, यही हमारे कमरे का नक्शा हो हमारे दिमाग में। अचानक एक दरवाजा खुले और एक और कमरा हमें दिखाई पड़े, तो हमारा पूरा नक्शा बदलेगा। अब जिसको हमने अपना मकान समझा था, अब वह दूसरा हो गया। अब एक नयी व्यवस्था उसमें हमें देनी पड़ेगी।

सक्रिय केंद्रों से नये व्यक्तित्व का आविर्भाव

तो तुम्हारे जिन-जिन केंद्रों पर चोट होगी, वहां-वहां से व्यक्तित्व का नया आविर्भाव होगा। और जब सारे केंद्र सक्रिय होते हैं एकसाथ, उसका मतलब है कि जब सबके भीतर से ऊर्जा एक सी प्रवाहित होती है, तब पहली दफे तुम अपने पूरे व्यक्तित्व में जीते हो। हममें से कोई भी अपने पूरे व्यक्तित्व में साधारणतः नहीं जीता। और हमारे ऊपर के केंद्र तो अछूते रह जाते हैं। तो श्वास इन केंद्रों पर भी चोट करेगी।

और 'मैं कौन हूं' का जो प्रश्न है, वह भी चोट करनेवाला है; वह दूसरी दिशा से चोट करनेवाला है। इसे थोड़ा समझो। श्वास से तो ख्याल में आया, अब 'मैं कौन हूं' इससे कुंडलिनी पर कैसे चोट होगी।

यह कभी हमारे ख्याल में नहीं : तुम आंख बंद कर लो, और एक नग्न स्त्री का चित्र सोचो.... तुम्हारा सेक्स सेंटर फौरन सक्रिय हो जायेगा; क्यों ? तुम सिर्फ एक कल्पना कर रहे हो, तुम्हारा सेक्स सेंटर (काम केंद्र) क्यों सक्रिय हो गया ? असल में प्रत्येक सेंटर की अपनी कल्पना है – समझे न ?... प्रत्येक सेंटर की अपनी इमेजिनेशन है। और अगर उसकी इमेजिनेशन के करीब इमेजिनेशन करनी तुमने शुरू की तो वह सेंटर तत्काल सक्रिय हो जायेगा। इसलिए कामवासना का विचार करते ही तुम्हारा सेक्स सेंटर वर्क (कार्य) करना शुरू कर देगा।

और तुम हैरान होओगे : नग्न स्त्री, हो सकता है इतनी प्रभावी न हो, जितना नग्न स्त्री का विचार प्रभावी होगा। उसका कारण है कि नग्न स्त्री का

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विचार तो तुम्हे कल्पना में ले जायेगा और कल्पना चोट करेगी, लेकिन नग्न स्त्री तुम्हें कल्पना में नहीं ले जायेगी, वह तो प्रत्यक्ष खड़ी है। इसलिए प्रत्यक्ष जितनी चोट कर सकती है, करेगी। कल्पना भीतर से चोट करती है तुम्हारे सेंटर (केंद्र) पर, प्रत्यक्ष स्त्री सामने से चोट करती है। सामने की चोट उतनी गहरी नहीं है, जितनी भीतर की चोट गहरी है।

इसलिए बहुत से ऐसे लोग हैं जो कि स्त्री के सामने तो इंपोटेंट (नपुंसक) सिद्ध होंगे, लेकिन कल्पना में बहुत पोटेंट (पुंसक) होंगे। कल्पना में उनकी पोटेंसी का कोई हिसाब नहीं है; क्योंकि कल्पना की जो चोट है वह तुम्हारे भीतर से जाकर सेंटर को छूती है। प्रत्यक्ष की जो चोट है, वह भीतर से जाकर नहीं छूती, बाहर से तुम्हें सीधा छूती है। और मनुष्य चूंकि मन में जीता है, इसलिए मन से ही गहरी चोटें कर पाता है।

'मैं कौन हूं?' एक अस्तित्वगत सवाल

तो जब तुम पूछते हो : 'मैं कौन हूं', तो तुम एक जिज्ञासा कर रहे हो; एक जानने की कल्पना कर रहे हो; एक प्रश्न उठा रहे हो। यह प्रश्न तुम्हारे किस सेंटर (केंद्र) को छुएगा? यह प्रश्न तुम्हारे किसी सेंटर को छुएगा। जब तुम यह प्रश्न पूछते हो, जब तुम इसकी जिज्ञासा करते हो, इसकी अभीप्सा से भरते हो, और तुम्हारा रोआं-रोआं पूछने लगता है : 'मैं कौन हूं', तब तुम भीतर जा रहे हो; और भीतर किसी केंद्र पर चोट होनी शुरू होगी। 'मैं कौन हूं', ऐसा प्रश्न जो तुमने पूछा ही नहीं कभी। इसलिए तुम्हारे किसी ज्ञात सक्रिय केंद्र पर उसकी चोट नहीं होनेवाली है। समझे न? तुमने कभी पूछा ही नहीं है उसे; उसकी अभीप्सा ही कभी तुमने नहीं की। तुमने अक्सर पूछा है : वह कौन है? यह कौन है? तुमने ये सारे प्रश्न पूछे हैं। लेकिन 'मैं कौन हूं', यह अनपूछा प्रश्न है। यह तुम्हारे बिलकुल अज्ञात केंद्र पर चोट करेगा, जिस पर तुमने कभी चोट नहीं की। और वह अज्ञात केंद्र, जहां 'मैं कौन हूं' चोट करेगा, बहुत बेसिक है; क्योंकि यह प्रश्न बहुत बेसिक है... बहुत आधारभूत प्रश्न है कि 'मैं कौन हूं? बहुत एग्ज़िसटेंशियल (अस्तित्वगत) है यह सवाल। यह पूरे अस्तित्व की गहराई का सवाल है कि 'मैं हूं कौन? यह मुझे वहां ले जायेगा जहां मैं जन्मों के पहले था; यह मुझे वहां ले जायेगा जहां जन्मों-जन्मों के पहले था। यह मुझे वहां ले जा सकता है, जहां कि मैं आदि में था। इस प्रश्न की गहराई का कोई हिसाब नहीं है। इसकी यात्रा बहुत गहरी है। इसलिए तुम्हारा जो मूल, गहरे से गहरा केंद्र है कुंडलिनी का, वहां इसकी तत्काल चोट होनी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शुरू होगी ।

चोट करने के विभिन्न उपाय

श्वास फीजियोलॉजिकल (शारिरिक) चोट है, और 'मैं कौन हूं' यह मेंटल (मानसिक) चोट है। यह तुम्हारी माइंड इनर्जी से चोट पहुंचाना है, और वह तुम्हारी बॉडी-इनर्जी से चोट पहुंचाना है। और अगर ये दोनों चोट पूरे जोर से पड़ जायें, तो दो ही रास्ते हैं वहां तक चोट पहुंचाने के – तुम्हारे पास, सामान्यतया। और तरकीबें भी हैं, लेकिन वे सारी जरा उलझी हुई हैं। दूसरा आदमी तुम्हें सहयोगी हो सकता है। इसलिए तुम अगर मेरे सामने करोगे तो तुम्हें चोट जल्दी पहुंच जाती है, क्योंकि तीसरी दिशा से भी चोट पहुंचनी शुरू होती है, जिसका तुम्हें ख्याल नहीं है; वह एस्ट्रल (सूक्ष्म) है। यह बॉडिली है कि तुम श्वास गहरी लेते हो; और जब तुम पूछते हों, 'मैं कौने हूं ?' तब यह मेंटल है। और अगर तुम एक ऐसे व्यक्ति के पास बैठे हो, जिससे कि तुम्हारे एस्ट्रल को चोट पहुंच सके, तुम्हारे सूक्ष्म शरीर को चोट पहुंच सके, तो एक तीसरी यात्रा शुरू हो जाती है। इसीलए अगर हम पचास लोग ध्यान करेंगे तो तीव्रता से होगा बजाय एक के; क्योंकि पचास लोगों की तीव्र आकांक्षाएं और पचास लोगों की तीव्र श्वासों का संवेदन इस कमरे को एस्ट्रल एटमॉस्फियर (सूक्ष्म वातावरण) से भर देगा; यहां नयी तरह की विद्युत किरणें चारों तरफ घूमने लगेंगी। और वे भी तुम्हे चोट पहुंचाने लगेंगी।

पर तुम्हारे पास साधारणतः दो सीधे उपाय हैं : शरीर का और मन का। तो 'मैं कौन हूं' गहरी चोट करेगा; श्वास से भी गहरी करेगा। श्वास से इसलिए हम शुरू करते हैं कि वह शरीर की है; उसे करने में ज्यादा कठिनाई नहीं है। ...समझे न ? 'मैं कौन हूं' थोड़ा कठिन हैं; क्योंकि मन का है। शरीर से शुरू करते हैं और जब शरीर पूरी तरह से वाइब्रेट (कंपित) होने लगता है, तब तुम्हारा मन भी इस योग्य हो जाता है कि पूछने लगे। पर पूछने की एक ठीक सिचुएशन चाहिए।

हर कभी तुम 'मैं कौन हूं' पूछोगे तो नहीं बनेगा काम; सब सवालों के लिए भी ठीक स्थितियां चाहिए, जब वे पूछे जा सकते हैं। जैसे कि तुम्हारा पूरा शरीर कंपने लगता है और डोलने लगता है, तब तुम्हें खुद ही सवाल उठता है कि यह हो क्या रहा है; यह मैं कर रहा हूं ? यह मैं तो नहीं कर रहा हूं – यह सिर मैं नहीं घुमा रहा हूं; यह पैर मैं नहीं उठा रहा हूं; यह नाचना मैं नहीं कर रहा हूं, लेकिन यह हो रहा है। और अगर यह हो रहा है तो तुम्हारी जो

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आइडेंटिटि (तादात्म्य) है, सदा की... कि यह शरीर मैं हूं, वह ढीली पड़ गयी। अब तुम्हारे सामने नया सवाल उठ रहा है कि फिर मैं कौन हूं, अगर यह शरीर कर रहा है और मैं नहीं कर रहा। तब एक नया सवाल है कि कर कौन रहा है ! फिर तुम कौन हो अब ?

तो यह ठीक सिचुएशन है जब इस छेद में से तुम्हारा 'मैं कौन हूं' का प्रश्न गहरा उतर सकता है। तो उस ठीक मौके पर उसे पूछना जरूरी है।

असल में हर प्रश्न का भी ठीक वक्त है। और ठीक वक्त खोजना बड़ी कीमती बात है। हर कभी पूछ लेने का सवाल नहीं है उतना बड़ा। तुम अगर यहीं बैठकर पूछ लो कि 'मैं कौन हूं' तो यह हवा में घूम जायेगा, इसकी चोट कहीं नहीं होगी, क्योंकि तुम्हारे भीतर जगह चाहिए न... जहां से यह प्रवेश कर जाये। रंध्र चाहिए।

कुंडलिनी जागरण पर अतींद्रिय अनुभव

इन दोनों की चोट से कुंडलिनी जगेगी। और उसका जागरण जब होगा तो अनूठे अनुभव शुरू हो जायेंगे। क्योंकि उस कुंडलिनी के साथ तुम्हारे समस्त जन्मों के अनुभव जुड़े हैं – जब तुम वृक्ष थे, तब के भी; और जब तुम मछली थे, तब के भी; और जब तुम पक्षी थे, तब के भी। तुम्हारे अनंत-अनंत योनियों के अनुभव उस पूरे यात्रा-पथ पर पड़े हैं। तुम्हारी उस कुंडल शक्ति ने उन सब को आत्मसात किया है।

इसलिए बहुत तरह की घटनाएं घट सकती हैं। उन अनुभवों के साथ तादात्म्य जुड़ सकता है। और किसी भी तरह की घटना घट सकती है। और इतने सूक्ष्म अनुभव हैं जिनका तुम्हें ख्याल नहीं है। एक वृक्ष खड़ा हुआ है बाहर। अभी हवा चली जोर से, वर्षा हुई। वृक्ष ने जैसा वर्षा को जाना वैसा हम कभी न जान सकेंगे। कैसे जान सकेंगे ? वृक्ष ने जैसा जाना वर्षा को, वैसा हम कभी न जान सकेंगे ! हम वृक्ष के पास भी खड़े हो जायें तो हम न जान सकेंगे। हम वैसा ही जानेंगे जैसा हम जान सकते हैं। लेकिन कभी तुम वृक्ष भी रहे हो अपनी किसी जीवन-यात्रा में। और अगर कुंडलिनी उस जगह पहुंचेगी, उस अनुभूति के पास जहां वह संगृहीत है वृक्ष की अनुभूति, तो तुम अचानक पाओगे कि वर्षा हो रही है और तुम वह जान रहे हो जो वृक्ष जान रहा है। तब तुम बहुत घबड़ा जाओगे... तुम बहुत घबड़ा जाओगे कि यह क्या हो रहा है ! तब तुम समझ पाओगे कि यह सागर जो अनुभव कर रहा है वह तुम अनुभव कर पाओगे; जो हवाएंअनुभव कर रही हैं वह तुम अनुभव

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कर पाओगे। इसलिए तुम्हारी एस्थेटिक (सौंदर्यगत) न मालूम कितनी संभावानाएं खुल जायेंगी जो तुम्हें कभी भी नहीं थीं ख्याल में।

जैसे की गोगां का एक चित्र है : एक वृक्ष है और आकाश को छू रहा है – तारे नीचे रह गये हैं और वृक्ष बढ़ता ही चला जा रहा है; चांद नीचे पड़ गया है, सूरज नीचे पड़ गया है – छोटे-छोटे रह गये हैं और वृक्ष ऊपर चढ़ता जा रहा है। तो किसी ने कहा कि तुम पागल हो गये हो ! वृक्ष कहीं ऐसे होते हैं ? चांद-तारे नीचे पड़ गये हैं और वृक्ष ऊपर चला जा रहा है ! तो गोगां ने कहा कि तुमने कभी वृक्ष को जाना ही नहीं, तुमने कभी वृक्ष के भीतर नहीं देखा; मैं उसको भीतर से जानता हूं। नहीं बढ़ पाता चांद-तारों के पार, यह बात दूसरी है... बढ़ना तो चाहता है। नहीं बढ़ पाता, यह बात दूसरी है... अभीप्सा तो यही है। उसने कहा, मैं तो कभी सोच ही नहीं सकता। मजबूरी है, नहीं बढ़ पाता, लेकिन भीतर प्राण तो सब चांद-तारे पार करते चले जाते हैं।

तो गोगां कहता था कि वृक्ष जो है वह पृथ्वी की आकांक्षा है... आकाश को छूने की, पृथ्वी की डिज़ायर है; पृथ्वी अपने हाथ-पैर बढ़ा रही है, आकाश को छूने को। तब वैसा भी देख पायेंगे। मगर वह वृक्ष... फिर भी वृक्ष जैसा देखेगा, वैसा फिर भी हम नहीं देख पायेंगे।

पर ये सब हम रहे हैं, इसलिए कुछ भी होगा। और जो हम हो सकते हैं, उसकी भी संभावनाएं अनुभव में आनी शुरू हो जायेंगी। जो हम रहे हैं, वह तो अनुभव में आयेगा; जो हम हो सकते हैं कल, उसकी संभावनाएं भी आनी शुरू हो जायेंगी।

और तब कुंडलिनी के यात्रा-पथ पर प्रवेश करने बाद हमारी कहानी व्यक्ति की कहानी नहीं है, समस्त चेतना की कहानी हो जाती है। अरविंद इसी भाषा में बोलते थे, इसलिए बहुत साफ नहीं हो पाया मामला। तब फिर एक व्यक्ति की कहानी नहीं है वह, तब फिर कांशसनेस (चेतना) की कहानी है। तब तुम अकेले नहीं हो : तुममें अनंत हैं भीतर जो बीत गये, और तुम में अनंत हैं आगे जो प्रकट होंगे। एक बीज जो खुलता ही जा रहा हो, मेनिफेस्ट होता चला जा रहा हो, और जिसका कोई अंत नहीं दिखाई पड़ता... और जब इस तरह ओर-छोर हीन तुम अपने विस्तार को देखोगे, पीछे अनंत और आगे अनंत, तब स्थिति और हो जायेगी; तब सब बदल जाता है। और वे सब के सब कुंडलिनी पर छिपे हैं।

बहुत से रंग खुल जायेंगे जो तुमने कभी नहीं देखे। असल में इतने रंग बाहर नहीं हैं जितने रंग तुम्हारे भीतर तुम्हें अनुभव में आ सकते हैं। क्योंकि

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वे रंग तुमने कभी जाने हैं, और-और तरह से जाने हैं। जब एक चील आकाश के ऊपर मंडराती है तो रंगों को और ढंग से देखती है; हम और ढंग से देखते हैं। अभी तुम जाओगे वृक्षों के पास से तो तुम्हें सिर्फ हरा रंग दिखाई पड़ता है; लेकिन अगर चित्रकार जाता है तो उसे हजार तरह के हरे रंग दिखाई पड़ते हैं। हरा रंग एक रंग नहीं है, उसमें हजार शेड हैं; और कोई दो शेड एक से नहीं हैं, उनका अपना-अपना व्यक्तित्व है। हमको तो सिर्फ हरा रंग दिखाई पड़ता है। हरा रंग, बात खतम हो गयी। एक मोटी धारणा है हमारी, बात खतम हो गयी। हरा रंग एक रंग नहीं है, हरा रंग हजार रंग है – हर रंग में हजार रंग हैं। और जितना उसका बारीकी से.... जब तुम भीतर प्रवेश करोगे तो वहां तुमने हजारों बारीक अनुभव किये हैं।

सूक्ष्म अनुभवों का लोक

मनुष्य जो है, इंद्रियों की दृष्टि से बहुत कमजोर प्राणी है, सारे पशु-पक्षी बहुत शक्तिशाली हैं; उनकी अनुभूति और उनके अनुभव की गहराइयां-ऊंचाइयां बहुत हैं। कमी है कि उनको सबको पकड़ कर वे चेतन में विचार नहीं कर पाते, लेकिन उनकी अनुभूतियां बहुत गहरी हैं; उनके संवेदशन बहुत गहरे हैं।

अब जापान में एक चिड़िया है... आम चिड़िया... जो भूकंप के चौबीस घंटे पहले गांव छोड़ देती है। बस, वह चिड़िया नहीं दिखाई पड़ेगी गांव में, समझो की चौबीस घंटे के भीतर भूकंप आया। अभी हमारे पास जो यंत्र हैं, वे भी छः घंटे पहले नहीं खबर दे पाते। और फिर भी बहुत सुनिश्चित नहीं है वह खबर। लेकिन उस चिड़िया का मामला तो सुनिश्चित है। और इतनी आम चिड़िया है कि गांव भर को पता चल जाये कि चिड़िया आज दिखाई नहीं पड़ रही, तो चौबीस घंटे के भीतर भूकंप आनेवाला है। उसका मतलब है की भूकंप से पैदा होनेवाली अतिसूक्ष्म वाईब्रेशंस (कंपन) उस चिड़िया को किसी न किसी तल पर अनुभव होती हैं; वह गांव छोड़ देती है।

अब तुम कभी अगर यह चिड़िया रहे हो, तो तुम्हारी कुंडलिनी के यात्रा-पथ पर तुम्हें ऐसे वाइब्रेशन्स होने लगेंगे जो तुम्हें कभी नहीं हुए। मगर तुम्हें कभी हुए हैं, तुम्हें पता नहीं, ख्याल में नहीं। तभी हो सकते हैं।

तुम्हें ऐसे रंग दिखाई पड़ने लगेंगे जो तुमने कभी नहीं देखे हैं; तुम्हें ऐसी ध्वनियां सुनाई पड़ने लगेंगी, जिसको कबीर कहते हैं 'नाद'। कबीर कहते हैं, अमृत बरस रहा है, साधुओ, नाचो! तो साधु पूछते हैं, कहां अमृत बरसा रहा है? अब वह अमृत कहीं बाहर नहीं बरस रहा है। और कबीर कहते

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हैं – सुना ? नाद बज रहे हैं, बड़े नगाड़े बज रहे हैं। पर साधु पूछते हैं, कहां बज रहे हैं ? और कबीर कहते हैं, तुम्हें सुनाई नहीं पड़ रहा ? अब वह कबीर को जो सुनाई पड़ रहा है, वे नाद तुम्हें सुनाई पड़ेंगे, ध्वनियां सुनाई पड़ेंगी। ऐसे स्वाद आने शुरू होंगे जो तुम्हें कभी कल्पना में नहीं हैं कि ये स्वाद हो सकते हैं।

तो सूक्ष्म अनुभूतियों का बड़ा लोक कुंडलिनी के साथ जुड़ा है, वह सब जग जायेगा, और सब तरफ से तुम पर हमला बोल देगा। और इसलिए अक्सर ऐसी स्थिति में आदमी पागल मालूम पड़ने लगता है; क्योंकि जब हम सब बैठे थे गंभीर तब वह हंसने लगता है; क्योंकि उसे कुछ दिखाई पड़ रहा है जो हमें दिखाई नहीं पड़ रहा... कि जब हम हंस रहे हैं तब वह रोने लगता है; क्योंकि उसे कुछ हो रहा है जो हमे नहीं हो रहा।

शक्तिपात से ऊर्जा का नियंत्रित अवतरण

इन सब पर सामान्य मनुष्य के पास चोट करने के दो उपाय हैं, और असामान्य रूप से जिसको शक्तिपात कहें, वह तीसरा उपाय है; वह एस्ट्रल (सूक्ष्म) है। उसमें कोई माध्यम चाहिए। उसमें दूसरा व्यक्ति सहयोगी हो, तो तुम्हारे भीतर तीव्रता बढ़ जा सकती है। और उस स्थितिं में दूसरा व्यक्ति कुछ करता नहीं, सिर्फ उसकी मौजूदगी काफी है। वह सिर्फ एक मीडियम (माध्यम) बन जाता है। अनंत शक्ति चारों तरफ पड़ी हुई है। अब जैसे की हम घर के उपर लोहे की सलाख लगाए हुए हैं कि बिजली गिरे तो घर के नीचे चली जाये। सलाख न हो तब भी बिजली गिर सकती है, तब पूरे घर को तोड़ जायेगी। सलाख से पार हो जायेगी, लेकिन सलाख अभी हमको ख्याल में आयी है, बिजली बहुत पहले से गिरती रही है; बिजली का शक्तिपात बहुत दिनों से हो रहा है, सलाख हमें अब ख्याल आयी है।

अनंत शक्तियां हैं चारों तरफ मनुष्य के, उनका भी उपयोग किया जा सकता है... उसके आध्यात्मिक विकास में उन सबका उपयोग किया जा सकता है। लेकिन कोई माध्यम चाहिए। तुम खुद भी माध्यम बन सकते हो, लेकिन प्राथमिक रूप से माध्यम बनना खतरनाक हो सकता है। क्योंकि इतना बड़ा शक्तिपात हो सकता है कि तुम उसे न झेल पाओ, बल्कि तुम्हारे कुछ ततुं जाम हो जायें या टूट ही जायें। क्योंकि शक्ति का एक वोल्टेज है, और वह तुम्हारे सहने की क्षमता के अनुकूल होना चाहिए। तो दूसरे व्यक्ति के माध्यम से तुम्हारे अनुकूल बनाने की सुविधा हो जाती है... कि अगर एक दूसरा व्यक्ति उन

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शक्तियों का तुम्हारे ऊपर अवतरण कराना चाहता है, तो उस पर अवतरण हो चुका है, तब ही। तब वह उतनी धारा में तुम तक पहुंचा सकता है जितनी धारा में तुम्हें जरूरत है। और इसके लिए कुछ भी नहीं करना होता है; इसके लिए सिर्फ मौजूदगी जरूरी है, बस। तब वह एक कैटेलेटिक एजेंट की तरह काम करता है। वह कुछ करता नहीं है। इसलिए कोई अगर कहता है कि मैं शक्तिपात करता हूं तो वह गलत कहता है; कोई शक्तिपात करता नहीं। लेकिन हां, किसी की मौजूदगी में शक्तिपात हो सकता है।

शक्ति जागरण और शक्तिपात में अंतर

और इधर मैं सोचता हूं, जरा साधक थोड़ी गहराई लें, तो वह यहां होने लगेगा बड़े जोरों से। इसमें कोई कठिनाई नहीं है। किसी को करने की कोई जरूरत नहीं है, वह होने लगेगा – बस, तुम अचानक पाओगे कि तुम्हारे भीतर कुछ और तरह की शक्ति प्रवेश कर गयी है जो कहीं बाहर से आ गयी है, जिसका कि तुम.... तुम्हारे भीतर से नहीं आयी।

तुम्हें कुंडलिनी का जब भी अनुभव होगा, तो तुम्हारे भीतर से उठता हुआ मालूम होगा; और जब तुम्हें शक्तिपात का अनुभव होगा, तुम्हारे बाहर से, ऊपर से आता हुआ मालूम होगा। यह इतना ही साफ होगा, जैसा कि ऊपर से आपके पानी गिरे और नीचे से पानी बढ़े; नदी में खड़े हैं और पानी बढ़ता जा रहा है, और नीचे से पानी ऊपर की तरफ आता जा रहा है, और आप डूब रहे हो।

तो कुंडलिनी का अनुभव सदा डूबने का होगा – नीचे से कुछ बढ़ रहा है और तुम उसमें डूबे जा रहे हो; कुछ तुम्हें घेरे ले रहा है। लेकिन शक्तिपात का जब भी तुम्हें अनुभव होगा तो वर्षा का होगा। वह जो कबीर कह रहे हैं कि अमृत बरस रहा है साधुओ। पर वे साधु पूछते हैं, कहां बरस रहा है? वह ऊपर से गिरने का होगा। और तुम उसमें भीगे जा रहे हो। और ये दोनों अगर एकसाथ हो सकें तो गति बहुत तीव्र हो जाती है – ऊपर से वर्षा हो रही है, और नीचे से नदी बढ़ी जा रही है। इधर नदी का पूर आता है, उधर वर्षा बढ़ती जा रही है – और दोनों तरफ से तुम डूबे जा रहे हो, और मिटे जा रहे हो। ये दोनों तरफ से हो सकता है, इसमें कोई कठिनाई नहीं है।

शक्तिपात निजी संपदा नहीं है

प्रश्न : शक्तिपात का प्रभाव अल्पकालीन होता है या दीर्घकालीन होता

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है ? वह अंतिम यात्रा तक ले जाता है या अनेक बार शक्तिपात की आवश्यकता पड़ती है ?

असल बात यह है कि दीर्घकालीन तो तुम्हारे भीतर जो उठ रहा है उसका ही होगा; शक्तिपात जो है, वह सिर्फ सहयोगी हो सकता है, मूल नहीं बन सकता है कभी भी । मूल नहीं बन सकता । तुम्हारे भीतर जो रहा है वही मूल बनेगा । संपत्ति तो तुम्हारी वही है । असली संपत्ति तुम्हारी वही है । शक्तिपात से तुम्हारी संपत्ति नहीं बढ़ेगी, शक्तिपात से तुम्हारी संपत्ति के बढ़ने की क्षमता बढ़ेगी । इस फर्क को ठीक से समझ लेना । शक्तिपात से तुम्हारी संपदा नहीं बढ़ेगी, लेकिन तुम्हारी संपदा के बढ़ने की जो गति है, तुम्हारी संपदा के फैलाव की जो गति है, वह तीव्र हो जायेगी ।

इसलिए शक्तिपात तुम्हारी संपदा नहीं है । यानी ऐसे ही जैसे तुम दौड़ रहे हो, और मैं एक बंदूक लेकर तुम्हारे पीछे लग गया । बंदूक लेकर लगने से मेरी बंदूक तुम्हारे दौड़ने की संपत्ति नहीं बननेवाली, लेकिन मेरी बंदूक की वजह से तुम तेजी से दौड़ोगे । दौड़ोगे तुम ही, शक्ति तुम्हारी ही लगेगी, लेकिन जो नहीं लग रही थी तुम्हारे भीतर वह भी अब लग जायेगी । बंदूक का इसमें कोई भी हाथ नहीं है । बंदूक में से इंच भर शक्ति नहीं खोयेगी इसमें । बंदूक की नाप-तौल पीछे करोगे तो वह उतनी की उतनी ही रहेगी । उसमें से कुछ जाने-आनेवाला नहीं है । लेकिन तुम उस बंदूक के प्रभाव में तीव्र हो जाओगे; जहां चल रहे थे धीमे, वहां दौड़ने लगोगे । तो शक्तिपात से तुम्हारी संपत्ति नहीं बढ़ती, लेकिन तुम्हारी संपत्ति की बढ़ने की क्षमता एकदम गतिमान हो जाती है ।

शक्तिपात से अतंर्यात्रा में प्रोत्साहन

क्योंकि एक दफा तुम्हें... एक दफा तुम्हें अनुभव हो जाये, बिजली चमक जाये एक... बिजली चमकने से तुम्हें कोई रास्ता प्रकाशित नहीं हो जाता है; हाथ में दीया नहीं बन जाता है बिजली का चमकना, सिर्फ एक झलक । लेकिन झलक बड़ी कीमत की हो जाती है – तुम्हारे पैर मजबूत हो जाते हैं, इच्छा प्रबल हो जाती है, पहुंचने की कामना तय हो जाती है, रास्ता दिखाई पड़ जाता है – रास्ता है, तुम यूं ही अंधेरे में नहीं भटक रहे हो । यह सब साफ एक बिजली की झलक में तुम्हें रास्ता दिख जाता है, दूर तुम्हें मंदिर दिख जाता है तुम्हारी मंजिल का । फिर बिजली खो गयी, फिर गुप्प अंधेरा हो गया, लेकिन अब तुम दूसरे आदमी हो । वहीं खड़े हो जहां थे, लेकिन दौड़ तुम्हारी बढ़ जायेगी । मंजिल पास है, रास्ता साफ है – न भी दिखाई पड़ता हो अंधेरे में, तो भी है ।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अब तुम आश्वस्त हो। तुम्हारा आश्वासन बढ़ जाता है – और तुम्हारे आश्वासन का बढ़ना तुम्हारे संकल्प को बढ़ाता है।

तो इनडायरेक्ट (अप्रत्यक्ष) परिणाम हैं। और इसलिए बार-बार जरूरत पड़ती है, एक बार से हल नहीं होता। बिजली दुबारा चमक जाये तो और फायदा होगा, तिबारा चमक जाये तो और फायदा होगा। पहली बार कुछ चूक गया होगा, न दिखाई पड़ा होगा, दूसरी बार दिख जाये, तीसरी बार दिख जाये... और इतना तो है कि आश्वासन गहरा होता जायेगा।

तो शक्तिपात से अंतिम परिणाम हल नहीं होता, अंतिम परिणाम तक तुम्हें पहुंचना है। और शक्तिपात के बिना भी पहुंच सकोगे। थोड़ी देर-अबेर होगी, इससे ज्यादा कुछ होना नहीं है; थोड़ी देर-अबेर होगी। अंधेरे में आश्वासन कम होगा, चलने में ज्यादा हिम्मत जुटानी पड़ेगी, ज्यादा बल लगाना पड़ेगा – भय पकड़ेगा, संकल्प-विकल्प पकड़ेंगे; पता नहीं, रास्ता है या नहीं – यह सब होगा। लेकिन, फिर भी पहुंच जाओगे। लेकिन शक्तिपात सहयोगी बन सकता है।

सामूहिक शक्तिपात भी संभव

तो इधर मैं चाहता हूं, तुम्हारी जरा गति बढ़े, तो एकाध-दो पर क्या... इकट्ठा, सामूहिक... एक-दो पर क्या करने का काम करना, इकट्ठा दस हजार लोगों को खड़ा करके शक्तिपात हो, इसमें कोई कठिनाई नहीं है; क्योंकि जितना एक पर होने में वक्त लगता है, उतना ही दस हजार पर होने में लगेगा। उससे कोई फर्क नहीं पड़ता।

शक्तिपात स्थायी नहीं है।

प्रश्न : इसका प्रभाव फिर घटते-घटते मिट जाता है पूरा ?

कम तो होगा ही। सब प्रभाव क्षीण होनेवाले होते हैं। असल में प्रभाव का मतलब ही यह है जो बाहर से आया है, वह क्षीण हो जायेगा। जो भीतर से आया, वह क्षीण नहीं होगा; वह तुम्हारा अपना है। प्रभाव तो सब घटनेवाले हैं, वे घट जाते हैं; लेकिन जो तुम्हारे भीतर से आता-जाता है वह नहीं घटता। उस प्रभाव में भी जो आ जाता है वह भी नहीं घटता; वह तो बना रह जाता है – तुम्हारी मूल संपत्ति नहीं घटती, प्रभाव घट जाता है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विकास-क्रम में पीछे लौटना असंभव

प्रश्न : क्या बुरी संगति करने से हमारी मूल संपत्ति भी नहीं घट जायेगी ? क्या हम अपनी स्थिति से भी नीचे नहींचले जायेंगे ?

नहीं, नीचे की तरफ जाने का उपाय नहीं है। असल में इस बात को भी ठीक से समझ लेना चाहिए। यह बड़े मजे की बात है ... यह बहुत मजे की बात है... कि नीचे की तरफ जाने का उपाय नहीं है। तुम जहां तक गयी हो, तुम्हें उससे ऊंचा ले जाने में तो सहायता पहुंचायी जा सकती है; तुम्हें वहीं तक ठहराने में भी बाधा डाली जा सकती है, तुम्हें उससे नीचे नहीं ले जाया जा सकता। उसका कारण है कि उसके ऊंचे जाने में तुम बदल गयी हो, तत्काल। एक इंच भी कोई व्यक्तित्व में ऊपर गया, तो पीछे नहीं लौट सकता; पीछे लौटना असंभव है।

यह मामला ऐसा ही है कि किसी बच्चे को हम पहली कक्षा से दूसरी में प्रवेश करवा सकते हैं। एक ट्यूटर रख सकते हैं जो उसको पहली में पढ़ाने में सहायता दे दे और दूसरी में पहुंचा दे। लेकिन ऐसा ट्यूटर खोजना बहुत मुश्किल है कि पहली में उसने जो पढ़ा है, उसको भुला दे। और एक बच्चा दूसरी क्लास में जाकर नासमझ लड़कों की सोहबत करे, तो इतना ही हो सकता है कि दूसरी में फेल होता रहे। बाकी पहली में उतार देंगे नासमझ लड़के, ऐसा नहीं है उपाय। मेरा मतलब समझे न तुम ? यह हो सकता है कि वह दूसरी में ही रुक जाये और जनम भर दूसरी में रुका रहे, और तीसरी में न जा सके, लेकिन दूसरी से नीचे उतारने का कोई उपाय नहीं हैं। वहां अटक जायेगा।

आध्यात्मिक जीवन में कोई पीछे लौटना नहीं है; सदा आगे जाना है या रुक जाना है। बस रुक जाना ही पीछे लौट जाने का मतलब रखता है। तो रोक तो सकते हैं साथी, हटा नहीं सकते पीछे। हटाने का कोई उपाय नहीं है।

शक्तिपात व प्रसाद में फर्क है

प्रश्न : क्या शक्तिपात और प्रसाद में फर्क है।

बहुत फर्क है; शक्तिपात और प्रसाद में बहुत फर्क है। शक्तिपात जो है वह एक टेकनीक है, और आयोजित है। उसकी आयोजना करनी पड़ेगी। हर कभी, हर कहीं नहीं हो जायेगा। समझे न ? साधक इस स्थिति में होना चाहिए कि उस पर हो सके, मीडियम (माध्यम) इस स्थिति में होना चाहिए कि वह माध्यम बन सके। जब ये दोनों बातें व्यवस्थित हों, तालमेल खा जायें,

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

एक क्षण के बिंदु पर दोनों का मेल हो जाये, तो हो जायेगा। यह टेकनीक की बात है। ग्रेस जो है वह अनकॉल्ड फॉल है; उसके लिए कभी बुलावा नहीं है, उसके लिए कभी कोई इंतजाम नहीं है। वह कभी होती है। यानी फर्क इतना ही है, जैसे कि हम बटन दबाकर बिजली जलाते हैं और आकाश की बिजली चमकती है, वैसा ही फर्क फर्क है। समझे न ? यह टेकनीक है। यह वही बिजली है जो आकाश में चमकती है, लेकिन यह टेकनीक से बंधी हुई है। हम बटन दबाते हैं, जलती है; बुझाते हैं, बुझती है। आकाश की बिजली हमारे हाथ में नहीं है।

तो ग्रेस (प्रसाद) जो है वह आकाश की बिजली है, कभी किसी क्षण में चकमती है... और तुम भी अगर उस मौके पर उस हालत में हुए, तो घटना घट जाती है। लेकिन यह शक्तिपात नहीं है फिर। है वही घटना, इसलिए वह ग्रेस है। उसमें मीडियम भी नहीं होता। उसमें कोई मीडियेटर भी नहीं है बीच में; वह सीधे तुम पर होती... और आकस्मिक... और सदा सड़न; आयोजना नहीं की जा सकती। शक्तिपात तो आयोजित किया जा सकता है कि कल पांच बजे आ जाओ, इतनी तैयारी करके आना, इतनी व्यवस्था करके आ जाना, हो जायेगा। लेकिन ग्रेस के लिए पांच बजे आकर बैठने से कुछ मतलब नहीं है। हो जाये हो जाये, न हो न हो; उसे कोई हम अपने हाथ में नहीं ले सकते। घटना वही है, लेकिन इतना फर्क है। ...इतना फर्क है।

अहंशून्य स्थिति में ही शक्तिपात संभव

प्रश्न : आपने कहा था कि शक्तिपात इगोलेस स्थिति में होता है तो आयोजना कैसे हो सकती है ?

इगोलेस (अहंशून्य) स्थिति में आयोजना हो सकती है। इगो (अहंकार) का आयोजना से कोई संबंध नहीं है, उससे कोई संबंध नहीं है।

प्रश्न : इगोलेस (अहंकारशून्य) आयोजना हो सकती है ?

हां, बिलकुल हो सकती है, उससे कोई संबंध नहीं है। इगो तो बात ही और है। जैसा कि हमने तय किया कि पांच बजे इस-इस तैयारी में बैठेंगे हम सब। इसमें साधक की तरफ से इगोलेस होने का सवाल नहीं है, इसमें सिर्फ मीडियम जो बननेवाला है उसके इगोलेस होने का सवाल है। और इगोलेस मामला ऐसा नहीं है कि कभी तुम हो सकते और कभी तुम न हो सको। हो गये तो हो गये, नहीं हुए तो नहीं हुए। ...ऐसा मामला नहीं है न ! कि अगर

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मैं इगोलेस हूं तो हूं, और नहीं हूं तो नहीं हूं। ऐसा नहीं है कि कल सुबह पांच बजे इगोलेस हो जाऊंगा। मेरी बात समझे न तुम ? कैसे हो जाऊंगा ? कोई उपाय नहीं है। अगर मैं अभी हूं तो पांच बजे भी रहूंगा – चाहे कोई आयोजन करूं और चाहे न करूं; चाहे तुम पांच बजे आओ तो, और न आओ तो; मैं जागूं तो और सोऊं तो – अगर हूं तो हूं, नहीं हूं तो नहीं हूं।

अहंशून्यता क्रमिक नहीं होती

असल में हमारा तो सारा... सारा हमारा जो सोचना-विचारना है, वह डिगरीज़ का होता है। वह ऐसा होता है अंठानबे डिग्री पर बुखार है तो हम कहते हैं, बिलकुल ठीक है यह आदमी और निन्यानबे डिग्री पर बुखार होता है तो हम कहते हैं, बुखार है। अंठानबे डिग्री भी बुखार है,लेकिन वह नॉरमल (सामान्य) बुखार है। निन्यानबे डिग्री में वह एबनॉरमल (असामान्य) हो जाता है। फिर अंठानबे हो जाता है तो हम कहते हैं, बिलकुल ठीक है, नॉरमल हो गया। अभी भी बुखार है, मतलब इतना बुखार है जितना सबको है। सबसे जरा इधर-उधर होता है तो गड़बड़ हो जाता है। वैसा ही हमारी इगो का मामला है। वह हमारा बुखार है। उतनी ही डिग्री में जितना हम सबको है। तब तक हम कहते हैं आदमी बिलकुल विनम्र है, अच्छा आदमी है। जरा हमसे डिग्री उसकी निन्यानबे हुई और हमने कहा कि बहुत इगोइस्ट आदमी मालूम होता है। जरा संतानबे हुआ कि हमने कहा कि बिलकुल महात्मा, विनम्र हो गया है। इसके पैर छू लो।

बाकी इगो और नो इगो बिलकुल ही अलग बातें हैं; उनका कोई डिग्री से संबंध नहीं है। बुखार और बुखार का न होना, यह अंठानबे और निन्यानबे डिग्री का मामला नहीं है, सिर्फ मरे हुए आदमी को हम कह सकते हैं कि इसको बुखार नहीं है; क्योंकि जब तक भी गर्मी है, बुखार है ही; नॉरमल और एबनॉरमल का फर्क है। इसलिए तकलीफ हमें होती है। इसलिए तकलीफ हमें होती है... और फिर ऐसा है न कि अगर किसी आदमी की इगो हमारी इगो को चोट पहुंचाती है तो वह इगोइस्ट है, अगर किसी की इगो हमारी इगो को रस पहुंचती है तो वह आदमी इगोलेस है।

हम नापें कैसे ? पता कैसे चले ? एक आदमी मेरे पास आये और वह अकड़ मेरे ऊपर दिखलाये, हम कहते हैं, इगोइस्ट है। आये और मेरे पैर छुए, हम कहते हैं, बहुत विनम्र है। और उपाय क्या है जांच का ? हमारी इगो जांचने का उपाय है; उससे हम जांचते हैं कि यह आदमी हमारी इगो को गड़बड़ तो

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नहीं कर रहा है, गड़बड़ कर रहा है तो इगोइस्ट है। और अगर फुसला रहा है और कह रहा है, आप बहुत बड़े महात्मा हैं, तो यह आदमी विनम्र है, इसमें अहंकार बिलकुल भी नहीं है। मगर यह सब अहंकार है या नहीं है, यह हमारा अहंकार ही इन सबका तौल है। इनके पीछे जो मेजरमेंट है हमारा, वह हमारा अहंकार है।

इसलिए जो नॉनइगो की स्थिति है उसको तो हम पहचान ही नहीं पाते। क्योंकि उसे हम कैसे पहचानें ? हम डिग्री तक पहचान पाते हैं कि कितनी डिग्री है। लेकिन यदि डिग्री है ही नहीं तब हमें बहुत कठिनाई हो जाती है। मगर वह जो घटना है शक्तिपात की, उसमें मीडियम तो इगोलेस चाहिए ही। इगोलेस कहना ठीक नहीं है, नो इगो वाला मीडियम चाहिए।

अहंशून्य व्यक्ति पर प्रसाद की सतत वर्षा

और ऐसे आदमी पर चौबीस घंटे ग्रेस बरसती रहती है, यह ख्याल में रख लेना। वह तो तुम्हारे लिए आयोजन कर देगा, लेकिन उस पर तो चौबीस घंटा अमृत बरस रहा है। इसलिए तुम्हारे लिए भी आयोजन कर देगा कि तुम जरा एक क्षण के लिए द्वार खोलकर खड़े रह जाना। उस पर तो बरसता ही है, शायद दो-चार बूंद तुम्हारे द्वार के भीतर भी पड़ जायें।

प्रश्न : यह जो डायरेक्ट ग्रेस मिलता है, इसका प्रभाव क्या स्थायी होता है ? और क्या यह उपलब्धि तक ले जाता है ?

डायरेक्ट (सीधा) ग्रेस तो मिलता ही उपलब्धि पर है न ! इसके पहले तो मिलता नहीं ! इसके पहले मिलता नहीं। इसके पहले नहीं मिलता। वह तो जब तुम्हारा अहंकार जायेगा तब ही ग्रेस उतरता है नीचे। अहंकार ही बाधा है।

प्रश्न : तो उपलब्धि की स्थिति कौन सी है ?

जिसके आगे फिर उपलब्ध करने को कुछ शेष न रह जाये।

कुंडलिनी है मनोगत ऊर्जा

प्रश्न : कुंडलिनी साधना जो है, वह साइकिक (मनोगत) है कि स्पिरीचुअल (आध्यात्मिक) है ?

तुम यह जानते हो कि खाना शारीरिक है, लेकिन न खाने से आत्मा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

का बहुत जल्दी विलोप हो जायेगा। यद्यपि खाना शरीर को जाता है, लेकिन शरीर एक स्थिति में हो तो आत्मा उसमें बनी रहती है। तो कुंडलिनी जो है वह मानसिक है। लेकिन कुंडलिनी एक स्थिति में हो तो आत्मा तक गति होती है, कुंडलिनी एक दूसरी स्थिति में हो तो आत्मा तक गति नहीं होती। तो साइकिक है, लेकिन एक स्टेप बनती है स्पिरीचुअल के लिए। स्पिरीचुअल नहीं है खुद। अगर कोई कहता है, कुंडलिनी स्पिरीचुअल है तो गलत कहता है। अगर कोई कहे कि खाना स्पिरीचुअल है तो गलत कहता है, खाना तो फिजिकल (शारिरिक) ही है, लेकिन फिर भी आधार बनता है आध्यात्मिक के लिए।

श्वास भी भौतिक है और विचार भी भौतिक है; सब भौतिक है। इनका जो सूक्ष्मतम रूप हैं उसे हम साइकिक कह रहे हैं। वह भूत का सूक्ष्मतम रूप है। लेकिन ये सब आधार बनते हैं, उस अभौतिक में छलांग लगाने के लिए। ये जिसको कहना चाहिए, जंपिंग बोर्ड्स बनते हैं।

जैसे कोई आदमी नदी में छलांग लगा रहा है, तो किनारे पर एक बोर्ड पर खड़े होकर छलांग लगा रहा है। बोर्ड नदी नहीं है। अब कोई तर्क कर सकता है कि क्यों बोर्ड पर खड़े हो, बोर्ड तो नदी है ही नहीं, और तुम्हें नदी में छलांग लगानी है, तो बोर्ड पर किसलिए खड़े हो ? नदी में छलांग लगानी है तो नदी में खड़े हो जाओ। नदी में कभी कोई खड़ा हुआ है ? खड़े तो बोर्ड पर ही होना पड़ता है, छलांग नदी में लगती है। और बोर्ड बिलकुल अलग चीज है, वह नदी नहीं है।

तो तुम्हें जो छलांग लगानी है, वह शरीर से लगानी है, मन से लगानी है – लगानी है जिसमें वह आत्मा है। वह तो जब लग जायेगी तब मिलेगी। अभी तो तुम जहां खड़े हो वहीं से तैयारी करनी पड़ेगी। तो शरीर से और मन से ही कूदना पड़ेगा। और इसलिए यहीं काम करना पड़ेगा। हां, जब छलांग लग जायेगी, तब तुम जहां पहुंचोगे वह होगा स्पिरीचुअल, वह होगा आध्यात्मिक।

प्रश्न : पहले आप जिस साधना की बातें करते थे उसमें आप साधक को शांत, शिथिल, मौन, सजग और साक्षी होने के लिए कहते थे। अब आप तीव्र श्वास और 'मैं कौन हूं' पूछने के अंतर्गत साधक को पूरी शक्ति लगाकर प्रयत्न करने के लिए कहते हैं। पहली साधना करनेवाला साधक जब दूसरे ढंग के प्रयोग में जाता है तो थोड़ी देर के बाद उससे प्रयास करना छूट जाता है, तो उसके लिए कौन सी विधि अच्छी है ?

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अच्छे-बुरे का सवाल नहीं है यहां, तुम्हें जिससे ज्यादा शांति और गति मिलती हो, उसकी फिक्र करो; क्योंकि सब के लिए अलग-अलग होगा। ...सबके लिए अलग-अलग होगा। कुछ लोग हैं जो दौड़कर गिर जायें तो ही विश्राम कर सकते हैं, कुछ लोग हैं जो अभी विश्राम कर सकते हैं।

लेकिन बहुत कम लोग हैं। बहुत कम लोग हैं... एकदम सीधा मौन में जाना, कठिन है मामला; थोड़े से लोगों के लिए संभव है। अधिक लोगों के लिए तो पहले दौड़ जरूरी है, तनाव जरूरी है। मतलब एक ही है, अंत में प्रयोजन एक ही है।

शक्ति साधना से तनाव

प्रश्न : आपने तीव्र श्वासवाले प्रयोग के संबंध में कहा है कि यह अतियों से परिवर्तन की विधि है। इसमें हमें तनाव की चरम सीमा तक जाना है ताकि विश्राम की चरम स्थिति उपलब्ध हो सके। तो क्या कुंडलिनी साधना तनाव की साधना है ?

बिलकुल तनाव की साधना है... बिलकुल तनाव की साधना है। असल में शक्ति की कोई भी साधना तनाव की ही साधना होगी। शक्ति का मतलब ही तनाव है। जहां तनाव है वहीं शक्ति पैदा होती है। जैसे हमने एटम से इतनी बड़ी शक्ति पैदा कर ली, क्योंकि हमने सूक्ष्मतम अणुओं को भी तनाव में डाल दिया; दो हिस्से तोड़ दिये और दोनों को टेंशन में डाल दिया। तो शक्ति की तो समस्त साधना जो है वह तनाव की है। अगर हम ठीक से समझें तो तनाव ही शक्ति है; टेंशन जो है वही शक्ति है।

प्रश्न : साधना की दो पद्धतियां आप कहते हैं : पॉज़ीटिव और निगेटिव तो कुंडलिनी साधना निगेटिव है कि पॉज़ीटिव ?

पॉज़ीटिव है। बिलकुल पॉज़ीटिव है।

प्रश्न : बुद्ध ने कुंडलिनी और चक्रों की बात क्यों नहीं की है ?

असल में बुद्ध ने जितनी बातें की हैं, वे सब रिकॉर्डेड (लिपिबद्ध) नहीं हैं। समझ रहे हो न ? बड़ा प्रॉबलम जो है वह यह है। और बुद्ध ने जो भी कहा है, उसमें से बहुत सा जानकर रिकॉर्डेड नहीं है। और बुद्ध ने जो कहा है, उनके मरने के पांच सौ वर्ष बाद रिकॉर्ड हुआ, उस वक्त तो रिकॉर्ड नहीं हुआ। पांच सौ वर्ष तक तो जिन भिक्षुओं के पास वह ज्ञान था, उन्होंने उसे रिकॉर्ड करने से इनकार किया। पांच सौ वर्ष बाद एक ऐसी घड़ी आ गयी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कि वे भिक्षु लुप्त होने लगे जिनको बातें पता थीं। और तब एक बड़ा संघ बुलाया गया, उसमें यह तय किया गया कि अब तो यह मुश्किल है, अगर ये दस-पांच भिक्षु हमारे और खो गये, तो वह ज्ञान की सारी संपदा खो जायेगी। इसलिए उसे रिकॉर्ड कर लेना चाहिए। जब तक वह स्मरण रखा जा सकता था तब तक जिद्दपूर्वक उसे नहीं लिखा गया। ऐसा जीसस के साथ भी हुआ, महावीर के साथ भी हुआ। और जरूरी था।

उसके कारण हैं बहुत, क्योंकि ये लोग बोल रहे थे सिर्फ। इस बोलने में बहुत सी बातें थीं, जो बहुत तल के साधकों के लिए कही गयी थीं। और पहले तल के साधक के लिए वे सारी बातें जरूरी रूप से सहयोगी नहीं हैं, नुकसान भी पहुंचातीं। अक्सर ऐसा होता है कि जिस सीढ़ी पर हम खड़े नहीं हैं, उसकी बातचीत हमें उस सीढ़ी पर भी ठीक से खड़ा नहीं रहने देती जहां हमें खड़े होना है, जहां हम खड़े हैं। आगे की सीढ़ियां अक्सर हमें आगे की सीढ़ियों पर जाने का ख्याल दे देती हैं... और हम पहली सीढ़ी पर खड़े ही नहीं हैं। और अभी कठिनाई यह है कि पहली सीढ़ी पर बहुत सी ऐसी बातें हैं जो दूसरी सीढ़ी पर जाकर गलत हो जाती हैं। अगर आपको दूसरी सीढ़ी की बात पहले ही पता चल जाये तो आपको पहली सीढ़ी पर वे गलत मालूम होने लगेंगी। तब आप पहली सीढ़ी से कभी पार न हो सकेंगे। पहली सीढ़ी पर तो उनका सही होना जरूरी है, तभी आप पहली सीढ़ी पार कर सकेंगे।

हम छोटे बच्चे को पढ़ाते हैं 'ग' गणेश का। अब इसका कोई मतलब नहीं है, 'ग' गधे का भी होता है। और गधा और गणेश में कोई संबंध नहीं है; कोई भाईचारा नहीं है; कोई जोड़ नहीं है, कुछ भी नहीं है। ग का कोई संबंध ही नहीं है किसी से। लेकिन यह पहली क्लास के लड़के को बताना खतरनाक होगा। जब वह पढ़ रहा है ग गणेश का तब उससे उसका बाप कहे, नालायक, ग से गणेश का क्या संबंध? कोई संबंध नहीं है। ग तो और हजार चीजों का भी है, गणेश से क्या लेना-देना है? तो यह लड़का ग को ही नहीं पकड़ पायेगा। अभी उसको ग गणेश का, इतना ही पकड़ लेना उचित है। अभी और हजार चीजें भी ग में सम्मिलित हैं, यह ज्ञान रहने ही दो। अभी तो उसको गणेश भी ग में आ जाये तो काफी है। कल और हजार चीजें भी आ जायेंगी। जब हजार आयेंगी तब यह खुद भी जान लेगा कि ठीक है, ग से गणेश की कोई अनिवार्यता नहीं है; वह भी एक संबंध था और भी बहुत संबंध हैं। और फिर जब यह ग पढ़ेगा हमेशा तो ग गणेश का, ऐसा नहीं पढ़ेगा; वह गणेश छूट जायेंगे, ग रह जायेगा।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

गुह्य साधनों की गोपनीयता

तो हजार बातें हैं, हजार तल की हैं। और फिर कुछ बातें तो बिलकुल निजी और सीक्रेट (गुह्य) हैं। जैसे मैं भी जिस ध्यान की बात कर रहा हूं, यह बिलकुल ऐसी बात है जो सामूहिक की जा सकती है। बहुत बातें हैं जो मैं समूह में नहीं कर सकता हूं, नहीं करूंगा। वह तो तभी करूंगा जब मुझे समूह में से कुछ लोग मिल जायेंगे जिनको कि वे बातें कही जा सकती हैं।

तो बुद्ध ने तो कहा है बहुत, वह सब रिकॉर्डेड नहीं है। मैं भी जो कहूंगा वह सब रिकॉर्डेड नहीं हो सकता। वह सब रिकॉर्डेड नहीं हो सकता, क्योंकि मैं वही कहूंगा जो रिकॉर्ड हो सकता है। सामने तो वही कहूंगा। जो रिकॉर्ड नहीं हो सकता है, वह सामने नहीं कहूंगा; उसे तो स्मृति में ही रखना पड़ेगा।

प्रश्न : तो क्या कुंडलिनी और चक्रों की बात को रिकॉर्ड नहीं करना चाहिए ? क्या उन्हें गुप्त रखना चाहिए ?

नहीं, नहीं, नहीं। न, इसमें और बहुत सी बातें हैं न ! जो मैंने कहा है, इसमें तो कोई कठिनाई नहीं है। इसमें कोई कठिनाई नहीं है। पर इसमें और बहुत बातें हैं। लेकिन कठिनाई यह है न कि बुद्ध और आज में पच्चीस सौ साल का फर्क पड़ा है; मनुष्य की चेतना में बहुत फर्क पड़ा है। जिस चीज को बुद्ध समझते थे कि न बताया जाये; मैं समझता हूं, बताया जा सकता है। पच्चीस सौ साल में बहुत बुनियादी फर्क पड़ गये हैं। बुद्ध ने जितनी चीजों को कहा कि नहीं बताया जाये, मैं कहता हूं कि उसमें से बहुत कुछ बताया जा सकता है आज। और जो मैं कहता हूं कि नहीं बताया जाये, पच्चीस सौ साल बाद बताया जा सकेगा। बताया जा सकना चाहिए, विकास अगर होता है तो। समझ रहे हैं न मेरी बात को ?

तो बुद्ध भी लौट आयें तो बहुत सी बातें... बुद्ध तो बहुत... बहुत ही समझ का काम किये। उन्होंने ग्यारह तो प्रश्न तय कर रखे थे, कोई पूछ न सकेगा – क्योंकि पूछो तो उन्हें कुछ न कुछ तो उत्तर देना पड़े। गलत दें उत्तर तो उचित नहीं मालूम होता, ठीक उत्तर दें तो देना नहीं चाहिए। तो ग्यारह प्रश्न उन्होंने अव्याख्य करके तय कर रखे थे। वह जाहिर घोषणा थी सारे गांव में कि कोई बुद्ध से ये ग्यारह प्रश्नों में से न पूछे; क्योंकि बुद्ध को अड़चन में नहीं डालना है; क्योंकि वे उनका उत्तर नहीं देंगे। न देने का कारण है : अगर दें तो नुकसान होगा और न दें तो उन्हें ऐसा लगता है कि मैं सत्य को छिपाता हूं... यह पूछना ही मत।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इसलिए गांव-गांव में भिक्षु ढिंढोरा पीट देते थे कि बुद्ध आते हैं, ये ग्यारह प्रश्न मत पूछो। सुनकर उन्हें बहुत परेशानी होगी। तो वे अव्याख्य मान लिये गये। वे प्रश्न नहीं पूछे जाते थे। ....वे नहीं पूछे जाते थे। कभी कोई विरोधी आ जाता और पूछ लेता था, तो बुद्ध उससे कहते कि रुको, कुछ दिन ठहरो, कुछ दिन साधना करो; जब इस योग्य हो जाओगे, मैं उत्तर दूंगा। लेकिन कभी उनके उत्तर दिये नहीं। इसलिए बहुत बड़ा-आरोप तो यही था जैनों का, हिंदुओं का कि उन्हें पता नहीं है। उन पर बड़ा आरोप यही था कि ये ग्यारह प्रश्नों का उत्तर नहीं देते, हमारे शास्त्रों में तो हम सब का उत्तर देते हैं। इनको, मालूम होता है... पता नहीं। लेकिन उनके शास्त्रों में जो लिखा हुआ है, उतना उत्तर तो वे भी दे सकते थे! असल में असली उत्तर शास्त्र में भी नहीं लिखा हुआ है। और असली दिया नहीं जा सकता था।

तो इसलिए... इसलिए नहीं यह सवाल है... यह सवाल नहीं है कि क्या हो जाये।

बंबई, रात्रि, दिनांक 15 जून, 1970.

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दूसरी प्रश्नोत्तर चर्चा

यात्रा : दृश्य से अदृश्य की ओर

प्रश्न : आपने नारगोल शिविर में कहा है कि कुंडलिनी-साधना शरीर की तैयारी है। कृपया इसका अर्थ स्पष्ट समझाएं।

पहली बात तो यह : शरीर और आत्मा बहुत गहरे में दो नहीं हैं; उनका भेद भी बहुत ऊपर है। और जिस दिन दिखाई पड़ता है पूरा सत्य, उस दिन ऐसा दिखाई नहीं पड़ता है कि शरीर और आत्मा अलग-अलग हैं, उस दिन ऐसा दिखाई पड़ता है कि शरीर आत्मा का वह हिस्सा है जो इंद्रियों की पकड़ में आ जाता है, और आत्मा शरीर का वह हिस्सा है जो इंद्रियों की पकड़ के बाहर रह जाता है।

शरीर और आत्मा — एक ही सत्य के दो छोर

शरीर का ही अदृश्य छोर आत्मा है और आत्मा का ही दृश्य छोर शरीर है, यह तो बहुत आखिरी अनुभव में ज्ञात होगा। अब यह बड़े मज़े की बात है : साधारणतः हम सब यही मानकर चलते हैं कि शरीर और आत्मा एक ही हैं, लेकिन यह भ्रांति है; हमें आत्मा का कोई पता ही नहीं; हम शरीर को ही आत्मा मानकर चलते हैं। लेकिन इस भ्रांति के पीछे भी वही सत्य काम कर रहा है, इस भ्रांति के पीछे भी कहीं अदृश्य हमारे प्राणों के कोने में वही प्रतीति है कि 'एक हैं'। उस एक की प्रतीति ने दो तरह की भूलें पैदा की हैं।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

एक अध्यात्मवादी है, वह कहता है : शरीर है ही नहीं, आत्मा ही है; एक भौतिकवादी है, चारवाक है, ऐपीकुरस है, वह कहता है कि शरीर ही है, आत्मा है ही नहीं। यह उसी गहरी प्रतीति की भ्रांतियां हैं; और प्रत्येक साधारण जन, जिसको हम अज्ञानी कहते हैं, वह भी यह एहसास करता है कि शरीर ही मैं हूं। लेकिन जैसे ही भीतर की यात्रा शुरू होगी, पहले तो यह टूटेगी बात और पता चलेगा कि शरीर अलग है और आत्मा अलग है। क्योंकि जैसे ही पता चलेगा आत्मा है, वैसे ही पता चलेगा कि शरीर अलग है और आत्मा अलग है। लेकिन यह मध्य की बात है। और गहरे जब उतरोगे, और गहरे जब उतरोगे, और चरम अनुभूति जब होगी, तब पता चलेगा कि कहां ?... दूसरा तो कोई है नहीं ! फिर आत्मा और शरीर दो नहीं हैं, फिर एक ही हैं; उसके ही दो रूप हैं।

जैसे मैं एक हूं और मेरा बायां हाथ है और दायां हाथ है। बाहर से जो देखने आयेगा, अगर वह कहे कि बायां और दायां हाथ एक ही हैं, तो गलत कहता है; क्योंकि बायां बिलकुल अलग है, दायां बिलकुल अलग है। जब मेरे करीब आकर समझेगा तो पायेगा बायां अलग है, दायां अलग है; दायां दुखता है, बायां नहीं दुखता; दायां कट जाये तो बायां बच जाता है। एक तो नहीं हैं। लेकिन मेरे भीतर और प्रवेश करेगा तो पायेगा कि मैं तो एक ही हूं जिसका बायां है और जिसका दायां है। और जब बायां टूटता है तब भी मैं ही दुखता हूं, और जब दायां टूटता है तब भी मैं ही दुखता हूं;और जब बायां उठता है तब मैं ही उठता हूं, और जब दायां उठता है तब मैं ही उठता हूं।

तो बहुत अंतिम अनुभूति में तो शरीर और आत्मा दो नहीं हैं, वे एक ही सत्य के दो पहलू हैं, दो हाथ हैं – इसका यह मतलब है। इसलिए मैंने यह बात कही है कि इससे यह तुम्हें समझ में आ सके, फिर यात्रा कहीं से भी शुरू हो सकती है।

अगर कोई शरीर से यात्रा शुरू करे और गहरा और गहरा और गहरा उतरता चला जाये, तो आत्मा पर पहुंच जायेगा। अगर कोई मेरा बायां हाथ पकड़ना शुरू करे और पकड़ता जाये, पकड़ता जाये और बढ़ता जाये, बढ़ता जाये, तो आज नहीं कल, मेरा दायां हाथ उसकी पकड़ में आ जायेगा। या कोई चाहे तो दूसरी तरफ से भी यात्रा शुरू कर सकता है कि सीधी आत्मा से यात्रा शुरू करे, तो शरीर पकड़ में आ जायेगा। लेकिन आत्मा से यात्रा शुरू करनी बहुत कठिन है। कठिन इसलिए है कि उसका हमें पता ही नहीं है।

हम खड़े हैं शरीर पर, तो हमारी यात्रा तो शरीर से शुरू होगी। ऐसी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विधियां भी हैं जिनमें यात्रा सीधी आत्मा से ही शुरू होती है। लेकिन साधारणतः वैसी विधियां बहुत थोड़े से लोगों के काम की हैं। कभी लाख में एक आदमी मिलेगा जो उस यात्रा को कर सकता है। अधिकतम लोगों को तो यात्रा शरीर से ही शुरू करनी पड़ेगी, क्योंकि वहां हम खड़े हैं; जहां हम खड़े हैं, वहीं से यात्रा शुरू होगी। और शरीर की जो यात्रा है उसकी तैयारी कुंडलिनी है। शरीर के भीतर में जो गहरे से गहरे अनुभव हैं, उन गहरे अनुभवों का जो मूल केंद्र है, वह कुंडलिनी है। असल में जैसा हम शरीर को जानते हैं, और जैसा शरीर-शास्त्री जानता है, शरीर उतना ही नहीं है, शरीर उससे बहुत ज्यादा है।

यह पंखा चल रहा है। इस पंखे को हम उतार लें और तोड़कर सारा जांच कर डालें तो भी बिजली हमें कहीं भी नहीं मिलेगी। और यह हो सकता है कि एक बहुत बुद्धिमान आदमी भी यह कहे कि पंखे में बिजली जैसी कोई भी चीज नहीं है। एक-एक अंग को कांट डाले, तो भी बिजली नहीं मिलेगी; फिर भी पंखा बिजली से चल रहा था। और पंखा उसी क्षण बंद हो जायेगा जिस क्षण बिजली की धारा बंद होगी।

तो शरीर-शास्त्री ने एक तरह शरीर का अध्ययन किया है, काट-काटकर, तो उसे कुंडलिनी कहीं भी नहीं मिलती। मिलेगी भी नहीं। फिर भी कुंडलिनी की ही विद्युत शक्ति से सारा शरीर चल रहा है। यह जो कुंडलिनी की विद्युत शक्ति है, इसको बाहर से शरीर के विश्लेषण से कभी नहीं जाना जा सकता। क्योंकि विश्लेषण में वह तत्काल छिन्न-छिन्न होकर विदा हो जाती है, विलीन हो जाती है। उसे जानना हो तो भीतरी अनुभव से जाना जा सकता है।

यानी शरीर को भी जानने के दो ढंग हैं। बाहर से शरीर को जानना, जैसा कि एक फीजियोलॉजिस्ट, शरीर-शास्त्री, डॉक्टर टेबल पर आदमी के शरीर को रखकर काट रहा है, पीट रहा है, जांच रहा है; और एक शरीर को भीतर से जानना है। जो व्यक्ति शरीर के भीतर बैठा है, वह अपने शरीर को भीतर से जान रहा है।

तो स्वयं के शरीर को जब कोई भीतर से जानना शुरू करता है... और यह ख्याल रखना कि हम अपने शरीर को भी बाहर से ही जानते हैं; अपने शरीर को भी! अगर मुझे मेरे बायें हाथ का पता है तो वह भी मेरी आंखें जो मेरे हाथ को देख रही हैं उसका पता है। यह बायें हाथ का जो अनुभव है, यह शरीर-शास्त्री का अनुभव है। लेकिन आंख बंद करके इस बायें हाथ की आंतरिक जो प्रतीति है, भीतर से जो इसका अनुभव है, वह मेरा अनुभव है। तो अपने ही शरीर को भीतर से जानने अगर कोई जायेगा, तो बहुत शीघ्र

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

Madhav P. 'Sankochi'

वह उस कुंड पर पहुंच जायेगा जहां से शरीर की सारी शक्तियां उठ रही हैं। उस कुंड में सोयी हुई शक्ति का नाम ही कुंडलिनी है।

और तब वह अनुभव करेगा कि सब कुछ वहीं से फैल रहा है पूरे शरीर में। जैसे कि एक दीया जल रहा हो, पूरे कमरे में प्रकाश हो, लेकिन हम खोजबीन करते करते करते दीये पर पहुंच जायें और पायें कि इस ज्योति से ही सारी प्रकाश की किरणें फैल रही हैं; वे दूर तक फैल गयी हैं, लेकिन वे जा रही हैं यहां से।

जीवन ऊर्जा का कुंड

तो कुंड से मतलब है शरीर के भीतर उस बिंदु की खोज, जहां से जीवन की ऊर्जा पूरे शरीर में फैल रही है।

निश्चित ही, उसका कोई सेंटर (केंद्र) होगा। असल में ऐसी कोई ऊर्जा नहीं होती जिसका कोई केंद्र न हो। चाहे दस करोड़ मील दूर हो सूरज, लेकिन किरण है हमारे हाथ में, तो हम कह सकते हैं कि कहीं केंद्र होगा, जहां से वह यात्रा कर रही है और जहां से वह चल रही है।

असल में कोई भी शक्ति केंद्र शून्य नहीं हो सकती, शक्ति होगी तो केंद्र होगा – ऐसे ही, जैसे परिधि होगी तो केंद्र होगा; कोई परिधि बिना केंद्र के नहीं हो सकती।

तो तुम्हारा शरीर एक शक्ति का पुंज है, इसे तो सिद्ध करने की कोई जरूरत नहीं। वह शक्ति का पुंज है – उठ रहा है, बैठ रहा है, चल रहा है, सो रहा है। फिर ऐसा भी नहीं है कि उसकी शक्ति हमेशा एक सी ही काम करती हो! कभी ज्यादा भी शक्ति उसमें होती है, कभी कम भी होती है।

जब तुम क्रोध में होते हो तो इतना बड़ा पत्थर उठाकर फेंक देते हो, जो तुम क्रोध में नहीं हो तो हिला भी न सकोगे। जब तुम भय में होते हो तो इतना तेजी से दौड़ लेते हो, जितना कि तुम किसी ओलंपिक के खेल में भी दौड़ रहे हो तो भी नहीं दौड़ सकोगे।

तो ऐसा भी नहीं है कि शक्ति तुम्हारे भीतर एक सी है; उसमें तारतम्यताएं हैं – वह कभी ज्यादा हो रही है, कभी कम हो रही है। इससे यह भी साफ होता है कि तुम्हारे पास कुछ रिज़र्वायर (संचय कक्ष) भी है, जिसमें से कभी शक्ति आ जाती है, कभी नहीं आती; जरूरत होती है तो आ जाती है, नहीं जरूरत होती तो छिपी रहती है।

तुम्हारे पास एक केंद्र है, जिससे शक्ति तुम्हें मिलती है – सामान्यतया

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

भी, असामान्यतया भी; रोजमर्रा के काम के लिए भी तुम्हें शक्ति मिलती है और असाधारण काम के लिए भी शक्ति मिलती है। फिर भी उस केंद्र को कभी तुम रिक्त नहीं कर पाते हो। वह केंद्र कभी रिक्त नहीं होता। और कभी तुम उस केंद्र का पूरा उपयोग भी नहीं कर पाते हो।

याने इस संबंध में जिन्होंने खोज की है उनका ख्याल है कि पंद्रह प्रतिशत से ज्यादा अपनी ऊर्जा का असाधारण से असाधारण आदमी भी उपयोग नहीं करता। यह हमारा महापुरुष भी जिसको हम कहते हैं, वह भी पंद्रह प्रतिशत से ऊपर नहीं जाता है। और जिसको हम साधारण जन कहते हैं वह तो दो-ढाई प्रतिशत से काम चलाता है। उसकी अंठानबे प्रतिशत शक्ति यों ही पड़ी-पड़ी विदा हो जाती है। और इसलिए बड़े आदमी में और छोटे आदमी में कोई पोटेंशियल (मौलिक क्षमतागत) भेद नहीं होता; बीज शक्ति का कोई भेद नहीं होता; उपयोग का ही भेद होता है।

महान से महान प्रतिभा का व्यक्ति भी जिस शक्ति का उपयोग कर रहा है, वह साधारण से साधारण बुद्धि के आदमी के पास भी है – बस अनुपयोग में है; उसे कभी पुकारा नहीं गया; उसे कभी चुनौती नहीं दी गयी; उसे कभी जगाया नहीं गया; वह पड़ी रह गयी; वह राजी हो गया है जितना है उससे और उसको अपना उसने मैक्ज़िमम (अधिकतम) समझ लिया है जो उसका मिनिमम (न्यूनतम) है।

हमारी जो न्यूनतम सीमा-रेखा है उसको हम अपनी परम सीमा-रेखा मानकर जी रहे हैं। और इसलिए कई क्षणों में, जब कि संकट का क्षण हो, साधारण से साधारण आदमी भी असाधारण क्षमता प्रकट कर पाता है। तो कई बार क्राइसिस और संकट में, अचानक हमें ही पता चलता है कि हमारे भीतर क्या था। एक केंद्र है, जिस पर यह सारी शक्ति ठहरी हुई है, छिपी हुई है, सोयी हुई है – कहना चाहिए बीज की तरह, जिसमें सब कुछ अभी बंद है; मेनिफेस्ट हो सकती है, प्रकट हो सकती है। इसको कुंड....

अचेतन में सोयी शक्ति

कुंड शब्द बहुत महत्त्वपूर्ण है; उसके कई अर्थ हैं। पहला तो अर्थ यह है कि जहां जरा सी लहर भी नहीं उठ रही; क्योंकि जरा सी भी लहर उठे तो सक्रिय हो गयी शक्ति। कुंड का मतलब है : जहां जरा सी भी लहर नहीं उठ रही – सब सोया हुआ, जरा सा कंपन नहीं, सब प्रसुप्त है। दूसरा अर्थ यह है कि प्रसुप्त तो है, लेकिन किसी भी क्षण सक्रिय हो सकता है; मृत नहीं है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सूखा नहीं है कुंड, भरा है। किसी भी क्षण सक्रिय हो सकता है, लेकिन सब सोया हुआ है।

और इसलिए हो सकता है कि हमें पता भी न चले कि हमारे भीतर क्या सोया हुआ था। क्योंकि हमें उतना ही पता चलेगा जितना हम जगायेंगे। इसे समझ लेना, क्योंकि जगाने के पहले हमें पता ही नहीं चल सकता कि हमारे भीतर क्या सोया हुआ है। उतना ही पता चलेगा जितना जगेगा। जितना जगेगा उतना ही पता चलेगा। यानी तुम्हारे भीतर जितनी शक्ति सक्रिय होगी उतनी ही तुम्हारे चेतन में आयेगी। और जो निष्क्रिय शक्ति है वह तुम्हारे अचेतन और अनकांशस में सोयी रहेगी। इसलिए महान से महान व्यक्ति को भी, जब तक वह महान हो नहीं जाता, पता नहीं चलता। न महावीर को पता है, न बुद्ध को पता है, न जीसस को, न कृष्ण को; वे जिस दिन हो जाते हैं उसी दिन पता चलता है। और इसलिए अनायास, जिस दिन यह घटना घटती है उनके भीतर, उस दिन उनको अनुकंपा मालूम पड़ती है कि पता नहीं, कहां से यह दान मिला; पता नहीं कहां से यह आया, कौन दे गया ! तो जो भी निकटतम होता है – अगर गुरु हो, तो वे सोचेंगे कि गुरु से मिल गया; अगर गुरु न हो, मूर्ति हो भगवान की, तो वे सोचेंगे, उससे मिल गया... जो भी पूर्वगामी होगा। आया उनके ही भीतर से है सदा – तीर्थंकर होगा, आसमान में बैठा हुआ भगवान होगा – कुछ भी होगा; जो पूर्वगामी होगा, उसे वे कारण समझ लेंगे।

असल में, हम तो उसी को कारण समझ लेते हैं जो पहले गया।

अभी मैं एक कहानी पढ़ रहा था कि दो किसान पहली दफा ट्रेन में सवार हुए। उन दोनों का जन्म दिन था और पहाड़ी गांव में वे रहते थे। और दोनों का एक ही जन्म दिन था और गांव के लोगों ने उनको कुछ भेंट करना चाहा, नयी-नयी ट्रेन चली थी, तो उन्होंने कहा कि हम तुम्हें टिकट भेंट करते हैं और तुम ट्रेन में घूम आओ दोनों। और इससे बढ़िया क्या हो सकती थी भेंट !

तो वे दोनों ट्रेन में गये। अब वे हर चीज के लिए उत्सुक थे कि क्या हो रहा है, क्या नहीं हो रहा है। तो कोई शर्बत की बोतल बेचता हुआ आदमी आया, तो उन्होंने सोचा कि हमें भी चखनी चाहिए। तो उन्होंने कहा, एक बोतल ले लें और आधी-आधी चख लें और फिर अच्छी लगे तो दूसरी भी ले सकते हैं। तो पहले आदमी ने आधी बोतल चखी, जब वह आधी बोतल चख रहा था तभी एक टनल में, एक बोगदे में गाड़ी प्रवेश कर गयी। दूसरे आदमी ने उसके हाथ से बोतल छीनी... भई, तुम पूरी मत पी जाना, आधी मुझे दे

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दो । उसने कहा, छूना ही मत; आई हेव बीन स्टक बलाइंड; छूना ही मत; क्योंकि इसने मुझे अंधा कर दिया है । टनल में गाड़ी चली गयी । जो पूर्वगामी था, तो उसने उस बोतल को पिया था, तो उसने उसको कहा, छूना ही मत; भूल के मत छूना, मैं अंधा हो गया हूं । स्वाभाविक है, जो पूर्वगामी है वह हमें कारण मालूम पड़ता है । लेकिन शक्ति जहां से आ रही है, उसका हमें पता ही नहीं; और जब तक न आ जाये तब तक पता नहीं । और भी आ सकती है वहां से उसका भी हमें पता नहीं; और कितनी आ सकती है, इसका भी हमें पता नहीं ।

कुंड में उठी एक लहर

यह जो सोया हुआ कुंड है अचेतन, इसमें से जितनी शक्ति जग जाती है, वह कुंडलिनी है । कुंड तो अचेतन है, कुंडलिनी चेतन है । कुंड तो सोयी हुई शक्ति का नाम है, कुंडलिनी जागी हुई शक्ति का नाम है । उसी से जितना हिस्सा जागकर ऊपर आ गया; उस कुंड से जितना बाहर आ गया, उतनी कुंडलिनी है ।

कुंडलिनी पूरा कुंड नहीं है, कुंडलिनी उसमें से बहुत छोटी सी एक लहर है जो उठ गयी । इसलिए दोहरी खोज है इस यात्रा में । तुम्हारे भीतर जो कुंडलिनी जगी है वह तो सिर्फ खबर है तुम्हारे भीतर के एक स्रोत की, जहां और भी बहुत कुछ सोया होगा । जब एक किरण आयी है, तो अनंत किरणों की वहां संभावना है । तो एक रास्ता तो कुंडलिनी को जगाने का है, जिसमें से कि तुम्हारी शक्ति... शरीर की शक्ति का तुम्हें पूरा बोध हो सकेगा, और इस शक्ति को जगाकर तुम शरीर के उन बिंदुओं पर पहुंच जाओगे, जहां से शरीर के अदृश्य रूपों में आत्मा में प्रवेश आसान है; उन द्वारों पर पहुंच जाओगे इस शक्ति को जगाकर, जहां से अदृश्य द्वार तक तुम जा सकते हो । और इसको कुछ भी समझ लेना जरूरी है, क्योंकि हम... हम जो कुछ भी कर रहे हैं,वह हमारी शक्ति किन्हीं द्वारों के द्वारा कर रही है । अगर तुम्हारे कान खराब हो जायें, तो शक्ति वहां तक आकर लौट जायेगी, लेकिन तुम सुन न सकोगे । फिर धीरे-धीरे शक्ति वहां आनी बंद हो जायेगी; क्योंकि शक्ति वहीं आती है जहां उसको सक्रिय होने का कोई मौका हो । वह वहां नहीं आयेगी । इससे उलटा भी हो सकता है... इससे उलटा भीं हो सकता है कि कोई आदमी बहरा है, और अगर वह अपनी अंगुली से बहुत ज्यादा संकल्प करे सुनने का, तो अंगुली भी सुन सकती है । ऐसे लोग हैं [illegible] शरीर के दूसरे

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हिस्सों से सुनने लगे हैं, ऐसे लोग भी हैं जो शरीर के दूसरे हिस्सों से देखने लगे हैं।

असल में जिसको तुम आंख कहते हो, वह है क्या ? तुम्हारी चमड़ी का ही हिस्सा है। लेकिन अनंत काल से मनुष्य उस हिस्से से देखता रहा है, इतना ही। लेकिन पहले दिन, जिस दिन मनुष्य के पहले प्राणी ने उस अंग से देखा होगा, वह बिलुकल ही संयोग की बात थी; वह कहीं और से भी देख सकता था। दूसरे प्राणियों ने और हिस्सों से देखा है। तो दूसरी तरफ उनकी आंखें आ गयीं हैं। ऐसे भी पशु-पक्षी हैं, कीड़े-मकोड़े हैं, जिनके पास असली आंख भी है और फाल्स (नकली) आंख भी है। असली आंख, जिससे वे देखते हैं और झूठी आंख, जिससे वे दूसरों को धोखा देते हैं, कि अगर कोई हमला करे तो झूठी आंख पर हमला करे, असली आंख पर हमला न करे। साधारण सी मक्खी तुम्हारे घर में जो है, उसकी हजार आंख हैं; उसकी एक आंख हजार आंखों का जोड़ है। देखने की क्षमता बहुत ज्यादा है उसके पास। मछलियां हैं जो पूंछ से देखती हैं, क्योंकि उनको पीछे से दुश्मन का डर होता है।

अगर हम सारी दुनिया के प्राणियों की आंखों का अध्ययन करें तो हमको पता चलेगा कि आंख का कोई इसी जगह होना मतलब नहीं है; कान का इसी जगह होना कोई मतलब नहीं है। ये कहीं भी हो सकते हैं। इस जगह हैं, क्योंकि अनंत बार मनुष्य जाति ने वहीं-वहीं उन्हें पुनरुक्त किया है, वे वहां स्थिर हो गये हैं... और हमारे भीतर उनकी जो स्मृति है, वह गहरी हो गयी है हमारी चेतना में। इसलिए वहां पुनरुक्त हो जाते हैं। यहां जो-जो अंग हमारे पास हैं, उन अंगों में से एक अंग भी खो जाये, तो उस दुनिया का दरवाजा बंद हो जायेगा। जैसे आंख खो जाये, तो फिर हमें प्रकाश का कोई अनुभव न हो सकेगा। फिर कितने ही अच्छे कान हों हमारे पास, और कितने ही अच्छे हाथ हों, प्रकाश का अनुभव नहीं हो सकेगा।

नये द्वारों पर दस्तक

तो जब कुंडलिनी तुम्हारी जागनी शुरू होती है तो वह कुछ ऐसे नये द्वारों पर भी चोट करती है जो सामान्य नहीं हैं; जिनसें तुम्हें कुछ और चीजों का पता चलना शुरू होता है – जो कि इन आंखों से पता नहीं चलता था, इन हाथों से पता नहीं चलता था। अगर ठीक से कहें, तो ऐसा कह सकते हैं कि तुम्हारी अंतर्इंद्रियों पर चोट होनी शुरू हो जाती है। अभी भी तुम्हारी कुंडलिनी की शक्ति ही इन आंखों को और कानों को चला रही है, लेकिन ये बहिर इंद्रियां

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हैं। और बहुत छोटी सी मात्रा कुंडलिनी की इनको चला लेती है। अगर तुम उस मात्रा में थोड़ी सी भी बढ़ती कर दो, तो तुम्हारे पास अतिरिक्त शक्ति होगी जो नये द्वारों पर चोट कर सके। जैसे कि हम यहां से पानी बहा दें। अगर पानी की एक छोटी सी मात्रा हो, तो पानी की एक लीक बन जायेगी और फिर पानी उसी लीक में से बहता हुआ चला जायेगा। लेकिन पानी की मात्रा एकदम से बढ़ जाये तो तत्काल नयी धाराएं शुरू हो जायेंगी; क्योंकि उतने पानी को पुरानी धारा न ले जा सकेगी।

तो कुंडलिनी को जगाने का जो गहरा शारीरिक अर्थ है, वह यह है कि इतनी ऊर्जा तुम्हारे पास हो कि तुम्हारे पुराने द्वार उसको बहाने में समर्थ न रह जायें। तब अनिवार्यरूपेण उस ऊर्जा को नये द्वारों पर चोट चरनी पड़ेगी और तुम्हारी नयी इंद्रियां जगनी शुरू हो जायेंगी। उन इंद्रियों में बहुत तरह की इंद्रियां हैं – उनसे टेलिपैथी होगी, कलेरवायन्स होगा, तुम्हें कुछ चीजें दिखाई पड़ने लगेंगी, कुछ सुनाई पड़ने लगेंगी जो कि कान की नहीं हैं, आंख की नहीं हैं। तुम कुछ चीजें अनुभव करने लगोगे जिनमें तुम्हारी किसी इंद्रिय का कोई योगदान नहीं है। तुम्हारे भीतर नयी इंद्रियां सक्रिय हो जायेंगी। और इन्हीं इंद्रियों की सक्रियता का जो गहरे से गहरा फल होगा, वह तुम्हारे शरीर के भीतर जो अदृश्य लोक है, जिसको आत्मा हम कह रहे हैं, तुम्हारे शरीर का जो सूक्ष्मतम अदृश्य छोर है, उसकी प्रतीति उसे पकड़नी शुरू हो जायेगी। तो यह कुंडलिनी के जागने से तुम्हारे भीतर संभावनाएं बढ़ेंगी। शरीर से काम शुरू होगा।

चेतना को कुंड में डुबोने का अनूठा प्रयोग

दूसरी बात मैंने छोड़ दी : कि यह साधारणतः प्रयोग हुआ है, कुंडलिनी को जगाने का, पर फिर भी कुंडलिनी पूरा कुंड नहीं है। एक दूसरा प्रयोग भी हैं जिस पर फिर कभी तुमसे अलग ही पूरी बात करनी पड़े। बहुत थोड़े से लोगों ने पृथ्वी पर उस पर काम किया है – वह कुंडलिनी जगाने का नहीं है, बल्कि कुंड में डूब जाने का है। उसमें से कोई एक छोटी-मोटी शक्ति को उठाकर काम कर लेना नहीं, बल्कि समग्र चेतना को अपने उस कुंड में डुबा देना। तब कोई इंद्रिय नहीं जागेगी नयी, कोई अतींद्रिय अनुभव नहीं होंगे, और आत्मा का अनुभव एकदम खो जायेगा, और सीधा परमात्मा का अनुभव होगा। कुंडलिनी की शक्ति जगाकर जो अनुभव होगा, वह तुम्हें पहले आत्मा का अनुभव होगा; और उसके साथ एक प्रतीति होगी कि दूसरे की आत्मा अलग है, मेरी आत्मा अलग है। जिन लोगों ने कुंडलिनी की शक्ति जगाकर अनुभव

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

किये हैं, वे अनेक आत्मवादी हैं; वे कहेंगे कि अनेक आत्माएं हैं, हर एक के भीतर अलग आत्मा है। लेकिन, जिन लोगों ने कुंड में डुबकी लगायी है, वे कहेंगे : आत्मा है ही नहीं, परमात्मा ही है; अनेक नहीं हैं, एक ही है। क्योंकि उस कुंड में डुबकी लगाते से ही, तुम अपने ही कुंड में डुबकी नहीं लगाते – तुम, सबका जो सम्मिलित कुंड है, उसमें प्रवेश कर जाते हो, तत्काल।

तुम्हारा कुंड और मेरा कुंड और उनका कुंड अलग-अलग नहीं हैं। इसीलिए तो कुंड अनंत शक्तिवान है। तुम उसमें से कितनी ही उठाओ तो भी कुछ नहीं उठता। तुम उसमें कितनी ही बालटी पानी भर लाये हो अपने घर के काम के लिए, उससे कुछ वहां फर्क नहीं पड़ता। लेकिन तुम अपना मटका भर लाये हो, मैं अपना मटका भर लाया हूं, मेरे मटके का पानी अलग है, तुम्हारे मटके का पानी अलग है।

हम सागर से कुछ ले आये हैं। लेकिन एक आदमी सागर में डूब गया, तब वह कहता है, मटके-वटके की कोई बात नहीं है, और किसी का पानी अलग नहीं है, सागर एक है; वह जिसे तुम घर ले गये हो, वह भी इसी का हिस्सा है... और कुछ दूर नहीं हो गया है, और तुम दूर न रख पाओगे, वह लौट आयेगा। अभी धूप पड़ेगी और भाप बनेगी और बादल बनेंगे, वह सब लौट आयेगा। वह कहीं दूर नहीं गया है, वह दूर जा नहीं सकता, वह सब यहीं लौट आयेगा।

तो जिन लोगों ने कुंडलिनी को जगाने के प्रयोग किये, उन लोगों को अतींद्रिय अनुभव हुए। जो कि साइकिक, जो कि मनस् की बड़ी अदभुत अनुभूतियां हैं। और उन्हें आत्म अनुभव हुआ जो कि परमात्मा का सिर्फ एक अंश है; जहां से तुम परमात्मा को पकड़ रहे हो। जैसे एक सागर के किनारे से मैं सागर को छू रहा हूं। मैं उसी सागर को छू रहा हूं जो कि करोड़ों मील दूर तुम भी छू रहे होओगे। लेकिन मैं कैसे मानूं कि तुम भी उसी सागर को छू रहे हो; तुम अपने किनारे छू रहे हो, मैं अपने किनारे छू रहा हूं। तो मेरा सागर अलग होगा। मेरा सागर हिंद महासागर होगा, तुम्हारा अटलांटिक महासागर होगा, उनका सागर पैसिफिक महासागर होगा। महासागर नहीं छुएंगे, हम अपने-अपने सागर ही हो जायेंगे, अपना-अपना तट भी हो जायेगा; हम कहीं विभाजन रेखा खींच लेंगे – जो मैंने छुआ।

तो आत्मा का अनुभव जो है वह परमात्मा को एक कोने से छूना है। और कोने से छूने का रास्ता है कि एक छोटी सी शक्ति जग जाये तो तुम छू लोगे। और इसलिए इस मार्ग पर चलने से एक दिन आत्मा को भी खोना

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पड़ता है, नहीं तो रुकावट हो जाती है; वह पूरा नहीं है मामला। फिर आत्मा को भी खोना पड़ता है; फिर छलांग लगानी पड़ती है कुंड में। लेकिन यह आसान है। यह आसान है... कई बार ऐसा होता है कि लंबा रास्ता आसान रास्ता होता है, और निकटतम रास्ता कठिन रास्ता होता है; उसके कारण हैं। उसके कारण हैं : लंबा रास्ता सदा आसान रास्ता होता है।

अब जैसे, मुझे अगर मेरे ही पास आना हो, तो भी मुझे दूसरे के माध्यम से आना पड़ेगा। और मुझे अगर अपनी ही शकल देखनी हो, तो भी मुझे एक आईना रखना पड़ेगा। अब यह फिजूल की लंबी यात्रा है कि आईने में मेरी शकल जायेगी और आईने से वापस लौटेगी, तब मैं देख पाऊंगा। यह इतनी यात्रा करनी पड़ेगी। लेकिन अपनी शकल को सीधा देखना, निकटतम तो है लेकिन कठिनतम भी है। मेरा मतलब समझे न तुम ?

स्वयं को जानने व खोने का आनंद

तो यह जो कुंडलिनी की छोटी सी शक्ति को उठाकर थोड़ी लंबी यात्रा तो होती है, क्योंकि इंद्रियों का सारा का सारा, अंतईंद्रियों का जगत खुलता है और आत्मा पर पहुंचते हैं। और फिर वहां से छलांग तो लेनी ही है। लेकिन बड़ी सरल हो जाती है। क्योंकि जिसको आत्म-अनुभव हुआ, जिसने अपने को जाना, और आनंद पाया, वह आनंद उसे पुकारने लगता है कि अब अपने को भी खो दो तो और परम आनंद पा लोगे।

अपने को जानने का एक आनंद है, अपने को पाने का एक आनंद है, और अपने को खोने का एक परम आनंद है; क्योंकि जब तुम अपने को जान लोगे तब तुम्हें सिर्फ एक ही पीड़ा रह जायेगी कि मैं हूं — बस, इतनी पीड़ा और रह जायेगी; सब पीड़ाएं मिट जायेंगी, एक ही पीड़ा रह जायेगी कि मेरा होना भी क्यों है। यह भी अनावश्यक है। यह मेरा होना भी व्यर्थ, अनावश्यक है। इसलिए इससे भी तुम छलांग लगाओगे ही; एक दिन तुम कहोगे कि अब मैंने 'होना' जान लिया, अब मैं 'न होना' भी जानना चाहता हूं; मैंने बीइंग भी जान लिया, अब मैं नानबीइंग भी जानना चाहता हूं; मैंने जान लिया प्रकाश, अब मैं अंधकार भी जानना चाहता हूं। और प्रकाश कितना ही बड़ा हो, उसकी सीमा है; और अंधकार असीम है। और बीइंग कितना ही महत्त्वपूर्ण हो, फिर भी सीमा है। अस्तित्व की सीमा होगी; अनस्तित्व की कोई सीमा नहीं।

इसलिए बुद्ध को लोग नहीं समझ पाये, क्योंकि बुद्ध से जब लोगों ने जाकर पूछा कि हम बचेंगे कि नहीं वहां, तो उन्होंने कहा कि तुम कैसे बचोगे ?

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तुमसे ही तो छूटना है। तो उन्होंने पूछा कि मोक्ष में फिर कम से कम हम तो होंगे ! और सब मिट जाये – वासना मिटे, दुख मिटे, पाप मिटे – हम तो बचेंगे ? बुद्ध ने कहा, तुम कैसे बचोगे ? जब वासना मिट जायेगी, पाप मिट जायेगा, दुख मिट जायेगा, तो एक दुख बचेगा तुम्हारा – होने का दुख। होना भी खलने लगेगा।

यह बड़े मजे की बात है : क्योंकि जब तक वासना है तब तक 'होना' नहीं खलता तुम्हें, क्योंकि तुम होने को काम में लगाये रखते हो। धन कमाना है तो होने को तुमने धन कमाने में लगाया है; यश कमाना है तो यश कमाने में लगाया है। जब यश की कामना न होगी, धन की कामना न होगी, काम की वासना न होगी, जब कुछ भी न होगा करने को, जब डूइंग (करना) बिलकुल न बचेगा, तब बीइंग (होने) का करोगे क्या ? तब बीइंग सीधा गड़ने लगेगा; होना ही घबराने लगेगा कि अब यह होना भी नहीं चाहिए।

तब बुद्ध कहते हैं कि नहीं, वहां कुछ भी नहीं होगा; जैसे दीया बुझ जाता है, फिर तुम पूछते हो, कहां गया ? मरते समय तक लोग बुद्ध से पूछ रहे हैं कि तथागत का मरने के बाद क्या होता है; जब आप मर जायेंगे तो फिर क्या होगा ? तो बुद्ध कहते हैं, जब मर ही गये तो फिर होने को बचा क्या ? फिर कुछ बचेगा ही नहीं, जैसे दीया बुझ जाता है, ऐसे सब बुझ जायेगा। तुम कब पूछते हो कि दीया बुझ गया है, अब क्या हुआ ? बुझ गया, बुझ गया।

तो आत्मा की उपलब्धि चरण ही है एक आत्मा को खाने की तैयारी का। लेकिन ऐसे ही आसान है, क्योंकि जो अभी वासना ही नहीं खो सका, उससे अगर सीधा कहो कि कुंड में डूब जाओ, अपने को ही खो दो, असंभव है; क्योंकि वह कहेगा, अभी मुझे बहुत काम है।

हम अपने को खोने से डरते क्यों हैं ? हम अपने को खोने से इसलिए डरते हैं कि काम तो बहुत करने को हैं, मैं खो दूंगा तो फिर काम कौन करेगा ? एक मकान बनाया हुआ है, वह अधूरा है। तो उसे मैं पूरा बना लूं, फिर तैयार हो जाऊंगा। लेकिन तब दूसरे काम अधूरे रह जायेंगे।

असल में काम की वासना कुछ पूरा करना है। उसकी वजह से तो मैं अपने को चला रहा हूं। तो जब तक वासना है, तब तक अगर कोई कहे कि आत्मा को खो दो, तब तक बिलकुल संभव नहीं है। यह निकट का तो है, लेकिन संभव नहीं है; क्योंकि वह आदमी जिसकी अभी वासना नहीं खोयी, वह आत्मा को कैसे खोयेगा। हां, वासना खो जाये, तो फिर एक दिन वह आत्मा को खोने को राजी हो सकता है, क्योंकि अब आत्मा का भी करना क्या

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है ? मेरा मतलब समझ रहे हो ?

मेरा मतलब यह है कि जिसने अभी दुख नहीं खोया, उससे कहो कि आनंद को खो दो; वह कहेगा, पागल हैं आप ? लेकिन जिस दिन दुख खो जाये, आनंद ही रह जाये, फिर आनंद का भी क्या करोगे ? फिर आनंद को भी खोने के लिए तुम तैयार हो जाओगे । और जिस दिन कोई आनंद को भी खोने को तैयार है, उसी दिन कोई घटना घटती है । दुख खोने को तो कोई भी तैयार हो जाता है, लेकिन एक घड़ी आती है जब हम आनंद को भी खोने को तैयार हो जाते हैं । वह परम अस्तित्व में लीनता उपलब्ध उससे होती है ।

यह सीधा भी हो सकता है; सीधे कुंड में जाया जा सकता है । लेकिन, राजी होना मुश्किल होता है । धीरे-धीरे राजी होना आसान हो जाता है । वासना खोती है, वृत्तियां खोती हैं, क्रिया खोती है – वह सब खो जाता है जिनके सहारे तुम हो; फिर आखिर मैं तुम्हीं बचते हो – जिसमें न नींव बची, न सहारे, बचे; अब तुम कहते हो : इसको भी क्या बचाना; अब इसको भी जाने दे सकते हैं । तब तुम कुंड में डूब जाते हो । कुंड में डूबना निर्वाण है ।

अगर सीधा कोई डूबना चाहे तो कुंडलिनी नहीं मार्ग में आती । इसलिए कुछ मार्गों ने उसकी बात नहीं की; जिन्होंने सीधे ही डूबने की बात की, उन्होंने उसकी बात नहीं की; उसकी कोई जरूरत नहीं थी । लेकिन मेरा अपना अनुभव यह है कि वह नहीं संभव हो सका; वह कभी एकाध दो लोगों के लिए संभव हो सकता है, लेकिन एकाध दो लोगों से कुछ हल नहीं होता । लंबे रास्ते ही जाना पड़ेगा ।

बहुत बार अपने घर पहुंचने के लिए दूसरों के घर के द्वार खटखटाने ही पड़ते हैं... अपने ही घर पहुंचने के लिए ! और अपनी ही शकल पहचानने के लिए न मालूम कितनी शकलों को पहचानना पड़ता है; और खुद को प्रेम करने के लिए न मालूम कितने लोगों को प्रेम करना पड़ता है । सीधा तो यही था कि अपने को प्रेम कर लेते – इसमें कौन कठिनाई थी; इसमें कौन बाधा डालता था ? उचित तो यही था कि अपने घर में सीधे आ जाते, लेकिन ऐसा नहीं है ।

असल में जब तक हम दूसरों के घरों में न भटक लें, तब तक अपने घर को पहचानाना ही मुश्किल होता है; और जब तक हम दूसरों से प्रेम न मांग लें, और दूसरों को प्रेम न कर लें, तब तक यह पता ही नहीं चलता कि असली सवाल अपने को प्रेम करने का है । यह पता ही नहीं चलता । इसका पता चलता है तभी ।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तो यह कुंडलिनी को जो मैंने कहा कि शरीर की तैयारी है; तैयारी है अशरीर में प्रवेश की, आत्मा में प्रवेश की। और तुम्हारी जितनी ऊर्जा अभी जगी है उससे तुम आत्मा में प्रवेश न कर सकोगे। क्योंकि तुम्हारी वह ऊर्जा तुम्हारे रोजमर्रा के काम में पूरी चुक जाती है। बल्कि करीब-करीब उसमें भी पूरा नहीं पड़ती, उसमें भी हम थक जाते हैं। वह उसमें भी पूरा नहीं पड़ रही है। बहुत मंद-मंद जल रही है लौ। इतने से इसको... इसको नहीं ले जाया जा सकता।

ऊर्जा अनंत है, उसे जगाओ

और इसीलिए संन्यास की वृत्ति पैदा हुई ताकि रोजमर्रा का काम बंद कर दिया जाये, क्योंकि शक्ति तो इतनी सी है हमारे पास, अब इसको लगाना है किसी और यात्रा पर, तो फिर यह काम बंद कर दो, दूकान मत करो, बाजार मत जाओ, नौकरी मत करो। लेकिन मेरा मानना है : वे भ्रांति में हैं, क्योंकि यह जो दो पैसे की शक्ति उसकी इस काम में लग रही है, यह अगर वह किसी तरह बचा भी ले, तो बचाने में यह उतनी व्यय हो जायेगी; क्योंकि बचाने में भी बड़ी ताकत लग जायेगी। बचाने में बड़ी ताकत लगती है; बहुत बार क्रोध करने में उतनी ताकत व्यय नहीं होती जितनी क्रोध रोकने में व्यय हो जाती है; बहुत बार लड़ने में उतनी व्यय नहीं होती जितना लड़ने से बचने में व्यय हो जाती है। तो मैं इसको उचित नहीं मानता, यह कंजूस का रास्ता है; यह संन्यास है ?

यह कंजूस का रास्ता है। वह यह कह रहा है कि इतने में ही हम उधर से बचा लेते हैं, इधर से बचा लेते हैं। मेरा मानना है कि कंजूस के रास्ते से नहीं चलेगा। और जगा लो – बहुत है, अनंत है; बचाते क्यों हो, और जगा लो; और खर्च करनी है और जगा लो, और तुम खर्च कर नहीं सकते, इतनी तुम्हारे पास है – तो तुम उसे बचाने की फिक्र क्यों करते हो।

अब वह आदमी डर रहा है कि अगर मैंने अपनी पत्नी को प्रेम किया तो परमात्मा को कैसे प्रेम करूंगा। क्योंकि उसके पास प्रेम की इतनी छोटी सी तो ऊर्जा है कि इसी में चुक जायेगी। तो वह कह रहा है, इससे बचा लो। लेकिन अगर इसको बचा भी लिया, तो इस बचाने में उसको लड़ना पड़ेगा; लड़ने में व्यय होगी। और इतनी छोटी सी ऊर्जा से, जिससे तुमने पत्नी को प्रेम किया था, उससे तुम परमात्मा से प्रेम कर पाओगे ? उतनी सी ऊर्जा से पत्नी तक नहीं पहुंच पाये पूरी तरह, परमात्मा तक कैसे पहुंच पाओगे ? यानी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

उतना छोटा सा जो ब्रिज (पुल) तुमने बनाया था, वह पत्नी तक भी तो पूरा नहीं पहुंचता था। उसमें भी, बीच में ही सीढ़ियां चुक जाती थीं। वह वहां तक भी सेतु पूरा नहीं बनता था कि तुम उसके हृदय तक भी पहुंच गये होओ ठीक; वह भी नहीं हो पाता था। उतनी सी ऊर्जा बचाकर तुम अनंत तक सेतु बनाने की सोचने बैठे हो, तो पागलपन में पड़े गये हो। उसे बचाने का सवाल नहीं है; और ऊर्जा है, उसे जगाने का सवाल है। और इतनी अनंत ऊर्जा है कि जिसका कोई हिसाब नहीं। और एक बार वह जगनी शुरू हो जाये, तो वह जितनी जगती है, उतनी ही और जगने की संभावना प्रगट होने लगती है। उसका झरना फूटना शुरू हो जाये तो अनंत है। उसे तुम चुकता नहीं कर सकते कभी। यानी ऐसा कोई क्षण नहीं आ सकता कि जब तुम कह दो कि अब मेरे भीतर जगने को और कुछ भी शेष नहीं रहा।

जगने की, अवेकनिंग की अनंत संभावना है; कितना भी तुम जगा सकते हो। और जितना तुम जगाते हो उतना और जगाने के लिए तुम शक्तिशाली होते चले जाते हो। और जब तुम्हारे पास अतिरिक्त होती है, एफलुएंस होता है तुम्हारे पास अंतरऊर्जा का, तभी तुम उसे उन रास्तों पर खर्च कर सकते हो जो अनजान है। समझ रहे हो न मेरा मतलब ? बाहर की दुनिया में भी एफ्लुएंस (समृद्धि का अतिरेक) होता है, एक आदमी के पास अतिरिक्त धन है, अब वह सोचता है कि चलो, चांद की यात्रा कर आयें।

हालांकि बेमानी है, यह चांद पर कुछ मिलने को नहीं है। लेकिन, हर्ज भी कुछ नहीं है, क्योंकि उसको खोने को भी क्या है। उसके पास अतिरिक्त है, वह खो सकता है। जब तक तुम्हारे पास अतिरिक्त नहीं है, उतना ही है जितनी तुम्हें जरूरत है – उससे भी कम है – तब तक तुम इंच-इंच जांच पड़ताल करके खर्च करोगे। इसलिए तुम ज्ञात की दुनिया से कभी बाहर न हटोगे। अज्ञात में जाने के लिए तुम्हारे पास अतिरेक चाहिए। तो कुंडलिनी की शक्ति तुम्हें अतिरेक से भर देती है। और तुम्हारे पास इतनी शक्ति होती है कि तुम्हारे सामने सवाल होता है कि इसको कहां खर्च करें।

और ध्यान रहे, जिनके पास अतिरिक्त शक्ति होती है, अचानक वे पाते हैं कि उनके जो पुराने द्वार थे, वे एकदम बंद हो गये; क्योंकि उस अतिरिक्त शक्ति को बहाने में वे समर्थ नहीं होते। जैसे कि एक छोटी नदी हो और उसमें पूरा सागर आ गया है। वह नदी मिट जायेगी फौरन। उसका कहीं पता ही नहीं चलेगा कि वह कहां गयी।

तो तुम्हारे क्रोध का एक मार्ग था, तुम्हारे सेक्स का एक मार्ग था, वे

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अचानक खो जायेंगे। जिस दिन अतिरिक्त ऊर्जा आयेगी, वह सब घाट, तट सब तोड़-फोड़कर उनको खतम कर देगी। तुम अचानक पाओगे कि कुछ और ही हो गया; वह सब कहां गया जो कल मैं छोटा-छोटा बचा-बचाकर कंजूस की तरह सब चल रहा था; और ब्रह्मचर्य साध रहा था और क्रोध दबा रहा था और यह कर रहा था, और वह कर रहा था; वह सब अब कहां है? क्योंकि वे नदियां न रहीं, वे नहरें न रहीं; अब तो यह पूरा सागर आ गया है। अब इसको ...इसको खर्च करने का तुम्हारे पास जब उपाय नहीं है, तब अनायास तुम पाते हो कि इसकी दूसरी यात्रा शुरू हो गयी। यात्रा तो होगी ही, वह तो रुक सकती नहीं। ऊर्जा बहेगी ही, वह रुक सकती नहीं। होनी चाहिए।

तो एक बार जगा लेने की बात है। और तब तुम्हारे दैनंदिन के द्वार बेमानी हो जाते हैं; और अनजान अपरिचित द्वार, जो बंद पड़े हैं, उनमें पहली दफे दरारें पड़ती हैं, और उनसे ऊर्जा धक्के देकर बहने लगती है। तो वहां तुम्हें अतींद्रिय अनुभव शुरू हो जाते हैं। और जैसे ही अतींद्रिय द्वार खुलते हैं वैसे ही तुम्हें अपने शरीर का अशरीरी छोर, जिसको आत्मा कहें, उसकी तुम्हें प्रतीति शुरू हो जाती।

तो कुंडलिनी तुम्हारे शरीर की तैयारी है अशरीर में प्रवेश के लिए। उस अर्थ में मैंने वह बात कही।

कुंडलिनी का आरोहण-अवरोहण

प्रश्न : कुंडलिनी-साधना में कुंडलिनी के एसेंड, (आरोहण) और डिसेंड (अवरोहण) की बात आती है। तो यह तो डिसेंड है, क्या यह कुंड में डूबना है या और कोई दूसरी बात है?

असल में कुंड में डूबना जो है वह न तो उतरना है, न वह चढ़ना है। कुंड में डूबने में तो यो दोनों बातें ही नहीं हैं। वह उतरना-चढ़ना नहीं है, मिट जाना है, समाप्त हो जाना है। बूंद जब सागर में गिरती है, न तो उतरती, न चढ़ती। हां, बूंद जब सूरज की किरणों में सूखती है, तब चढ़ती है आकाश की तरफ; और जब बादल में ठंडक पाकर गिरती है जमीन की तरफ, तब उतरती है। लेकिन जब सागर में जाती है तो फिर उतरना-चढ़ना नहीं है — डूबना है, मिटना है, मरना है।

तो ये जो उतरने-चढ़ने की जो बात है, अवरोहण की, अवतरण की, यह बहुत दूसरे अर्थों में है। यह इस अर्थ में है कि कुंड से जिस शक्ति को हम उठाते हैं, इसे बहुत बार वापिस कुंड में भी भेज देना पड़ता है। इस शक्ति

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

को हम उठाते भी हैं, इसे हमें वापिस भी भेज देना पड़ता है, बहुत बार। कई कारण हो सकते हैं। सबसे बड़ा कारण तो यह होता है कि बहुत बार ऐसा होता है कि जितनी शक्ति के लिए तुम तैयार नहीं होते, उतनी शक्ति जग जाती; उसे वापिस लौटाना पड़ता है, अन्यथा खतरे हो सकते हैं। तो कुछ शक्ति जितनी तुम झेल सको...

हमारे झेलने की भी क्षमताएं हैं न! हमारे झेलने की भी क्षमताएं हैं – सुख झेलने की भी क्षमता है, दुख झेलने की भी क्षमता है, शक्ति झेलने की भी क्षमता है। अगर हमारी क्षमता से बहुत बड़ा आघात हमारे ऊपर हो जाये, तो हमारा जो संस्थान है व्यक्तित्व का वह टूट सकता है। वह हितकर नहीं होगा। इसलिए बहुत बार ऐसी शक्ति उठ आती है जिसको वापिस भेज देना पड़ता है।

लेकिन जिस प्रयोग की मैं बात कर रहा हूं, उस प्रयोग में इसकी कोई जरूरत कभी नहीं पड़ेगी। यह प्रयोग पर निर्भर बात है। ऐसे प्रयोग हैं जो तुम्हारे भीतर आकस्मिक रूप से, जिनको सडन एनलाइटेनमेंट (आकस्मिक जागरण) के प्रयोग कहते हैं, जो तत्काल, इंस्टेंट शक्ति को जगा सकते हैं। ऐसे प्रयोग में सदा खतरा है, क्योंकि शक्ति इतनी आ सकती है जितनी के लिए तुम तैयार न थे। वोल्टेज इतना हो सकता है कि तुम्हारा बल्ब बुझ जाये, फ्यूज उड़ जाये, तुम्हारा पंखा जल जाये, तुम्हारी मोटर में आग लग जाये। जिस प्रयोग की मैं बात कर रहा हूं, वह प्रयोग तुम्हारे भीतर पहले पात्रता पैदा करता है, पहले शक्ति को नहीं जगाता।

साधना में दूसरों की सहायता

इसे ऐसे भी समझें कि यदि एक बड़ा बांध अचानक टूट जाये तो उसके पानी से बड़ा भारी नुकसान हो जायेगा, लेकिन उससे नहरें निकालकर उसी पानी को सुविधानुसार नियंत्रित रूप से प्रवाहित किया जा सकता है।

एक अदभुत घटना है कि किशोरावस्था में कृष्णमूर्ति को थियोसफी के कुछ विशेष लोगों द्वारा कुंडलिनी की सारी साधानाओं से गुजारा गया। उन पर अनेक प्रयोग किये गये, जिनकी स्पष्ट स्मृति उन्हें न रही; उन्हें बोध नहीं है कि क्या हुआ। उनको तो बोध तभी आया जब उस नहर में सागर उतर आया। इसलिए उन्हें तैयारी का कोई भी पता नहीं। इसलिए वे स्वीकार नहीं करेंगे कि किसी तैयारी की जरूरत है।

लेकिन उन पर बड़ी तैयारी की गयी, जैसा कि संभवतः पृथ्वी पर पहले

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

किसी आदमी के साथ नहीं की गयी। तैयारियां तो बहुत लोगों ने कीं, लेकिन अपने साथ कीं। यह पहली दफा कुछ दूसरे लोगों ने उनके साथ तैयारी की। बिलकुल कर सकते हैं, क्योंकि दूसरे बहुत गहरे में दूसरे नहीं हैं।

तो वह तैयारी दूसरों ने की और किसी एक बहुत बड़ी घटना के लिए की थी। वह घटना भी चूक गयी। वह घटना थी किसी और बड़ी आत्मा को प्रवेश कराने के लिए। कृष्णमूर्ति को तो सिर्फ एक विहिकल (वाहन) की तरह उपयोग करना था, इसलिए उन्हें तैयार किया था; इसलिए नहर खोदी थी; इसलिए शक्ति को, ऊर्जा को जगाया था। लेकिन यह प्रारंभिक काम था।

कृष्णमूर्ति जो थे वह खुद लक्ष्य नहीं थे उसमें। एक बड़े लक्ष्य के लिए साधन की तरह प्रयोग करना था उनका। किसी और आत्मा को उनके भीतर जगह देने की बात थी। वह नहीं हो सका, वह नहीं हो सका इसलिए की जब पानी आ गया तो कृष्णमूर्ति ने साधन बनने से इनकार कर दिया; वह किसी और के लिए साधन बनने से इनकार कर दिया। इसका डर था, इसका डर सदा है। इसलिए उसका प्रयोग नहीं किया गया था। इसका डर सदा है। क्योंकि जब व्यक्ति उस हालत में आ जाये जब कि वह खुद ही साध्य बन सके तो वह दूसरे के लिए क्यों साधन बनेगा। वे इनकार कर गये ऐन वक्त पर।

याने मैं तुम्हें अपने मकान की चाबी दूं इसलिए कि कल कोई मेहमान आ रहा है, उसके लिए तुम मकान तैयार करके रखना। लेकिन जब मैं चाबी तुम्हें देकर जाऊं और तुम मालिक हो जाओ तो कल जब मेहमान आने की बात हो तो तुम इनकार ही कर दोगे... कि मालिक तो मैं हूं; चाबी मेरे पास है। और ये चाबी किन्हीं औरों ने तैयार की थी और यह मकान भी किन्हीं औरों ने बनाया था। इसलिए न तुम्हें बनाने का पता है, न तुम्हें यह चाबी कब ढाली गयी, कैसे ढाली गयी, इसका पता है। लेकिन इस चाबी के तुम मालिक हो और मकान तुम खोलना जानते हो, बात खत्म हो गयी।

पहले तैयारी, पीछे उपलब्धि

ऐसी घटना घटी है : कुछ लोगों को तैयार किया जा सकता है, कुछ लोग पिछले जन्मों में तैयार होकर आते हैं, लेकिन यह साधारण मामला नहीं है। साधारणतः तो प्रत्येक को अपने को तैयार करना होता है। और उचित यही है कि ऐसा प्रयोग हो, जिसमें तैयारी पहले चलती हो और घटना पीछे घटती हो। तुम्हारी जितनी क्षमता बनती जाती हो उतना जल आता जाता हो। तुम्हारी क्षमता से ज्यादा शक्ति कभी न जग पाये। ऐसे बहुत से प्रयोग थे जिनमें

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ऐसा हुआ। इसलिए बहुत से लोग उन्मादग्रस्त होंगे, पागल हो जायेंगे। धर्म से बहुत बड़ा भय पैदा हो गया था। इस तरह के प्रयोगों की वजह से पैदा हुआ था। तो प्रयोग दो तरह के हो सकते हैं, इसमें कोई बहुत कठिनाई नहीं है।

अमरीका में उन्होंने बिजली की जो व्यवस्था की है, उसमें एक जो काम किया है, उसके कई दफे क्या परिणाम हो सकते हैं, वह मैं कहता हूं। इस तरह की स्थिति भीतर भी हो सकती है। उन्होंने जो व्यवस्था की है वह यह व्यवस्था की है, कि इस गांव को जितनी बिजली की जरूरत है उससे अगर ज्यादा कोटा इसके पास है आज, और आज रात गांव में कम बिजली का उपयोग किया जा रहा है, तो जितनी बिजली बचे वह दूसरे गांवों की तरफ आटोमेटिकली (अपने-आप) प्रवाहित हो जाये; यानी इस गांव के पास कुछ भी अतिरिक्त बिजली न पड़ी रह जाये व्यर्थ, वह दूसरे गांव के काम आ जाये। आज एक फैक्टरी बंद है जो कल शाम तक चल रही थी; आज बंद है, उसकी हड़ताल हो गयी। तो जितनी बिजली उसको चाहिए थी वह आज इस गांव में बेकार पड़ी रहेगी, जब कि दूसरे गांव में हो सकता है, बिजली की जरूरत हो, और एक फैक्टरी को बिजली न दी जा सके। तो पूरा आटोमेटिक इंतजाम किया है कि सारे ज़ोन (क्षेत्र) की बिजली पूरे वक्त प्रवाहित होती रहेगी दूसरी तरफ – जहां भी अतिरिक्त है वह तत्काल दूसरी तरफ बह जायेगी।

पीछे, तीन-चार वर्ष पहले कोई आठ-दस-बारह घंटे के लिए पूरी बिजली चली गयी अमरीका की। वह इस इंतजाम में चली गयी कि एक गांव की बिजली गयी तो उलटा प्रवाह शुरू हो गया। वह जो प्रवाह अतिरिक्त बिजली को ले जाता था, जब एक गांव की बिजली चली गयी तो सारी बिजली दूसरी तरफ दौड़ी, वहां वेक्यूम (शून्य) हो गया। उसकी केपेसिटि (क्षमता) से, उस गांव की उतनी बिजली उसे मिलनी चाहिए थी... और दूसरे सारे के सारे गांव संबंधित थे, वह सारी बिजली उस तरफ दौड़ी। वह इतने जोर से दौड़ी कि उस गांव के सारे फ्यूज चले गये और दूसरे गांव की मुसीबत हो गयी। और पूरा का पूरा जितना ज़ोन का इंतजाम था, वह सब का सब एक दम से खत्म हो गया। एक बारह घंटे के लिए अमरीका बिलकुल कोई दो हजार साल पहले लौट गया; एकदम अंधेरा हो गया। जो जहां था वहां अंधकार में हो गया और सब काम ठप्प हो गया। और उस वक्त पहली दफा उनको पता चला कि हम जिस लिए इंतजाम करते हैं, उससे उलटा भी हो सकता है। हमारा इंतजाम जो हम करते हैं, उससे उलटा हुआ। अगर एक-एक गांव का अलग-अलग इंतजाम होता तो ऐसा कभी नहीं हो सकता था।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हिंदुस्तान में ऐसा कभी नहीं हो सकता कि पूरे हिंदुस्तान की बिजली चली जाये, अमरीका में हो सकता है; क्योंकि वहां सब इंटरकनेक्टेड (आपस में जुड़ा हुआ) है पूरा का पूरा। और पूरे वक्त धाराएं एक गांव से दूसरे गांव शिफ्ट होती रहेंगी। तो कभी भी खतरा हो सकता है।

मनुष्य के भीतर भी ठीक विद्युतधारा की तरह इंतजाम हैं। और ये विद्युत धाराएं जो हैं, ये अगर तुम्हारी क्षमता से ज्यादा तुम्हारी तरफ प्रवाहित हो जायें... और ऐसे इंतजाम हैं जिनसे प्रवाहित हो सकती हैं... याने तुम यहां बैठे हुए हो, और यहां पचास लोग बैठे हुए हैं, तो ऐसे मेथड्स (विधियां) हैं कि तुम चाहो तो इन पचास लोगों की सारी विद्युतधारा तुम्हारी तरफ प्रवाहित हो जाये; ये सब पचास लोग यहां बिलकुल ही फेंट (मूर्छित) हालत में हो जायें... और तुम एकदम ऊर्जा के केंद्र बन जाओ। लेकिन खतरे भी हैं उसमें। उसमें खतरे हैं; क्योंकि उतनी ज्यादा भी हो सकती है कि तुम उसे न झेल पाओ। और इससे उलटा भी हो सकता है कि जिस मार्ग से विद्युतधारा तुम तक आयी, उसी मार्ग से तुम्हारी भी सारी विद्युत को लेकर दूसरी तरफ बह जाये। इन सबके प्रयोग हुए हैं।

तो वह जो उतरना है, वह तुम्हारे भीतर अगर कभी कोई अतिरिक्त मात्रा में शक्ति – तुम्हारी ही शक्ति ऊपर चली जाये, तो उसे वापस लौटाने की विधियां हैं। लेकिन जिस विधि की मैं बात कर रहा हूं उसमें उनकी भी कोई जरूरत नहीं; उसमें कोई प्रयोजन ही नहीं है। तुम्हारे भीतर जितनी पात्रता बनती जायेगी उतनी ही तुम्हारे भीतर शक्ति जगती जायेगी। पहले जगह बनेगी फिर शक्ति आयेगी। और इसलिए कभी तुम्हारे पास ऐसा नहीं होगा कि तुम्हें कुछ भी वापिस लौटाना पड़े। हां, एक दिन तुम खुद ही वापिस लौटोगे, वह दूसरी बात है। एक दिन तुम खुद ही सब जानकर छलांग लगा जाओगे कुंड में, वह दूसरी बात है।

और इन शब्दों का और अर्थों में भी प्रयोग हुआ है। जैसे कि श्री अरविंद जिस अर्थ में प्रयोग करते हैं, वह बहुत दूसरा है। दो तरह से हम परमात्म-शक्ति को सोच सकते हैं : या तो अपने से ऊपर; या तो अपने से ऊपर कहीं आकाश में – किसी भी ऊपर के भाव में; या अपने से गहरे, पाताल के भाव में। और जहां तक जगत की व्यवस्था का संबंध है, ऊपर और नीचे शब्द बेमानी हैं, उनका कोई अर्थ नहीं है; ये सिर्फ हमारे सोचने की धारणाएं हैं कि हम कैसा सोचते हैं। इस छत को तुम ऊपर कह रहे हो, कुछ ऊपर नहीं है; क्योंकि हम यहां एक छेद करें और वह जाकर अमरीका में निकल जायेगा छेद, जमीन

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

में। और वहां से अगर कोई झांककर देखे तो यह छत हमारे नीचे मालूम पड़ेगी... हमारे सिर के नीचे – उस छेद से झांकने पर। हम उलटे मालूम पड़ेंगे सब, शीर्षासन करते हुए और यह छत हमारे सिर के नीचे मालूम पड़ेगी। अभी भी वहीं है वह – हम कहां से देखते हैं, इस पर सब निर्भर करता है।

जैसे हमारा पूरब-पश्चिम सब झूठा है। क्या पूरब, क्या पश्चिम ? और पूरब चलते जाओ, चलते जाओ तो पश्चिम पहुंच जाओगे – और पश्चिम चलते जाओ, चलते जाओ तो पूरब पहुंच जाओगे। जिस पश्चिम में चलते-चलते पूरब पहुंच जाते हो उसको पश्चिम कहने का क्या मतलब है ? कोई मतलब नहीं है; रिलेटिव (सापेक्ष) है। रिलेटिव का मतलब यह कि बेमानी है। इसका मतलब यह है कि कोई मतलब नहीं है उसका : हमारी कामचलाऊ सीमा-रेखा है कि यह रहा पूरब, यह रहा पश्चिम, नहीं तो हम कैसे हिसाब बाटेंगे ! लेकिन कहां पूरब है ? किस जगह से शुरू होता है ? ...कलकत्ते से ? ...रंगून से ? ...टोकियो से ? कहां से पूरब शुरू होता है ? पश्चिम कहां से शुरू होता है, और कहां खतम होता है ? न कहीं शुरू होता है, न कहीं खतम होता है। वे कामचलाऊ ख्याल हैं जिनसे हमें सुविधा बनती है कि हम एक-दूसरे को बांट लेते हैं।

ठीक ऐसे ही, ऊपर-नीचे दूसरे डायमेंशन (आयाम) में कामचलाऊ हैं। पूरब-पश्चिम हॉरिजंटल (क्षैतिजीय) कामचलाऊ बातें हैं, और ऊपर-नीचे वर्टिकल (ऊर्ध्वस्त) कामचलाऊ बातें हैं। न कुछ ऊपर है, न कुछ नीचे है; क्योंकि इस जगत की कोई छत नहीं है, और इस जगत का कोई बॉटम (तलहटी) नहीं है। इसलिए ऊपर-नीचे की सब बातें बेमानी हैं। लेकिन हमारी ये कामचलाऊ धारणाएं हमारे धर्म की धारणा में भी घुस जाती हैं।

तो कुछ लोग ईश्वर को अनुभव करते हैं अबव, ऊपर। तो जब शक्ति आयेगी तो उतरेगी, डिसेंड करेगी, हम तक आयेगी; कुछ लोग अनुभव करते हैं ईश्वर को नीचे, रूट्स (जड़ों) में। तो जब शक्ति आयेगी तो चढ़ेगी, उठेगी, हम तक आयेगी। लेकिन कोई मतलब नहीं है। कहां हम रखते हैं ईश्वर को, यह सब कामचलाऊ बात है।

लेकिन इस कामचलाऊ बात में भी अगर चुनाव करना हो, तो मैं मानता हूं बजाय उतरने के, उठना ही ज्यादा सहयोगी होगा; बजाय उतरने के... शक्ति का तुम्हारे भीतर से उठना ही ज्यादा सहयोगी होगा। उसके कारण हैं। क्योंकि जब शक्ति के उठने की धारणा तुम पकड़ोगे, तो उठाने का सवाल उठेगा। तब तुम्हें कुछ करना पड़ेगा। और जब उतरने की बात है तो सिर्फ प्रार्थना रह जायेगी, और तुम कुछ भी कर न सकोगे। जब ऊपर से नीचे आना है

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तो हम हाथ जोड़कर प्रार्थना कर सकते हैं। इसलिए दो तरह के धर्म दुनिया में बने – ध्यान करनेवाले और प्रार्थना करनेवाले।

धर्म के दो आयाम – ध्यान और प्रार्थना

प्रार्थना करनेवाले वे धर्म हैं जिन्होंने ईश्वर को ऊपर अनुभव किया कहीं। अब हम कर भी क्या सकते हैं? उसको ला तो सकते नहीं! क्योंकि अगर लायें तो उतने ऊपर हमको जाना पड़े, और उतने ऊपर हम जायेंगे भी कैसे? उतने ऊपर जायेंगे तो परमात्मा ही हो जायेंगे हम। वहां हम जा नहीं सकते, जहां हम खड़े हैं वहां हम खड़े रहेंगे। हम चिल्लाकर प्रार्थना कर सकते हैं कि हे परमात्मा, उतर।

लेकिन जिन धर्मों ने और जिन धारणाओं ने इस तरह सोचा कि उठाना है नीचे से, कहीं हमारी ही जड़ों में सोया हुआ है कुछ। और हम ही कुछ करेंगे तो वह उठेगा, तो वे प्रार्थना के धर्म न बनकर फिर ध्यान के धर्म बने। तो मेडिटेशन (ध्यान) और प्रेयर (प्रार्थना) में इस ऊपर-नीचे की धारणा का फर्क है। प्रार्थना करनेवाला धर्म ईश्वर को ऊपर मानता है, ध्यान करनेवाला धर्म ईश्वर को जड़ों में मानता है, और वहां से उसको उठाता है।

और ध्यान रहे, प्रार्थना करनेवाले धर्म धीरे-धीरे हारते जा रहे हैं, खत्म होते जा रहे हैं; उनका कोई भविष्य नहीं है। उनका कोई भविष्य नहीं है। ध्यान करनेवाले धर्म की संभावना रोज प्रगाढ़ होती जा रही है। उसका बहुत भविष्य है।

तो मैं पसंद करूंगा कि हम समझें कि नीचे से ऊपर...। इसके और भी अर्थ होंगे। धारणा तो सापेक्ष है, इसलिए मुझे कोई दिक्कत नहीं है; किसी को ऊपर मानना हो तो मुझे कोई अड़चन नहीं आती। लेकिन मैं मानता हूं कि आपको अड़चन आयेगी काम करने में। जैसा मैंने कहा कि अगर हम पूरब की ओर चलते जायें तो पश्चिम पहुंच जाते हैं, फिर भी हमें पश्चिम जाना हो तो हम पूरब की तरफ नहीं चलते, हम पश्चिम की तरफ ही चलते हैं। धारणा बेमानी है, लेकिन फिर भी हमें पश्चिम जाना हो तो हम पश्चिम की तरफ चलना शुरू करते हैं, हालांकि पूरब की तरफ चलें तो चलते-चलते पश्चिम पहुंच जायेंगे, लेकिन वह नाहक लंबा रास्ता हो जायेगा। मेरा मतलब समझे न तुम?

तो साधक के लिए और भक्त के लिए फर्क पड़ेगा : भक्त ऊपर मानेगा, इसलिए हाथ जोड़कर प्रतीक्षा करेगा; साधक नीचे मानेगा, इसलिए कमर कसकर जगाने की कोशिश करेगा।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

और भी अर्थ हैं, जो ख्याल में आ जाने चाहिए। असल में जब हम नीचे मानते हैं परमात्मा को, तो हमारी जिनको हम निम्न वृत्तियां कहते हैं, उनमें भी वह मौजूद हो जाता है। इसलिए हमारे चित्त में कुछ निम्न नहीं रह जाता। क्योंकि जब परमात्मा ही नीचे है, तो जिसको हम निम्नतम कहते हैं, वहां भी वह मौजूद है; और वहां से भी जगेगा; अगर सेक्स है तो वहां से भी जगेगा। यानी ऐसी कोई जगह ही नहीं हो सकती जहां वह न हो – नीचे से नीचे; नीचे से नीचे नरक में भी अगर कहीं कुछ है कोई, तो वहां भी वह मौजूद है।

लेकिन जैसे ही हम उसे ऊपर मानते हैं, तो कंडेमनेशन (नकार) शुरू हो जाता है... कि जो नीचे है वह कंडेम्ड (निंदित) हो जाता है; उसकी निंदा शुरू हो जाती है, क्योंकि वहां परमात्मा नहीं है। वहां परमात्मा नहीं है। और अनजाने स्वयं की भी हीनता शुरू हो जाती है कि हम नीचे हैं और वह ऊपर है। तो उसके घातक परिणाम हैं... मनोवैज्ञानिक घातक परिणाम हैं। और फिर....

ध्यान-केंद्रित धर्म अधिक प्रभावकारी

जितनी शक्ति से खड़े होना हो, उतना उचित है कि शक्ति नीचे से आये। क्योंकि तुम्हारे पैरों को मजबूत करेगी। शक्ति ऊपर से आये तो तुम्हारे सिर को स्पर्श करेगी। और तुम्हारी जड़ों तक जाना चाहिए मामला। और जब ऊपर से आयेगी तो तुम्हें हमेशा विजातीय और फॉरन मालूम पड़ेगी। इसलिए जिन लोगों ने प्रार्थना की, वे कभी नहीं मान पाते कि भगवान और हम एक हैं; वे कभी नहीं मान पाते। इसलिए मुसलमानों का निरंतर सख्त विरोध रहा कि कोई कहे कि मैं भगवान हूं; क्योंकि कहां वह ऊपर और कहां हम नीचे! इसलिए वह मंसूर का गला काट देंगे, सरमद को मार डालेंगे; क्योंकि यह सबसे बड़ा कुफ्र एक ही है उनकी नजर में न... कि तुम कह रहे हो कि हम भगवान हैं। इससे बड़ा कुफ्र नहीं हो सकता, क्योंकि कहां वह ऊपर और कहां तुम नीचे जमीन पर सरकते, कीड़े-मकोड़े! तुम उसके साथ अपनी आईडेंटिटि (तादात्म्य) नहीं जोड़ सकते।

तो उसका कारण था; क्योंकि जब हम उसे ऊपर मानेंगे और अपने को नीचे मानेंगे, तो हम दो हो जायेंगे तत्काल। इसलिए सूफी कभी पसंद नहीं पड़ सके इस्लाम को, क्योंकि सूफी दावा कर रहे हैं इस बात का कि हम और वे एक हैं। लेकिन हम और वे एक तभी हो सकते हैं जब वह नीचे से आता

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हो, क्योंकि हम नीचे हैं। जब वह जमीन से ही आता हो, आकाश से नहीं, तभी हम और वह एक हो सकते हैं।

जैसे ही हम परमात्मा को ऊपर रखेंगे, पृथ्वी का जीवन निंदित हो जायेगा, पाप हो जायेगा; और जन्म लेना पाप का फल हो जायेगा। जैसे ही हम उसे नीचे रखेंगे, वैसे ही पृथ्वी का जीवन एक आनंद हो जायेगा; वह पाप का फल नहीं, वह परमात्मा की अनुकंपा हो जायेगा। और प्रत्येक चीज, चाहे वह कितनी ही अंधेरी हो, उसमें भी उसकी प्रकाश की किरण मौजूद अनुभव होगी। और कैसा ही बुरा से बुरा आदमी हो, कितना ही शैतान हो, फिर भी उसके अंतरतम कोर पर वह मौजूद रहेगा।

इसलिए मैं पसंद करूंगा कि हम उसे नीचे से ऊपर की तरफ उठना मानें। फर्क नहीं है। फर्क नहीं है धारणाओं में; जो जानता है उसके लिए कोई फर्क नहीं है, वह कहेगा ऊपर-नीचे दोनों बेकार की बातें हैं। लेकिन जब हम नहीं जानते हैं और यात्रा करनी है, तो उचित होगा कि हम वही मानें जिससे यात्रा आसान हो सके।

तो इसलिए मेरे मन में तो साधक के लिए उचित यही है कि वह समझे कि नीचे से शक्ति उठेगी और ऊपर की तरफ जायेगी; ऊपर की तरफ यात्रा है। इसलिए जिन्होंने ऊपर की तरफ की यात्रा को स्वीकार किया उन्होंने अग्नि को प्रतीक माना, क्योंकि वह निरंतर ऊपर की तरफ जा रही है। दीया है, आग है, वे निरंतर ऊपर की तरफ जा रहे हैं; तो उन्होंने इसको प्रतीक माना परमात्मा का। इसलिए अग्नि जो है वह बहुत गहनतम मन में हमारे परमात्मा का प्रतीक बन गयी है। उसका कुल कारण इतना था कि कुछ भी करो वह ऊपर की तरफ ही जाती है। और जितना ऊपर बढ़ती है, उतना ही थोड़ी देर में खो जाती है; थोड़ी दूर तक दिखाई पड़ती है, फिर अदृश्य हो जाती है। ऐसा ही साधक भी ऊपर की तरफ जायेगा; थोड़ी देर तक दिखाई पड़ेगा और अदृश्य हो जायेगा।

इसलिए मैं आरोहरण... अवतरण नहीं... उस पर जोर देना पसंद करूंगा।

बस, एक और पूछ लो बस, फिर उठेंगे।

शक्ति का जागरण

प्रश्न : नारगोल शिविर में आपने कहा है कि तीव्र श्वास-प्रश्वास और 'मैं कौन हूं' पूछने के प्रयत्न से अपने को पूरा थका डालना है ताकि

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

गहरे ध्यान में प्रवेश संभव हो सके। लेकिन ध्यान में प्रवेश के लिए अतिरिक्त ऊर्जा चाहिए, तो थकान की ऊर्जा-क्षीणता से ध्यान में प्रवेश कैसे संभव होगा ?

थकान का मतलब ऊर्जाहीनता नहीं है। असल में जब तुम अपने को थका डालते हो, 'अपने' से मतलब क्या ? 'अपने' से मतलब तुम्हारे वे द्वार-दरवाजे, तुम्हारी वे इंद्रियां, जिनसे तुम्हारी ऊर्जा के बहने का दैनिक क्रम – तुम्हारा जो संस्थान है, तुम अभी जो हो – उस तुम की बात नहीं कर रहा जो तुम हो सकते हो... जो तुम हो।

तो जब तुम अपने को थका डालते हो, तो दोहरी घटनाएं घटती हैं। इधर तुम अपने को थका डालते हो, तो तुम्हारी सारी इंद्रियां, तुम्हारा मन, तुम्हारा शरीर थक जाता है, और किसी तरह की ऊर्जा को वहन करने के लिए तैयार नहीं होता, इनकार कर देता है। थकान में, तुम किसी तरह की ऊर्जा को वहन करने की तैयारी नहीं दिखलाते; तुम कहते हो, अभी मैं थका हूं।

तो एक तरफ तो यह प्रयोग तुम्हारे शरीर को, तुम्हारे मन को, तुम्हारी इंद्रियों को थकाता है, और दूसरी तरफ तुम्हारी कुंडलिनी पर चोट करता है; वहां से ऊर्जा जगती है और यहां से तुम थकते हो – यह दोनों एकसाथ चलता है। समझे न ? यह एकसाथ चलता है – इधर तुम थकते हो, उधर से शक्ति जगती है। और उस शक्ति को वहन करने के योग्य भी तुम नहीं रहते... कि तुम्हारी आंख देखना चाहे तो कहती है – थकी हूं, देखने का मन नहीं; तुम्हारा मन सोचना चाहे तो मन कहता है – थका हूं, सोचने का मेरा मन नहीं; तुम्हारे पैर चलना चाहें तो पैर कहते हैं – हम थके हैं, हम चल नहीं सकते।

तो अब अगर चलना है तो बिना पैरों की कोई यात्रा तुम्हारे भीतर करनी पड़ेगी; और अगर देखना है तो बिना आंखों के देखना पड़ेगा; क्योंकि आंख थकी है। समझ रहे हैं मेरा मतलब ?

तो तुम्हारा संस्थान, तुम्हारा व्यक्तित्व थक जाता है, तो वह इनकार करता है कि हमें अभी कुछ करना नहीं है... और शक्ति जग गयी है, जो कुछ करना चाहती है, तो तत्काल वह उन दरवाजों पर चोट करेगी जो अनथके पड़े हैं, जो थके हुए नहीं हैं; जो तुम्हारे भीतर सदा वहन करने के लिए तैयार हैं, लेकिन कभी उनको मौका ही नहीं मिला था कि... तुम उनको भी मौका देते... तुम खुद ही इतने सशक्त थे कि तुम सारी शक्ति को लगा डालते थे। वह शक्ति तुम्हारी....

ये दरवाजे इनकार करेंगे कि क्षमा करो, इधर नहीं। वह जो शक्ति जग

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रही है, ये दरवाजे कहेंगे कि नहीं, हमारी कोई इच्छा देखने की नहीं है। तो जब देखने की आंख इनकार कर दे और मन देखने की इच्छा से इनकार कर दे, तब भी जो शक्ति जग गयी है देखने की, उसका क्या होगा ? तो तुम किसी, और आयाम में देखना शुरू कर दोगे; वह तुम्हारा बिलकुल नया हिस्सा होगा। वही साइकिक सेंटर तुम्हारे देखने के खुलने शुरू हो जायेंगे। तुम कुछ ऐसी चीजें देखने लगोगे जो तुमने कभीं नहीं देखीं, और ऐसी जगह से देखने लगोगे जहां से तुमने कभी नहीं देखीं। लेकिन उसको तो कभी मौका नहीं मिला था। उसको कभी मौका ही नहीं मिला था तुम्हारे भीतर। तो उसके लिए मौका बनेगा।

अतींद्रिय केंद्रों का सक्रिय होना

तो थकाने का मेरा एक जोर है। इधर शरीर को थका डालना है, मन को थका डालना है — तुम जो हो, उसको थका डालना है — ताकि तुम जो अभी हो, लेकिन तुम्हें पता नहीं, वह सक्रिय हो सके तुम्हारे भीतर। और ऊर्जा जगेगी तो वह फौरन कहेगी, काम चाहिए। और काम तुम्हारे अस्तित्व को देना पड़ेगा उसे। वह खुद काम खोज लेगी। तुम्हारे कान थके हैं, तो भी वह ऊर्जा जग गयी है, तो वह सुनना चाहेगी... तो नाद सुनेगी। उन नादों के लिए तुम्हारे कान की कोई जरूरत नहीं है, तुम्हारी आंखों की कोई जरूरत नहीं, ऐसा प्रकाश देखेगी। ऐसी सुगंध आने लगेगी जिसके लिए तुम्हारी नाक की कोई जरूरत नहीं है।

तो तुम्हारे भीतर सूक्ष्मतर इंद्रियां — या अतींद्रियां — जो भी हम नाम देना पसंद करें, वे सक्रिय हो जायेंगी। और हमारी सब इंद्रियों के साथ एक-एक अतींद्रिय का जोड़ है। याने एक कान तो वह है जो बाहर से सुनता है, और एक कान और है तुम्हारे भीतर जो भीतर सुनता है। लेकिन उसको तो कभी मौका नहीं मिला। तो जब तुम्हारा बाहर का कान थका है और ऊर्जा जगकर कान के पास आ गयी है और कान कहता है, मुझे सुनना नहीं, सुनने की कोई इच्छा ही नहीं, तब वह ऊर्जा क्या करेगी ? वह तुम्हारे उस दूसरे कान को सक्रिय कर देगी जो सुन सकेगा, जिसने कभी नहीं सुना।

इसलिए ऐसी चीजें तुम सुनोगे, ऐसी चीजें देखोगे... कि तुम किसी से कहोगे तो वह कहेगा, पागल हो ! ऐसा कहीं होता है ? किसी वहम में पड़ गये होओगे, कोई सपना देख लिया होगा, लेकिन तुम्हें तो वह इतना स्पष्ट मालूम पड़ेगा जितना कि बाहर की वीणा कभी मालूम नहीं पड़ी। वह भीतर की वीणा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इतनी स्पष्ट होगी कि तुम कहोगे, हम कैसे मानें। अगर यह झूठ है तो बाहर की वीणा का क्या होगा, वह तो बिलकुल ही झूठ हो जायेगी।

तो तुम्हारी इंद्रियों का थकना तुम्हारे अस्तित्व के नये द्वारों को खुलने के लिए प्रारंभिक रूप से जरूरी है। एक दफा खुल जाये, फिर तो कोई बात नहीं, क्योंकि फिर तो तुम्हारे पास तुलना भी होती है... कि अगर देखना ही है तो फिर भीतर ही देखो; क्योंकि इतना आनंदपूर्ण है कि क्यों फिजूल बाहर देखता रहूं। लेकिन अभी तुलना नहीं है तुम्हारे पास; अभी तो देखना है, तो बाहर ही देखना है — एक ही विकल्प है। एक बार तुम्हारी भीतर की आंख भी देखने लगे, तब तुम्हारे सामने विकल्प साफ है। तो जब भी देखने का मन होगा, तुम भीतर देखना चाहोगे। क्यों मौका चूकना। बाहर देखने से क्या मतलब!

राबिया के जीवन में उल्लेख है कि सांझ को सूरज ढल रहा है और वह अंदर अपने झोपड़े में बैठी है। हसन नाम का फकीर उससे मिलने आया है। सूरज ढल रहा है और बड़ी सुंदर सांझ है। तो हसन उससे चिल्लाकर कहता है कि राबिया, तू क्या कर रही है भीतर? बहुत सुंदर सांझ है; इतना सुंदर सूर्यास्त मैंने कभी देखा नहीं; ऐसा सूर्य दोबारा देखने नहीं मिलेगा, बाहर आ!

तो राबिया उससे कहती है कि पागल, कब तक बाहर के सूर्य को देखता रहेगा! मैं तुझसे कहती हूं, तू भीतर आ; क्योंकि हम उसे देख रहे हैं जिसने सूर्य को बनाया है; और हम ऐसे सूर्य देख रहे हैं जो अभी अनबने हैं और कभी बनेंगे — तो अच्छा हो कि तू भीतर आ!

अब वह हसन नहीं समझ पाया कि वह क्या कह रही है। पर यह औरत बहुत अदभुत है। दुनिया में जिन स्त्रियों ने कुछ किया है, उन दो-चार स्त्रियों में एक है वह राबिया। पर वह हसन नहीं समझ पाया। वह उससे फिर कह रहा है कि देख, सांझ चूकी जा रही है। और राबिया कह रही है, पागल, तू सांझ में ही चूक जायेगा; इधर भीतर बहुत कुछ चूका जा रहा है। वह बिलकुल दो तल पर बात हो रही है, क्योंकि वह दो अलग इंद्रियों की बात हो रही है। लेकिन अगर दूसरी इंद्रिय का तुम्हें पता नहीं, तो भीतर का कोई मतलब ही नहीं होता, बाहर का ही सब मतलब होता है। इस अर्थ में मैंने कहा कि वे थक जायें, तो शुभ है।

थकाने का अर्थ ऊर्जाहीनता नहीं है

प्रश्न : तो इस प्रयोग में थकाने का अर्थ ऊर्जाहीनता नहीं है!

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नहीं, बिलकुल नहीं, ऊर्जा तो जग रही है। ऊर्जा तो जग रही है; ऊर्जा को जगाने के लिए ही सारा काम चल रहा है – हां, इंद्रियां थक रही हैं। इंद्रियां ऊर्जा नहीं हैं, सिर्फ ऊर्जा के बहने के द्वार हैं। यह दरवाजा मैं नहीं हूं, मैं तो और हूं। इस दरवाजे से बाहर-भीतर आता-जाता हूं। दरवाजा थक रहा है, और दरवाजा कह रहा है – कृपा करके हमसे बाहर मत जाओ, बहुत थके हुए हैं। लेकिन कहां जाओगे, रहना तो भीतर पड़ेगा! दरवाजा कह रहा है, हम बहुत थके हुए हैं, अब कृपा करो कि मत जाओ बाहर; क्योंकि जाओगे तो हमें फिर काम में लगना पड़ेगा। आंख कह रही है कि हम थक गये हैं, अब इधर से यात्रा मत करो।

इंद्रियां थक रही हैं। इनका थकना प्राथमिक रूप से बड़ा सहयोगी है... उस अर्थ में।

तादात्म्य के कारण थकान

प्रश्न : यह ऊर्जा यदि अधिक है तो थकान नहीं लगनी चाहिए, ताजगी लगनी चाहिए!

शुरू में लगेगी। धीरे-धीरे तो तुम्हें बहुत ताजगी लगेगी, जैसी ताजगी तुमने कभी नहीं जानी। लेकिन शुरू में थकान लगेगी। शुरू में थकान इसलिए लगेगी कि तुम्हारी आइडेंटिटि (तादात्म्य) इन इंद्रियों से है। इन्हीं को तुम समझते हो 'मैं'। तो जब इंद्रियां थकती हैं, तुम कहते हो, मैं थक गया। इससे तुम्हारी आइडेंटिटि टूटनी चाहिए न! जिस दिन...

ऐसा मामला है कि तुम्हारा घोड़ा थक गया, तुम घोड़े पर बैठे हो, लेकिन तुम सदा से समझते थे कि मैं घोड़ा हूं, अब घोड़ा थक गया, अब तुमने कहा, हम मरे, हम थक गये। वह हमारे थकने का जो मतलब है, हमारी आइडेंटिटि जिससे है, वही हम कहते हैं। मैं घोड़ा हूं, तो मैं थक गया।

जिस दिन तुम जानोगे कि मैं घोड़ा नहीं हूं, उस दिन तुम्हारी फ्रेशनेस (ताजगी) बहुत और तरह से आनी शुरू होगी। और तब तुम जानोगे कि इंद्रियां थक गयी हैं, लेकिन मैं कहां थका! बल्कि इंद्रियां चूंकि थक गयी हैं और काम नहीं कर रही हैं इसलिए बहुत सी ऊर्जा जो उनसे विकीर्ण होकर व्यर्थ हो जाती थी, वह तुम्हारे भीतर संरक्षित हो गयी है – और पुंज बन गयी है... और तुम ज्यादा जिसको कहना चाहिए... 'कंज़र्वेशन ऑफ इनर्जी' (ऊर्जा-संचय) अनुभव करोगे... कि तुमने बहुत ऊर्जा बचायी जो तुम्हारी संपत्ति बन गयी है। और चूंकि बाहर नहीं गयी, इसलिए तुम्हारे रोएं-रोएं, पोर-पोर में भीतर फैल गयी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है। लेकिन इससे तुम एक हो, यह तुम्हें जब ख्याल आना शुरू होगा, तभी तुम्हें फर्क लगेगा।

ध्यान से ताजगी

तो धीरे-धीरे तो ध्यान के बाद बहुत ही ताजगी मालूम होगी। ताजगी कहना गलत है, तुम ताजगी हो जाओगे। याने ऐसा नहीं कि ऐसा लगेगा कि ताजगी मालूम हो रही है, तुम ताजगी हो जाओगे – यू विल बी द फ्रेशनेस। लेकिन वह तो आइडेंटिटि बदलेगी तब। अभी तो घोड़े पर बैठे हो, बहुत मुश्किल से, जिंदगी भर यही समझा है कि मैं घोड़ा हूं। सवार हूं, इसको समझने में वक्त लगेगा। और शायद घोड़ा थक कर गिर पड़े, तो आसानी हो जाये तुम्हें। अपने पैर से चलना पड़े थोड़ा, तो पता चले कि मैं तो अलग हूं। लेकिन घोड़े पर चलते-चलते ख्याल ही भूल गया है कि मैं भी चल सकता हूं। ऐसा है, इसलिए थकेगा घोड़ा तो अच्छा होगा।

बंबई, रात्रि, दिनांक 1 जुलाई, 1970.

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तीसरी प्रश्नोत्तर चर्चा

श्वास की कीमिया

प्रश्न : रूस के बहुत बड़े अध्यात्मविद् और मिस्टिक जार्ज गुरजिएफ ने अपनी आध्यात्मिक खोज-यात्रा के संस्मरण 'मीटिंग विद् द रिमार्केबल मेन' नामक पुस्तक में लिखे हैं। एक दरवेश फकीर से उनकी काफी चर्चा योग के प्राणायाम व आसनों के संबंध में हुई, जिससे वे बड़े प्रभावित भी हुए। दरवेश ने उन्हें किसी भी प्रकार के श्वास के अभ्यास को न करने का सुझाव दिया। दरवेश का कहना था कि प्राकृतिक श्वास प्रणाली में कुछ भी परिवर्तन करने से सारा व्यक्तित्व अस्त-व्यस्त हो जाता है और उसके घातक परिणाम होते हैं। आपका इस कथन पर क्या मत है ?

जो वे कह रहे हैं प्राणायाम और कृत्रिम श्वास के लिए, उसमें भी कुछ बातें सच हैं। असल में ऐसा कोई असत्य नहीं होता जिसमें कि कुछ सत्य न हो; होता ही नहीं। अच्छा, वह जो उसमें सत्य होता है वही प्रभाव लाता है और उसके साथ वह जो असत्य है वह भी सरक जाता है, इसलिए तुम्हें पता नहीं चलता कि क्या हो गया। अब इसमें बहुत सच्चाई है; कि जहां तक बने, साधारणतः जीवन का जो सहज क्रम है, उसमें बाधा नहीं डालनी चाहिए। उपद्रव होने का डर है। तो जो व्यवस्था चल रही है सहज, आपकी श्वास

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

की – उठने की, बैठने की, चलने की – जहां तक बने उसमें बाधा नहीं डालना उचित है, क्योंकि बाधा डालने से ही परिवर्तन शुरू होंगे।

तो यह ध्यान रहे कि हानि भी एक परिवर्तन है और लाभ भी एक परिवर्तन है; दोनों ही परिवर्तन हैं। तो आप जैसे हैं, अगर ऐसे ही रहना है तब तो कुछ भी छेड़छाड़ करनी उचित नहीं है; लेकिन अगर कुछ भी... जाना है कहीं भी, कोई भी परिवर्तन करना है, कोई भी ट्रांसफॉर्मेशन (रूपांतरण) तो हानि का खतरा लेना पड़ेगा। वह जो... हानि का खतरा तो है ही... कि आपकी जो श्वास चल रही है अभी, अगर इसको और व्यवस्था दी जाये तो आपके पूरे व्यक्तित्व में अंतर पड़ेंगे। लेकिन अगर आप अपने व्यक्तित्व से राजी हैं, और सोचते हैं कि जैसा है ठीक है, तब तो उचित है – लेकिन, अगर आप सोचते हैं कि यह व्यक्तित्व पर्याप्त नहीं मालूम होता, तो अंतर करने पड़ेंगे।

श्वास परिवर्तन से व्यक्तित्व में रूपांतरण

और तब श्वास पर अंतर सबसे कीमती बात है। और ये जो... जैसे ही श्वास पर आप अंतर करेंगे वैसे ही आपके भीतर बहुत सी चीजें टूटने और बहुत सी नयी चीजें बननी शुरू हो जायेंगी। अब हजारों प्रयोग के बाद यह तय किया गया है कि वह श्वास के किस प्रयोग से कौन सी चीजें बनेंगी कौन सी टूटेंगी। और अब करीब-करीब सुनिश्चित बात हो गयी है। जैसे कुछ तो हम सबके अनुभव में भी होता है। जैसे, जब आप क्रोध में होते हैं तो श्वास बदल जाती है; वह वैसी नहीं रहती, जैसी थी। अगर कभी बहुत ही साइलेंस (मौन) अनुभव होगा तो भी श्वास बदल जायेगी; वह वैसी नहीं रहेगी, जैसी थी। अगर आपको पता चल गया है कि साइलेंस (मौन) में श्वास कैसी हो जाती है, तो आप अगर वैसी श्वास कर सकें तो साइलेंस पैदा हो जायेगी; ये जो दोनों हैं, ये दोनों इन्टर कनेक्टेड (अंतर संबंधित) हैं।

जब मन कामातुर होगा तो श्वास बदल जायेगी। अगर मन कामातुर हो और आप श्वास को न बदलने दें, तो आप फौरन पायेंगे कि कामातुरता विदा हो गयी। वह काम विलीन हो जायेगा, वह टिक नहीं सकता; क्योंकि बॉडी (शरीर) के मैकेनिज़्म में सारी चीजों में तारतम्य होना चाहिए, तभी कुछ हो सकता है। अगर क्रोध जोर से आ रहा है और उस वक्त आप श्वास धीमी लेने लगें, तो क्रोध टिक नहीं सकता; क्योंकि श्वास में उसको टिकने की जगह नहीं मिलेगी।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

श्वास और मन के वैज्ञानिक नियम

तो श्वास के जो अंतर हैं, वे बड़े कीमती हैं। और श्वास के अंतर से आपके मन में अंतर पड़ना शुरू होगा। और जब साफ हो चुका है... और बहुत वैज्ञानिक रूप से साफ हो चुका है : श्वास की कौन सी गति पर मन की क्या गति होगी, तब खतरे नहीं हैं। खतरे थे उनको, जिन्होंने प्रारंभिक प्रयोग किये हैं; खतरा आज भी है उसको, जो जीवन की किसी भी दिशा में प्रारंभिक प्रयोग करता है। लेकिन जब प्रयोग साफ हो जाते हैं तो वे बहुत साईंटिफिक (वैज्ञानिक) हैं। यानी यह असंभव है कि एक आदमी श्वास को शांत रखे और क्रोध कर ले। यह असंभव है, ये दोनों बातें एकसाथ नहीं घट सकतीं। इससे उलटा भी संभव है कि अगर आप उसी तरह की श्वास लेने लगें जैसे आप क्रोध में लेते हैं, तो आप थोड़ी देर में पायेंगे कि आपके भीतर क्रोध जग गया। तो प्राणायाम ने आपके चित्त के परिवर्तन के लिए बहुत से उपाय खोजे हैं।

प्राकृतिक और अप्राकृतिक श्वास

और दूसरी बात यह है कि जिसको हम कह रहे हैं आर्टिफिशियल ब्रीदिंग (कृत्रिम श्वास) और जिसको हम नेचरल (सहज श्वास) कह रहे हैं, यह फासला भी समझने जैसा है... जिसको आप नेचरल कह रहे हैं, वह भी नेचरल नहीं है; वह ब्रिदिंग नेचरल नहीं है। बल्कि बहुत ठीक से समझा जाये तो वह ऐसी आर्टिफिशियल ब्रीदिंग है जिसके आप आदी हो गये हैं; जिसको आप बहुत दिन से कर रहे हैं इसलिए आदी हो गये हैं; बचपन से कर रहे हैं इसलिए आदी हो गये हैं। आपको पता नहीं है कि नेचरल ब्रीदिंग क्या है ?

इसलिए दिन भर आप एक तरह से लेते हैं श्वास, रात में आप दूसरी तरह से लेते हैं। क्योंकि दिन में जो ली थी वह आर्टिफिशियल थी, और इसलिए रात में नेचरल शुरू होती है जो कि आप की हैबिट (आदत) के बाहर है।

तो रात की ही श्वास की प्रक्रिया ज्यादा स्वाभाविक है बजाय दिन के। दिन में तो हमने आदत डाली है ब्रीदिंग की, और आदत के हमारे कई कारण हैं। जब आप भीड़ में चलते हैं तब आप एहसास करें, जब आप अकेले में बैठते हैं तब एहसास करें, तो आप पायेंगे कि आपकी ब्रीदिंग बदल गयी। भीड़ में आप और तरह से श्वास लेते हैं, अकेले में और तरह से। क्योंकि भीड़ में आप टेन्स (तने हुए) होते हैं। चारों तरफ लोग हैं, तो आपकी ब्रीदिंग (श्वास-प्रश्वास) छोटी हो जायेगी; ऊपर से जल्दी लौट जायेगी; पूरी गहरी नहीं होगी। जब आप आराम से बैठे हैं, अकेले हैं, तो वह पूरी गहरी होगी।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इसलिए जब रात आप सो गये हैं तो वह पूरी गहरी होगी।

पेट से श्वास लेना निर्दोषता का लक्षण

तो जिसको हम कह रहे हैं नेचरल (स्वाभाविक), वह नेचरल नहं है – सिर्फ कंडीशंड आर्टिफिशियल (संस्कारित-कृत्रिम) है; निश्चित हो गयी है आदत हो गयी है। इसलिए बच्चे एक तरह से ब्रीदिंग ले रहे हैं। अगर बच्चे को सुलाएं, तो आप पायेंगे उसका पेट हिल रहा है, और आप ब्रीदिंग ले र हैं तो छाती हिल रही है। बच्चा नेचरल ब्रीदिंग ले रहा है। अगर बच्चा जि ढंग से श्वास ले रहा है, आप लें, तो आपके मन में वही स्थितियां पैदा होन शुरू हो जायेंगी जो बच्चे की हैं। उतनी इनोसेंस (निर्दोषता) आनी शुरू ह जायेगी जितनी बच्चे की। या अगर आप इनोसेंट (निर्दोष चित्त) हो जायें तो आपकी ब्रीदिंग पेट से शुरू हो जायेगी।

इसलिए जापान में और चीन में बुद्ध की जो मूर्तियां हैं, वे उन्होंने भिन् बनाई हैं; वे हिंदुस्तानी मूर्तियों से भिन्न हैं। हिंदुस्तान में बुद्ध का पेट छोट है, जापानी और चीनी मुल्कों में बुद्ध का पेट बड़ा है; छाती छोटी है। ह बेहूदी लगती हैं। हमें बहूदी लगती हैं कि बेडौल कर दिया। लेकिन वही ठी है। क्योंकि बुद्ध जैसा शांत आदमी जब श्वास लेगा तो वह पेट से ही लेगा उतना इनोसेंट आदमी छाती से श्वास नहीं ले सकता, इसलिए पेट बड़ा ह जायेगा। वह पेट जो बड़ा है, वह प्रतीक है। हां, वह प्रतीक है। सब ज़े मास्टर्स का पेट बड़ा है। वह प्रतीक है। वह उतना बड़ा न भी रहा हो, लेकि वह बड़ा ही डिपिक्ट (चित्रित) किया जायेगा। उसका कारण है कि वह श्वा जो है, वह पेट से ले रहा है; वह छोटे बच्चे की तरह हो गया है।

तो जब हमें यह ख्याल में साफ हो गया हो, तो नेचरल ब्रीदिंग की तर हमें कदम उठाने चाहिए। हमारी ब्रीदिंग आर्टिफिशियल है। वह दरवेश गल कह रहा है कि आप आर्टिफिशियल ब्रीदिंग मत करो। आर्टिफिशियल ब्रीदि हम कर रहे हैं। तो जैसे ही हमारी समझ बढ़ेगी और हम नेचरल ब्रीदिंग व तरफ कदम उठायेंगे... और जितनी नेचरल ब्रीदिंग हो जायेगी, उतनी ही जीव की अधिकतम संभावना हमारे भीतर से प्रगट होनी शुरू होगी।

और यह भी समझने जैसा है कि कभी-कभी एकदम आकस्मिक रूप अप्राकृतिक ब्रीदिंग करने के भी बहुत फायदे हैं। और एक बात तो साफ है कि जहां बहुत फायदे हैं वहीं बहुत हानियां हैं। एक आदमी दुकानदारी क रहा है तो जितनी हानियां हैं उतने फायदे हैं। एक आदमी जुआ खेल र

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है तो जितने फायदे हैं उतनी हानियां हैं। क्योंकि फायदे और हानि का अनुपात तो वही होनेवाला है। तो वह बात तो ठीक कह रहा है कि बहुत खतरे हैं, लेकिन आधी बात कह रहा है। बहुत संभावनाएं भी हैं वहां। वह जुआरी का दांव है।

तो अगर हम कभी किसी क्षण में थोड़ी देर के लिए बिलकुल ही अस्वाभाविक ...अस्वाभाविक इस अर्थ में कि जिसको हमने नहीं किया है अभी तक, इस तरह की ब्रीदिंग करें, तो हमें अपने ही भीतर नयी स्थितियों का पता चलना शुरू हो जाता है। उन स्थितियों में हम पागल भी हो सकते हैं, और उन स्थितियों में हम मुक्त भी हो सकते हैं – विक्षिप्त भी हो सकते हैं, विमुक्त भी हो सकते हैं। और चूंकि उस स्थिति को हम ही पैदा कर रहे हैं, इसलिए किसी भी क्षण उसे रोका जा सकता है। इसलिए खतरा नहीं है। खतरे का डर तब है, जब कि आप रोक न सकें। जब आपने ही पैदा किया है तो आप तत्काल रोक सकते हैं। और आपको प्रतिपल अनुभव होता है कि आप किस तरफ जा रहे हैं। आप आनंद की तरफ जा रहे हैं कि दुख की तरफ जा रहे हैं कि खतरे में जा रहे हैं कि शांति में जा रहे हैं, वह आपको बहुत साफ एक-एक कदम पर मालूम होने लगता है।

अजनबी स्थिति के कारण मूर्छा पर चोट

और जब बिलकुल ही आकस्मिक रूप से, तेजी से ब्रीदिंग बदली जाये, तो आपके भीतर की पूरी की पूरी स्थिति बदलती है एकदम से। जो हमारी सुनिश्चित आदत हो गयी है श्वास लेने की, उसमें हमें कभी पता नहीं चल सकता है कि मैं शरीर से अलग हूं; उसमें सेतु बन गया है, ब्रिज बन गया है। शरीर और आत्मा के बीच श्वास की एक निश्चित आदत ने एक ब्रिज बना दिया है। उसके हम आदी हो गये हैं। याने वह मामला ऐसा ही है कि जैसे आप रोज अपने घर जाते हैं और कार का आप व्हील (पहिया) घुमा लेते हैं और आपको कभी न सोचना पड़ता है, न विचार करना पड़ता है; आप अपने घर पर जाकर खड़े हो जाते हैं। लेकिन अचानक ऐसा हो कि व्हील आप दायें घुमाएं और व्हील बायें मुड़ जाये... कि जो रास्ता रोज आपका था, अचानक आप पायें कि वह रास्ता आज पूरा का पूरा घूम गया है और दूसरा रास्ता उसकी जगह आ गया है, तब एक स्ट्रेंजनेस (अजनबीपन) की हालत में आप पहुंचेंगे, और पहली दफा आप होश से भर जायेंगे। वह जो होश से भर जायेंगे आप...

स्ट्रेंजनेस जो है न, किसी भी चीज का अजनबीपन, वह आपकी मूर्छा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

को तोड़ देता है तत्काल । व्यवस्थित दुनिया, जहां सब रोज वही हुआ है, वहां आपकी मूर्छा कभी नहीं टूटती; आपकी मूर्छा टूटती है वहां, जहां अचानक कुछ हो जाता है ।

जैसे कि मैं बोल रहा हूं, इसमें आपकी मूर्छा न टूटेगी । अचानक आप पायें कि यह टेबल (मेज़) बोलने लगी, तो यहां एक आदमी भी बेहोश नहीं रह जायेगा । उपाय नहीं है बेहोश रहने का । ये टेबल अचानक बोल उठे – एक शब्द बोले – मैं हजार शब्द बोल रहा हूं तो भी आप मूर्छित सुनेगें । लेकिन यह टेबल एक शब्द बोल दे तो आप सब इतनी अवेयरनेस (होश) में पहुंच जायेंगे जितना आप कभी नहीं गये थे; क्योंकि वह स्ट्रेंज (अजनबी) है, और स्ट्रेंज आपके भीतर की सब स्थिति तोड़ देता है ।

तो श्वास के अनूठे अनुभव जब स्ट्रेंजनेस (अनोखेपन में) ले जाते हैं, तो आपके भीतर बड़ी नयी संभावनाएं होती हैं और आप होश उपलब्ध कर पाते हैं और कुछ देख पाते हैं । और अगर कोई आदमी होशपूर्वक पागल हो सके, तो इससे बड़ा कीमती अनुभव नहीं है... होशपूर्वक अगर पागल हो सके । हां, यह पॉसिबल (संभव) है, इसीलिए तो इससे कीमती अनुभव नहीं है ।

ध्यान-प्रयोग में अजनबी, अज्ञात स्थितियों का बनना

तो यह जो मैं प्रयोग कह रहा हूं, यह प्रयोग जो है ऐसा है कि भीतर आपका पूरा होश है और बाहर आप बिलकुल पागल हो गये हैं । जो कि आप कोई भी आदमी कर रहा होता तो आप कहते, पागल है । भीतर तो आपको पूरा होश है और आप देख रहे है कि मैं नाच रहा हूं । और आप जानते हैं कि अगर यह कोई भी दूसरा आदमी कर रहा होता तो मैं कहता कि यह पागल है । अब आप अपने को पागल कह सकते हैं, लेकिन दोनों बातें एक साथ हो रही हैं – आप यह जान भी रहे हैं कि यह हो रहा है ।

इसलिए आप पागल भी नहीं हैं; क्योंकि आप होश में पूरे हैं और फिर भी वही हो रहा है जो पागल को होता है । इस हालत में आपके भीतर एक ऐसा स्ट्रेंज मोमेंट (अनोखा क्षण) आता है कि आप अपने को अपने शरीर से अलग कर पाते हैं । कर नहीं पाते, हो ही जाता है । अचानक आप पाते हैं कि सब तालमेल टूट गया । जहां कल रास्ता जुड़ता था, वहां नहीं जुड़ता और जहां कल आपका ब्रिज जोड़ता था वहां नहीं जुड़ता; जहां व्हील घूमता था वहां नहीं घूमता । सब विसंगत हो गया है । वह जो रेलेवेन्सी (व्यवस्था) थी रोज-रोज की, वह टूट गयी है; कहीं कुछ और हो रहा है – आप हाथ को नहीं घुमाना

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चाह रहे हैं, वह घूम रहा है; आप नहीं रोना चाह रहे हैं और आंसू बहे जा रहे हैं; आप चाहते हैं कि यह हंसी रुक जाये, लेकिन यह नहीं रुक रही है।

तो ऐसे स्ट्रेंज मोमेंट्स (अनोखे क्षण) पैदा करना अवेयरनेस (होश) के लिए बड़े अदभुत हैं। और श्वास से जितने जल्दी ये हो जाते हैं और किसी प्रयोग से नहीं होते। और प्रयोग में वर्षों लगाने पड़ें, श्वास में दस मिनट में हो भी सकता है। क्योंकि श्वास का इतना गहरा संबंध है हमारे व्यक्तित्व से कि उस पर जरा भी लगी चोट सब तरफ प्रतिध्वनित हो जाती है।

अव्यवस्थित श्वास का प्रयोग कीमती

तो श्वास के जो प्रयोग थे, वे बड़े कीमती थे। लेकिन प्राणायाम के जो व्यवस्थित प्रयोग हैं उन पर मेरा बहुत आग्रह नहीं है। क्योंकि जैसे ही वे व्यवस्थित हो जाते हैं, वैसे ही उनकी स्ट्रेंजनेस (अनोखापन) चली जाती है। जैसे एक आदमी एक-दो श्वास इस नाक से लेता है, फिर दो इस से लेता है, फिर इतनी देर रोकता है, फिर इतनी देर निकालता है, इसका अभ्यास कर लेता है, तो यह भी उसके अभ्यास का हिस्सा हो जाने के कारण सेतु बन जाता है, मेथाडिकल (विधिवत) हो जाता है।

तो मैं जिस श्वास को कह रहा हूं, बिलकुल नॉनमेथाडिकल (बिना नियम) है, एब्सर्ड (असंगत) है; उसमें न रोकने का सवाल है, न छोड़ने का सवाल है। वह एकदम से स्ट्रेंज फीलिंग (अनोखा भाव) पैदा करने की बात है... कि आप एकदम से ऐसी झंझट में पड़ जायें कि इस झंझट को आप व्यवस्था न दे पायें। अगर व्यवस्था दे दी तो आपका मन बहुत होशियार है तो वह उसमें भी राजी हो जायेगा कि ठीक है : वह इस नाक को दबा रहा है, इसको खोल रहा है, इतनी निकाल रहा है, उतनी बंद कर रहा है, तो उसका कोई मतलब नहीं। वह एक नया सिस्टम (व्यवस्था) हो जायेगा। लेकिन स्ट्रेंजनेस, अजनबीपन उसमें नहीं आयेगा।

और आपको, मैं चाहता हूं कि किसी क्षण में, आपकी जो भी रूट्स हैं, जितनी भी जड़ें हैं, और जितना भी आपका अपना परिचय है, वह सब का सब इसी क्षण में एकदम उखड़ जाये – एक दिन आप अचानक पायें कि न कोई जड़ है मेरी, न मेरी कोई पहचान है, न मेरी कोई मां है, न मेरा कोई पिता है, न कोई भाई है; न यह शरीर मेरा है – आप एकदम ऐसी एब्सर्ड (निरर्थक) हालत में पहुंच जायें जहां कि आदमी पागल होता है। लेकिन अगर आप इस हालत में अचानक पहुंच जायें, आपकी बिना किसी कोशिश के, तो

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आप पागल हो जायेंगे। और अगर आप अपनी ही कोशिश से इसमें पहुंचे, तो आप कभी पागल नहीं हो सकते, क्योंकि यह आपके हाथ में है, आप अभी इस सेकेंड वापिस लौट सकते हैं।

ध्यान प्रयोग द्वारा पागलपन से मुक्ति

तो मेरा तो मानना है कि अगर हम पागल को भी इतनी श्वास ... मैं यहां चाहूंगा कि यह प्रयोग करने जैसा है... अगर हम पागल को भी यह श्वास का प्रयोग करवायें तो उसके स्वस्थ हो जाने की पूरी संभावना है। क्योंकि अगर वह पागलपन को भी देख सके कि मैं पैदा कर लेता हूं, तो वह यह भी जान पायेगा कि मैं मिटा भी सकता हूं। अब यह पागलपन उसके ऊपर उतर आया है, वह उसके हाथ की बात नहीं है।

इसलिए यह जो प्रयोग है, इसके खतरे हैं, लेकिन खतरे के भीतर उतनी ही संभावनाएं हैं। और पागल भी अगर इसको करे तो ठीक हो सकता है। और इधर मेरा ख्याल है कि इसको... पागल के लिए भी इस प्रयोग को करवाने जैसा है। और जो आदमी इस प्रयोग को करता है उसकी गारंटी है कि वह कभी पागल नहीं हो सकता। वह इसलिए पागल नहीं हो सकता कि पागलपन को पैदा करने की उसके पास खुद ही कला है। जिस चीज को वह ऑन (चालू) करता है उसको ऑफ (बंद) भी कर लेता है। इसलिए आप उसको कभी पागल नहीं बना सकते। यानी किसी दिन ऐसा नहीं हो सकता कि वह अपने बस के बाहर हो जाये, क्योंकि उसने जो बस के बाहर था, उसको भी बस में करके देख लिया है।

जिस श्वास की बात मैं कह रहा हूं, वह श्वास बिलकुल ही नॉन रिदमिक (लयहीन) नॉन मेथाडिकल (विधिशून्य) है। और कल जैसा किया था, वैसा भी आज नहीं कर सकते; क्योंकि उसका कोई मैथड (विधि) ही नहीं है। कल जैसा किया था, वैसा भी आज नहीं कर सकते; अभी शुरू जैसा किया था, अंत करते तक भी वैसा नहीं कर सकते। वह जैसी होगी... और ख्याल सिर्फ इतना है कि आप की सब जो कंडीशनिंग है माइंड की (आदतें हैं मन की) वह ढीली पड़ जाये।

वह जो दरवेश कह रहा है, वह ठीक कह रहा है कि कई नट और कई बोल्ट ढीले पड़ जायेंगे। वे करने हैं ढीले। वे नट-बोल्ट बहुत सख्ती से पकड़े हुए हैं और आत्मा और शरीर के बीच फासला नहीं हो पाता उनकी वजह से। वे एकदम से ढीले पड़ जायें तो ही आपको पता चले कि कुछ और भी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है भीतर, जो जुड़ा था और अलग हो गया है। लेकिन, चूंकि वह श्वास की चोट से ही ढीले हुए हैं, वह श्वास की चोट के पड़ते ही अपने-आप कस जाते हैं; उनको अलग से कसने के लिए कोई इंतजाम नहीं करना पड़ता। उनका इतंजाम करने की कोई जरूरत नहीं है।

हां, अगर श्वास पागलपन की हो जाये आपके भीतर... कि आपके बस के बाहर हो, ऑबसेशन (ग्रस्तता) बन जाये और चौबीस घंटे उस ढंग से चलने लगे, तो फिर वह स्थिति खराब हो जा सकती है। लेकिन, कोई घंटे भर के लिए अगर यह प्रयोग कर रहा है... और प्रयोग शुरू करता है और प्रयोग बंद कर देता है, तो जैसे ही वह प्रयोग बंद करता है, वैसे ही वे सब के सब अपनी जगह वापस बैठ जाते हैं। आपको अनुभव भर रह जाता है पीछे कि एक अनुभव हुआ था... जब मैं अलग था और अब सब चीजें फिर अपनी जगह सेट (व्यवस्थित) हो गयी हैं। लेकिन अब सेट हो जाने के बाद भी आप जानते हैं कि मैं अलग हूं – जुड़ गया हूं, संयुक्त हूं, लेकिन फिर भी अलग हूं।

श्वास के बिना तो काम ही नहीं हो सकता है। यह बात वह ठीक कह रहा है कि खतरे हैं। तो खतरे तो हैं ही, और जितने बड़े जीवन की हमारी खोज है उतने बड़े खतरे के लेने की हमें तैयारी होनी चाहिए। फर्क मैं इतना ही करता हूं कि एक तो वह खतरा है जो हम पर अचानक आ जाता है, उससे हम बच नहीं सकते; और एक वह खतरा है जो हम पैदा करते हैं, उससे हम कभी भी बच सकते हैं। यानी अब इतना मूवमेंट (हलन-चलन) होता है शरीर का – इतना – रो रहा है कोई, चिल्ला रहा है, नाच रहा है, और एक सेकेंड... उसको कहो कि 'नहीं', तो सब गया। चूंकि यह क्रियेटिड है, यह उसने ही पैदा किया है सब, यह एक बात है। और यह अपने-आप हो जाता है जब। तो एक आदमी सड़क पर खड़े होकर नाच रहा है। खुद ने ही, उसने कुछ किया है, अब वह रोक भी नहीं सकता; क्योंकि कहां से यह आया, कैसे यह हुआ, उसे कुछ पता नहीं।

तो मेरी तो अपनी समझ यह है कि यह आज नहीं कल, जो मैं कह रहा हूं, एक बहुत बड़ी थेरेपी (चिकित्सा) सिद्ध होगी। और आज नहीं कल, पागल को स्वस्थ करने के लिए यह अनिवार्य रास्ता बन जायेगा। और अगर हम प्रत्येक बच्चे को स्कूल में इसे करा सकें तो हम उस बच्चे के पागल नहीं होने की व्यवस्था किये दे रहे हैं; वह कभी पागल नहीं हो सकता। वह इम्यून (रोग-निरोधित) हो जायेगा, एक ...और वह मालिक हो जायेगा – इन सारी स्थितियों का मालिक हो जायेगा।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विभिन्न सूफी विधियां

लेकिन, जिस दरवेश से उसकी बात हुई है – गुरजिएफ की – वे दूसरे पथ के राही हैं। उन्होंने श्वास का कोई प्रयोग नहीं किया। उन्होंने स्ट्रेंजनेस (अनोखापन) दूसरी तरह से पैदा की। और यही तकलीफ है। तकलीफ क्या है कि एक रास्ते को जाननेवाला आदमी तत्काल दूसरे रास्ते को गलत कह देगा। लेकिन कोई भी चीज किसी रास्ते के संदर्भ में गलत और सही होती है।

एक बैलगाड़ी के चक्के में एक डंडी लगी हुई है, कील लगी हुई है, एक कारवाला कह सकता है कि यह बिलकुल बेकार है – लेकिन कार के संदर्भ में बेकार होगी। वह बैलगाड़ी में उतनी ही सार्थक है जितनी कार में कोई चीज सार्थक हो।

तो किसी चीज का गलत और सही होना एब्सोल्यूट (परम) अर्थ नहीं रखता। लेकिन हमेशा यह भूल होती है।

रात्रि-जागरण

अब जैसे कि सूफी दरवेश है, वह दूसरे ढंग से इस तरफ पहुंचा है; उसके ढंग और हैं। जैसे सूफी जो है, वह निद्रा पर चोट करेगा, श्वास पर नहीं। तो नाइट विजिल्स (रात्रि-जागरण) की बड़ी कीमत है दरवेश के लिए। महीनों जागता रहेगा; लेकिन जागने से भी वह स्ट्रेंजनेस पैदा हो जाती है जो श्वास से पैदा होती है। अगर महीने भर जाग जायें तो आप उसी तरह पागल हालत में पहुंच जाते हैं जिस हालत में श्वास से पहुचेंगे।

एक तो नींद पर वह चोट करेगा, क्योंकि नींद बड़ी स्वाभाविक व्यवस्था है। उस पर चोट करने से फौरन आपके भीतर विचित्रताएं शुरू हो जाती हैं। लेकिन उसमें भी खतरे इतने ही हैं, बल्कि इससे ज्यादा हैं, क्योंकि लंबा प्रयोग करना पड़े। एक दिन की नींद के तोड़ने से नहीं होता वह – महीने भर, दो महीने की नींद तोड़ देनी पड़े। लेकिन दो महीने की नींद तोड़कर अगर कुछ हो जाये तो एक सेकेंड में आप बंद नहीं कर सकते उसे। लेकिन दस मिनट की श्वास से कुछ भी हो जाये तो एक सेकेंड में बंद हो जाता है। दो महीने नींद अगर नहीं ली है, तो आप अगर आज सो भी जाओ, तो भी दो महीने की नींद आज पूरी नहीं होनेवाली। और दो महीने जो नहीं सोया है, वह आज शायद सो भी न पाये; क्योंकि वह जरा खतरनाक जगह से उसने काम शुरू किया है।

तो नाइट विजिल (रात्रि-जागरण) का बड़ा उपयोग है; फकीर रात-

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रातभर जागकर प्रतीक्षा करेंगे कि क्या होता है। तो उन्होंने उससे शुरू किया है। दूसरा उन्होंने नृत्य से भी शुरू किया है।

नृत्य का उपयोग

नृत्य का भी उपयोग किया जा सकता है शरीर से अलग होने के लिए। लेकिन वह भी उनके प्रयोग ऐसे ही हैं कि अगर नृत्य सीखकर किया आपने, तो नहीं हो सकेगा। जैसा कि मैंने कहा कि प्राणायाम से नहीं होगा, क्योंकि वह व्यवस्थित है। अब एक आदमी ने अगर नृत्य सीख लिया, तो वह शरीर के साथ एक हो जाता है। नहीं, आप, जो कि नाच जानते नहीं, आप से मैं कहूं – नाचिये ! और आप एकदम नाचना शुरू कर दें – कूदना-फांदना – तो हो जायेगा; हो जायेगा इसलिए कि इतना स्ट्रेंज (अनोखा) मामला है... कि आप इसके साथ अपने को एक न कर पायेंगे कि यह मैं... मैं नाच रहा हूं ! यह आप एक न कर पायेंगे। तो नाच से उन्होंने प्रयोग शुरू किये हैं, रात की नींद से शुरू किये हैं।

ऊन के वस्त्र, उपवास, कांटे की शैया

और तरह की विधियों का भी उपयोग किया गया है, जैसे कि ऊन के वस्त्र हैं। अब ठेठ रेगिस्तान की गरम हालत में ऊन पहने हुए हैं ! तो... तो शरीर के विपरीत चल रहे हैं। कोई उपवास कर रहा है, वह भी शरीर के विपरीत चल रहा है; कोई कांटे पर पैर रखे बैठा है, कोई कांटे की शैय्या बिछाकर उस पर लेट गया है, वे सब स्ट्रेंजनेस पैदा करने की तरकीबें हैं।

लेकिन एक पथ के राही को कभी ख्याल में नहीं आता, और स्वभावतः नहीं भी आता है... कि दूसरे पथ से भी ठीक यही स्थिति पैदा हो सकती है। तो वह दरवेश को तो कुछ पता नहीं है प्राणायाम के बाबत। हां, अगर वह कुछ करेगा तो नुकसान उठा सकता है। और खतरे ज्यादा हो सकते हैं। खतरे ऐसे हो सकते हैं, जैसे कि एक बैलगाड़ी की कील को आपने कार के चाक में लगा दिया हो, तो वह कहेगा कि भई यह कील बड़ी खतरनाक है, कभी मत लगाना, क्योंकि इससे तो हमारी गाड़ी खराब हो गयी। अब जो आदमी रातभर जग रहा है, अगर वह प्राणायाम का प्रयोग करे तो पागल हो जायेगा – फौरन पागल हो जायेगा। उसके कारण हैं; क्योंकि ये दोनों चोटें एकसाथ व्यक्तित्व नहीं सह सकता।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

लंबे उपवास में आसन और प्राणायाम हानिप्रद

इसलिए जैनों ने प्राणयाम का प्रयोग नहीं किया, क्योंकि उपवास से वे स्ट्रेंजनेस पैदा कर रहे हैं। अगर उपवास के साथ प्राणायाम करें तो बहुत खतरे में पड़ जायेंगे। एकदम खतरे में पड़ जायेंगे। इसलिए जैन के लिए कोई प्राणायाम का उपयोग नहीं रहा; बल्कि वह जैन साधु कहेगा कि कोई जरूरत नहीं है। मगर उसे पता नहीं है कि वह प्राणायाम को इनकार नहीं कर रहा है, वह सिर्फ इतना ही कह रहा है कि उसकी व्यवस्था में उसके लिए कोई जगह नहीं है; वह दूसरी चीज से वही काम पैदा कर ले रहा।

इसलिए जैनों ने कोई योगासन वगैरह के लिए फिक्र नहीं की, क्योंकि उपवास की हालत में, लंबे उपवास की हालत में योगासन वगैरह बहुत खतरनाक सिद्ध हो सकते हैं। तो उनके लिए बहुत मृदु आहार चाहिए, घी चाहिए, दूध चाहिए – अत्यंत तृप्तिदायी आहार चाहिए। उपवास कर देता है रूखा भीतर बिलकुल, और जठराग्नि इतनी बढ़ जाती है, क्योंकि उपवास से पेट बिलकुल आग हो जाता है। इस आग की हालत में कोई भी आसन खतरनाक हो सकते हैं। यह आग मस्तिष्क तक चढ़ सकती है और पागल कर सकती है। तो जैन संन्यासी कह देगा कि नहीं-नहीं, आसन वगैरह में कुछ सार नहीं है, सब बेकार है।

लेकिन जिस रास्ते पर उनका उपयोग है, उस रास्ते पर उनकी कीमत बड़ी अदभुत है। अगर ठीक आहार लिया जाये, तो आसन अदभुत काम कर सकते हैं। लेकिन उसके लिए शरीर का बड़ा स्निग्ध होना जरूरी है। बिलकुल ऐसा ही मामला है जैसे कि लुब्रीकेटिंग (स्निग्ध तत्वयुक्त) हालत होनी चाहिए बॉडी (शरीर) की; क्योंकि एक-एक हड्डी और एक-एक नस और एक-एक स्नायु को फिसलना है, बदलना है। उसमें जरा भी रूखापन हुआ तो टूट जायेगी। अत्यंत लोचपूर्ण चाहिए। और उस लोचपूर्ण हालत में अगर शरीर को ये सारी की सारी जो....

आसन : अनोखी देह-स्थितियां

अब ये आसन हैं, ये भी स्ट्रेंज पोजीशंस (अजनबी देह-स्थितियां) हैं, जिनमें आप कभी नहीं होते। और हमें ख्याल नहीं है कि हमारी सब पोजीशंस हमारे चित्त से बंधी हुई हैं। अब एक आदमी चिंतित होता है और सिर खुजाने लगता है! कोई पूछे कि तुम सिर किसलिए खुजा रहे हो ? चिंता से सिर खुजाने का क्या संबंध है ? लेकिन आप अगर उसका हाथ पकड़ लें तो आप पायेंगे

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कि वह चिंतित नहीं हो सकता। उसके चिंतित होने के लिए अनिवार्य है कि वह अपने सिर पर हाथ ले जाये। अगर उसका हाथ पकड़ लिया जाये तो वह चिंता नहीं कर सकता, क्योंकि उस चिंता के लिए उतना एसोसिएशन (साहचर्य) जरूरी है कि वह हाथ की मसल्स (मांस-पेशी) इस जगह पहुंचें, अंगुलियां इस स्थान को छुएं, इस स्नायु को छुएं, इस पोजीशन में जब वह हो जायेगा तो बस तत्काल उसकी चिंता सक्रिय हो जायेगी। अब इसी तरह की सारी की सारी मुद्राएं हैं, आसन हैं। तो वे बहुत अनुभव से...

जैसा मैं अभी सुबह ही कह रहा था कि अब यह ध्यान का जो प्रयोग हुआ इसमें अपने-आप आसन बनेंगे, अपने-आप मुद्राएं आयेंगी। निरंतर हजारों प्रयोग के बाद यह पता चल गया है कि चित्त की कौन सी दशा में कौन सी मुद्रा बन जाती है। तब फिर उलटा काम भी शुरू हो सका; वह मुद्रा बनाओ तो चित्त की वैसी दशा के बनने की संभावना बढ़ जाती है। जैसे कि बुद्ध बैठे हुए हैं, अगर आप ठीक उसी हालत में बैठें, तो आपको बुद्ध की चित्त-दशा में जाने में आसानी होगी; क्योंकि चित्त-दशा भी शरीर की दशाओं से बंधी हुई है। बुद्ध जैसे चलते हैं, अगर आप वैसे ही चलो; बुद्ध जैसी श्वास लेते हैं, अगर वैसी श्वास लो; बुद्ध जैसे लेटते हैं, वैसे लेटो, तो बुद्ध की जो चित्त की दशा है उसको पाना आपके लिए सुगमतर होगा। और या आप बुद्ध की चित्त दशा को पा लो तो आप पाओगे कि आपके चलने, उठने, बैठने में बुद्ध से तालमेल होने लगा। ये दोनों चीजें पैरेलल (समानांतर) हैं।

गुरजिएफ की अधूरी जानकारी

अब जैसे कि गुरजिएफ जैसे लोगों को जो कि एक अर्थ में अपरूटेड (परपंराशून्य) हैं, इनके पीछे कोई हजारों वर्ष का काम नहीं है, तो इनको पता नहीं है। इनको पता नहीं है, हजारों वर्ष का काम नहीं है। और फिर इस आदमी ने दस-पच्चीस अलग-अलग तरह के लोगों से मिलकर कुछ इकट्ठा किया। उसमें कई यंत्रों के सामान यह ले आया है। वे सब अपनी-अपनी जगह ठीक थे, लेकिन सब इकट्ठे होकर बड़े अजीब हो गये हैं। उनमें से कभी कोई किसी पर काम कर जाता है, लेकिन पूरा किसी पर काम नहीं कर पाता। इसलिए गुरजिएफ के पास जितने लोगों ने काम किया, पूर्णता पर उनमें कोई भी नहीं पहुंच सका। वह पहुंच नहीं सकता। क्योंकि जब वह आता है तो कोई चीज एक काम कर जाती है उस पर, तो वह उत्सुक तो हो जाता है और प्रवेश कर जाता है, लेकिन दूसरी चीजें उलटा काम करने लगती हैं; क्योंकि सिस्टम (प्रणाली) जो है, पूरी की पूरी सिस्टम नहीं है एक... कहना चाहिए कि

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मल्टी-सिस्टम्स (बहु-प्रणालियों) का बहुत कुछ उसमें ले लिया है। अच्छा, और कुछ सिस्टम्स (प्रणालियों) का उसे बिलकुल पता नहीं है। उसके पास उनकी जानकारी नहीं है।

उसकी ज्यादा जानकारी सूफी दरवेशों से है। उसे तिब्बतन योग का कोई विशेष पता नहीं है; उसे हठयोग का भी कोई बहुत विशेष पता नहीं है। जो उसने सुना है, वह भी विरोधियों के मुंह से सुना है; वह भी दरवेशों से सुना है। वह हठयोगी नहीं है। तो उसकी जो-जो जानकारी हठयोग के बाबत या कुंडलिनी के बाबत जो भी जानकारी है, वह दुश्मन के मुंह से सुनी गयी जानकारी है; विपरीत पथगामियों के द्वारा सुनी गयी जानकारी है। उस जानकारी के आधार पर वह जो कह रहा है वह बहुत अर्थों में तो कभी असंगत ही हो जाता है।

तो जैसे कुंडलिनी के बाबत उसने निपट नासमझी की बात कही; उसका उसे कुछ पता ही नहीं है। वह उसको 'कुंडा-बफर' ही कहे चला जा रहा है। और 'बफर' अच्छा शब्द नहीं है। वह यह कह रहा है कि कुंडलिनी एक ऐसी चीज है, जिसके कारण आप ज्ञान को उपलब्ध नहीं हो पाते, वह बफर (अवशोषक) की तरह काम कर रही है। और उसको पार करना जरूरी है। उसे मिटाकर पार कर जाना जरूरी है। इसलिए उसको जगाने की तो चिंता में ही मत पड़ना। अब उसे पता ही नहीं है कि वह क्या कह रहा है।

बफर्स हैं व्यक्तित्व में, ऐसी चीजें हैं जिनकी वजह से हम कई तरह के शॉक्स (आघात) झेल जाते हैं। कुंडलिनी वह नहीं है; कुंडलिनी तो शॉक है, मगर उसे पता नहीं है। कुंडलिनी तो खुद बड़े से बड़ा शॉक है। जब कुंडलिनी जगती है तो आपको बड़े से बड़ा शॉक लगता है आपके व्यक्तित्व में। बफर और हैं दूसरे आपके भीतर, जिनसे वह शॉक एब्ज़ार्बर, (आघात-अवशोषक) की तरह वे काम करते हैं; वे पी जाते हैं उसे। उन बफर्स को तोड़ने की जरूरत है। लेकिन वह इसको ही बफर समझ रहा है। और उसका कारण है कि उसे कुछ पता नहीं है। अनुभव तो है ही नहीं उसे उसका। ज़िनको अनुभव है उनके पास बैठकर उसने कोई बात भी नहीं सुनी। और इसलिए कई दफा बड़ी अजीब हालतें हो जाती हैं।

गुरजिएफ, कृष्णमूर्ति, इन सब के साथ बहुत अजीब हालत हो गयी है। इनके साथ अजीब हालत यह है कि वह जो सीक्रेट्स (रहस्य) हैं उन शब्दों के पीछे और उन शक्तियों के पीछे, उनका कभी भी उन्हें कोई व्यवस्थित ज्ञान नहीं हो सका। और कठिन भी बहुत है। असल में एक जन्म में संभव भी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नहीं है। अगर एकाध आदमी दस-बीस जन्मों में दस-बीस व्यवस्थाओं के बीच बड़ा हो, तभी संभव है; नहीं तो संभव नहीं है। दस-बीस जन्मों में दस-बीस व्यवस्थाओं के बीच बड़ा हो, तब कहीं किसी अंतिम जन्म में वह उन सब के बीच कोई सिंथेसिस (समन्वय) खोज सकता है, नहीं तो नहीं खोज सकता। लेकिन आमतौर से ऐसा होता है कि एक आदमी एक व्यवस्था से पहुंच जाता है तो दूसरा जन्म ही क्यों ले ? बात ही खत्म हो गयी। इसलिए सिंथेसिस (समन्वय) नहीं हो पाती।

और इधर मैं सोचता हूं इस पर... इस पर कभी काम करने जैसा है कि सारी दुनिया की व्यवस्थाओं के बीच एक सिंथेसिस संभव है। अलग-अलग छोर से पकड़ना पड़ेगा; घटनाएं वही घटती हैं, लेकिन अलग-अलग तरकीबें हैं उनको घटाने की।

ज़ेन फकीरों के अनोखे उपाय

अब जैसे ज़ेन फकीर है, वह एक आदमी को खिड़की से उठाकर फेंक देगा। सिर्फ स्ट्रेंजनेस (अजनबी स्थिति) पैदा होती है और कुछ नहीं। लेकिन वह कह देगा कि प्राणायाम की कोई जरूरत नहीं है; यह भस्त्रिका से क्या होगा ? उसका कारण है... लेकिन भस्त्रिका से नहीं होगा तो एक आदमी को खिड़की से फेंकने से क्या होगा ? बुद्ध से, महावीर से जाकर कहो, किसी को खिड़की से फेंकने से ज्ञान हो गया, तो वह कहेंगे, पागल ! आदमी रोज गिर जाते हैं मकानों से, कहीं ज्ञान होते हैं ! लेकिन गिरना एक बात है, फेंका जाना बिलकुल दूसरी बात है। जब एक आदमी मकान से गिरता है तो यह वैसा ही है जैसे एक आदमी पागल हो गया, लेकिन जब हम चार आदमी उठाकर काकू भाई को बाहर फेंक दें खिड़की के, और काकूभाई जानतें हैं कि ये फेंके जा रहे हैं, तो एक स्ट्रेंजनेस अनुभव होगी। जब वे गिरते हैं जमीन पर और जाते हैं फिंके हुए, तब पूरे वक्त अवेयर (होश में) होते हैं कि यह क्या हो रहा है। उस वक्त फौरन वे अलग हो जाते हैं, बॉडी (शरीर) से अलग हो जाते हैं।

अब एक ज़ेन गुरु के पास गये, उसने एक डंडा उठाकर खोपड़ी पर मार दिया आपके। स्ट्रेंज (अजीब) है, आप कहते हैं भई, मुझे आत्म-शांति चाहिए, उसने एक डंडा मार दिया। एकदम स्ट्रेंजनेस पैदा हो गयी। लेकिन हिंदुस्तान में नहीं पैदा होगी। अगर आप डंडा मारेंगे तो वह आदमी भी आपको डंडा मार देगा; वह लड़ने पर तैयार हो जायेगा। जापान में सिर्फ होगी, क्योंकि जापान में उसकी व्यवस्था ख्याल में आ गयी लोगों के... कि ज़ेन फकीर डंडा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मारकर भी कुछ कर सकता है। अब एक फकीर है, और आप गये हैं और वह आपको मां-बहन की गाली देने लगा; वह स्ट्रेंजनेस पैदा कर देगा उससे। कहां आप गये थे ब्रह्मज्ञानी के पास, वह मां-बहन की गाली दे रहा है खुलेआम आपको। लेकिन आपको पता हो तो... पता न हो तो आपको दिक्कत पड़ जायेगी। आप दोबारा जायेंगे नहीं कि यह आदमी गलत है, गाली बकता है। लेकिन उस व्यवस्था के भीतर उसका भी उपयोग किया गया है। वह गाली बककर भी स्ट्रेंजनेस पैदा कर देगा।

एक फकीर थे, गाडरवाड़ा के पास एक जगह है, सांईखेड़ा। तो वे कुछ भी कर सकते थे, वे गाली भी बकते थे; आप सब बैठे हैं, खड़े होकर सब के सामने पेशाब करने लगें! मगर बड़ा स्ट्रेंज हो जाता। एकदम स्ट्रेंज हो जायेगा... कि वे खड़े होकर वहीं पेशाब करने लगें – और आप एकदम चौंककर खड़े हो जायें। एकदम स्ट्रेंज हो जायेगी इस कमरे की हालत... यह क्या हो गया! यह गाली तो देते ही थे, मारने भी दौड़ते थे। और मारेंगे तो मीलों तक दौड़ते चले जायेंगे उस आदमी के पीछे। लेकिन जो उनके पास जाते थे, और जो समझने लगे थे, उनको बहुत लाभ हो गया। जो नहीं समझते थे, वे समझे: पागल आदमी है। पर नहीं जो समझते उनसे कोई लेना-देना भी क्या है! जो समझते थे उनको फायदा हो गया। क्योंकि जिस आदमी के पीछे वे दो मील दौड़ते चले गये, उसको बहुत स्ट्रेंज हालत में खड़ा कर दिया। और हजारों की भीड़ दौड़ रही है, और वे उसको मारने दौड़ रहे हैं, वह आदमी भागा जा रहा है। अब यह बड़ा स्ट्रेंज एटमास्फियर (अजीब वातावरण) हो गया!

बहुत सी व्यवस्थाओं से वही किया जा सकता है। दूसरी व्यवस्था वाले को कभी पता नहीं चलता। और कठिनाई एक और है: अगर पता भी हो, कई बार पता भी हो, जैसे मुझे कुछ पता है अगर, तब भी जब मैं एक व्यवस्था की बात कह रहा हूं तो मुझे एक्सट्रीम (समग्रता) पर बात करनी पड़ती है, नहीं तो उसका परिणाम नहीं होगा। अगर मुझे पता भी है कि दूसरी बात से भी हो सकता है, लेकिन जब मैं एक बात कह रहा हूं तो मैं कहूंगा कि किसी से नहीं हो सकता, इसी से होगा। कारण है वह भी। कारण है, क्योंकि आपके पास दिमाग नहीं कि आप इतना सब... सबसे होगा ऐसा समझ कर आपको ऐसा ही लगेगा ...किसी से नहीं होगा। और वे सब इतनी विपरीत व्यवस्थाएं हैं कि सबसे कैसे होगा, आप इसी झंझट में पड़ जायेंगे।

इसलिए बहुत बार तो ज्ञानियों को भी, जो जानते भी हैं, उनको भी अज्ञानी की भाषा बोलनी पड़ती है। उनको कहना पड़ता है: सिर्फ इसी से

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

होगा, और किसी से नहीं हो सकता। इसलिए मैं तो बहुत मुश्किल में पड़ गया हूं। मैं बहुत मुश्किल में पड़ गया हूं, क्योंकि मैं जानता हूं : उससे भी हो सकता है। तो यह हो सकता है।

बंबई, प्रातः, दिनांक 2 जुलाई, 1970.

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चौथी प्रश्नोत्तर चर्चा

आंतरिक रूपांतरण के तथ्य

प्रश्न : कल की चर्चा में आपने कहा कि शक्ति का कुंड प्रत्येक व्यक्ति का अलग-अलग नहीं है। लेकिन, कुंडलिनी जागरण में तो साधक के शरीर में स्थित कुंड से शक्ति ऊपर उठती है। तो क्या कुंड अलग-अलग हैं या कुंड एक ही है ? इस इस स्थिति को कृपया समझाएं।

ऐसा है, जैसे एक कुएं से तुम पानी भरो, तो तुम्हारे घर का कुआं अलग है, मेरे घर का कुआं अलग है, लेकिन फिर भी कुएं के भीतर के जो झरने हैं वे सब एक ही सागर से जुड़े हैं। तो अगर तुम अपने कुएं के ही झरने की धारा को पकड़ कर खोदते ही चले जाओ, तो उस मार्ग में मेरे घर का भी कुआं पड़ेगा, औरों के घर के कुएं भी पड़ेंगे, और एक दिन तुम वहां पहुंच जाओगे जहां कुआं नहीं, सागर ही होगा। जहां से शुरू होती है यात्रा वहां तो व्यक्ति है, और जहां समाप्त होती है यात्रा वहां व्यक्ति बिलकुल नहीं है, वहां समष्टि है; इंडिविजुअल (निज) से शुरू होती है और एबस्ल्यूट (परम) पर खतम होती है।

तो अगर यात्रा का प्रारंभिक बिंदु पकड़ोगे तब तो तुम अलग हो, मैं अलग हूं; और अगर इस यात्रा का चरम बिंदु पकड़ोगे तो न तुम हो, न मैं हूं और जो है, हम दोनों उसके ही हिस्से और टुकड़े हैं। तो जब तुम्हारे भीतर कुंडलिनी का अविर्भाव होगा तो वह पहले तो तुम्हें व्यक्ति की ही मालूम पड़ेगी,

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तुम्हारी अपनी मालूम पड़ेगी। स्वभावतः, कुएं पर तुम खड़े हो गये हो, लेकिन जब कुंडलिनी का आविर्भाव चढ़ता चला जायेगा, तब तुम धीरे-धीरे पाओगे कि तुम्हारा कुआं तुम्हारा ही नहीं है, वह औरों से भी जुड़ा है। और जितनी तुम्हारी यह गहराई बढ़ती जायेगी उतना ही तुम्हारा कुआं मिटता जायेगा और सागर होता जायेगा। अंतिम अनुभव में तुम कह सकोगे कि यह कुंड सबका था। तो इसी अर्थ में मैंने कहा कि... इसी भांति हम व्यक्ति की तरह अलग-अलग मालूम हो रहे हैं।

आत्मा से परमात्मा में छलांग

ऐसा समझो कि एक वृक्ष का एक पत्ता होश में आ जाये, तो उसे पड़ोस का जो पत्ता लटका हुआ दिखाई पड़ रहा है, वह दूसरा मालूम पड़ेगा। उसी वृक्ष की दूसरी शाखा पर लटका हुआ पत्ता उसे स्वयं कैसे मालूम पड़ सकता है कि यह मैं ही हूं! दूसरी शाखा भी छोड़ दें, उसी शाखा पर लगा हुआ दूसरा पत्ता भी उस वृक्ष के पत्ते को कैसे लग सकता है, मैं ही हूं! उतनी दूरी भी छोड़ दें, उसी पत्ते की बगल में, पड़ोस में लटका हुआ जो पत्ता है, वह भी दूसरा ही मालूम पड़ेगा; क्योंकि पत्ते का भी जो होश है, वह व्यक्ति का है। फिर पत्ता अपने भीतर प्रवेश करे, तो बहुत शीघ्र वह पायेगा कि मैं जिस डंठल से लगा हूं, उसी डंठल से मेरे पड़ोस का पत्ता भी लगा है, और हम दोनों की प्राणधारा एक ही डंठल से आ रही है। वह और थोड़ा प्रवेश करे तो वह पायेगा कि मेरी शाखा ही नहीं, पड़ोस की शाखा भी एक ही वृक्ष के दो हिस्से हैं और हमारी जीवनधारा एक है। वह और थोड़ा नीचे प्रवेश करे और वृक्ष की रीढ़ पर पहुंच जाये, तो उसे लगेगा कि सारी शाखाएं और सारे पत्ते और मैं, एक ही के हिस्से हैं। वह और वृक्ष के नीचे प्रवेश करे, उस भूमि में पहुंच जाये जिस भूमि से पड़ोस का वृक्ष भी निकला हुआ है, तो वह अनुभव करेगा कि मैं, मेरा यह वृक्ष, मेरे ये पत्ते, और यह पड़ोस का वृक्ष, यह हम एक ही भूमि के पुत्र हैं, और एक ही भूमि की शाखाएं हैं। और अगर वह प्रवेश करता ही जाये, तो यह पूरा जगत अंततः उस छोटे से पत्ते के अस्तित्व का अंतिम छोर होगा। वह पत्ता इस बड़े अस्तित्व का एक छोर था; लेकिन छोर की तरह होश में आ गया था तो व्यक्ति था, और समग्र की तरह होश में आ जाये तो व्यक्ति नहीं है।

तो कुंडलिनी के पहले जागरण का अनुभव तुम्हें आत्मा की तरह होगा, और अंतिम अनुभव तुम्हें परमात्मा की तरह होगा। अगर तुम पहले जागरण

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पर ही रुक गये, और तुमने घेराबंदी कर ली अपने कुएं की, और तुमने भीतर खोज न की, तो तुम आत्मा पर ही रुक जाओगे।

इसलिए बहुत से धर्म आत्मा पर ही रुक गये हैं। वह परम अनुभव नहीं है; वह अनुभव की आधी ही यात्रा है। और थोड़ा आगे जायेंगे तो आत्मा भी विलीन हो जायेगी और तब परमात्मा ही शेष रह जायेगा। और जैसा मैंने तुमसे कहा कि और अगर आगे गये तो परमात्मा भी विलीन हो जायेगा, और तब निर्वाण और शून्य ही शेष रह जायेगा – या कहना चाहिए, कुछ भी शेष नहीं रह जायेगा।

तो परमात्मा से भी जो एकदम आगे जाने की जिनकी संभावना थी, वे निर्वाण पर पहुंच गये हैं; वे परम शून्य की बात कहेंगे। वे कहेंगे – वहां, जहां कुछ भी नहीं रह जाता। असल में सब कुछ का अनुभव जब तुम्हें होगा, तो साथ ही कुछ नहीं का अनुभव भी होगा। जो एबसोल्यूट (परम) है, वह नथिंगनेस (अनत्ता, शून्य) भी है। इसे ऐसा हम समझें...

शून्य और पूर्ण : एक के ही दो नाम

'शून्य' और 'पूर्ण' एक ही चीज के दो नाम हैं, इसलिए दोनों कन्वर्टेबल (परिवर्तनीय) हैं। शून्य पूर्ण है। तुमने अधूरा शून्य न देखा होगा। आधा शून्य तुम नहीं कर सकते हो। अगर तुमसे हम कहें कि शून्य को आधा कर दो, दो टुकड़े कर दो – तुम कहोगे, यह कैसे हो सकता है ? एक के दो टुकड़े हो सकते हैं, दो के दो टुकड़े हो सकते हैं, शून्य के दो टुकड़े नहीं हो सकते। शून्य के टुकड़े ही नहीं हो सकते। और जब तुम कागज पर एक शून्य बनाते हो तो वह सिर्फ प्रतीक है; वह तुम्हारे बनाते ही शून्य नहीं रह जाता, क्योंकि तुम रेखा बांध देते हो।

इसलिए युक्लिड से पूछोगे तो वह कहेगा कि शून्य हम उसे कहते हैं : जिसमें न लंबाई है, न चौड़ाई है। लेकिन तुम तो कितना ही छोटा सा बिंदु भी बनाओगे, तो उसमें भी लंबाई-चौड़ाई होगी। इसलिए वह सिर्फ सिंबालिक (प्रतीक) है, वह असली बिंदु नहीं है; क्योंकि असली बिंदु में तो लंबाई-चौड़ाई नहीं हो सकती। लंबाई-चौड़ाई होगी तो फिर बिंदु नहीं रह जायेगा।

इसलिए उपनिषद कह सके कि शून्य से तुम निकाल लो शून्य भी, तो भी पीछे शून्य ही शेष रह जाता है। उसका मतलब है कि तुम निकाल नहीं सकते उसमें से कुछ। तुम अगर पूरे शून्य को भी लेकर भाग जाओ तब भी पीछे पूरा शून्य ही शेष रह जायेगा। तुम आखिर में पाओगे, चोरी बेकार गयी;

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तुम उसे लेकर भाग नहीं सकते; वह वहीं शेष रह जायेगा। लेकिन जो शून्य के संबंध में सही है, वही पूर्ण के संबंध में भी सही है। असल में पूर्ण की कोई कल्पना सिवाय शून्य के और नहीं हो सकती।

पूर्ण का मतलब है जिसमें अब और आगे विकास नहीं हो सकता; शून्य का मतलब है जिसमें अब और नीचे पतन नहीं हो सकता। शून्य के और नीचे उतरने का उपाय नहीं, पूर्ण के और आगे जाने का उपाय नहीं। तुम पूर्ण के भी खंड नहीं कर सकते; तुम शून्य के भी खंड नहीं कर सकते। पूर्ण की भी कोई सीमा नहीं हो सकती; क्योंकि जब भी किसी चीज की सीमा होगी तब वह पूर्ण नहीं हो सकेगा। क्योंकि उसका मतलब हुआ कि सीमा के बाहर फिर कुछ शेष रह जायेगा। और अगर कुछ बाहर शेष गया तो पूर्णता कैसी ? फिर यह अपूर्णता हो जायेगी... कि जहां मेरा घर खतम होता है, तुम्हारा घर शुरू हो जाता है। मेरे घर की सीमा पर, मेरा घर समाप्त होता है और तुम्हारा शुरू होता है। अगर मेरा घर पूर्ण है, तो तुम्हारा घर मेरे घर के बाहर नहीं हो सकता। तो पूर्ण की कोई सीमा नहीं हो सकती, क्योंकि कौन उसकी सीमा बनायेगा; सीमा बनाने के लिए हमेशा नेबर चाहिए; सीमा बनाने के लिए कोई पड़ोसी चाहिए। अब पूर्ण है अकेला; उसका कोई पड़ोसी नहीं है, जिससे उसकी सीमा इंगित हो सके।

सीमा दो बनाते हैं, एक नहीं – यह ख्याल रखना; सीमा बनाने के लिए दो चाहिए। जहां मैं समाप्त होऊं और कोई शुरू हो वहां सीमा बनेगी। अगर कोई शुरू ही न हो तो मैं समाप्त भी न हो सकूंगा। और अगर मैं समाप्त ही न हो सकूं, हों ही न सकूं समाप्त, तो फिर मेरी कोई सीमा न बनेगी। पूर्ण की कोई सीमा नहीं है, क्योंकि कौन उसकी सीमा बनाये ? शून्य की कोई सीमा नहीं है; क्योंकि जिसकी सीमा हो जाती है, वह 'कुछ' हो गया, वह शून्य कैसे रहा ? तो अगर इसे बहुत ठीक से समझोगे तो शून्य और पूर्ण जो हैं, वे एक ही चीज को कहने के दो ढंग हैं।

ब्रह्म और शून्य : दो ओर से यात्रा

तो धर्म भी दो तरफ से यात्रा कर सकता है : या तो तुम पूर्ण हो जाओ, या तुम शून्य हो जाओ; दोनों स्थितियों में तुम वही हो जाओगे, जो होने की बात है। तो जो पूर्ण की यात्रा करनेवाला है, पूर्ण शब्द को प्रेम करता है, पॉज़िटिव (धनात्मक) को प्रेम करता है, वह कहेगा – अहम् ब्रह्मास्मि; मैं ब्रह्म हूं। वह यह कह रहा है कि मैं ही ब्रह्म हूं : यह सब जो है, यह मैं ही हूं;

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

और मेरे अतिरिक्त कोई तू नहीं है; सब 'तू' मैंने अपने 'मैं' में घेर लिये हैं। अगर यह हो सके तो यह बात हो जायेगी। लेकिन, अंतिम चरण में 'मैं' को भी खोना पड़ेगा, क्योंकि जब कोई 'तू' नहीं है तो तुम कैसे कहोगे कि मैं ही ब्रह्म हूं ? क्योंकि 'मैं' की उदघोषणा 'तू' की मौजूदगी पर ही सार्थक है। और जब तुम ही ब्रह्म हो, तो यह कहना भी बहुत अर्थ का नहीं रह जायेगा कि मैं ब्रह्म हूं; क्योंकि इसमें भी दो की स्वीकृति है – ब्रह्म की और मेरी। तो अंत में 'मैं' भी व्यर्थ हो जायेगा, 'ब्रह्म' भी व्यर्थ हो जायेगा और चुप हो जाना पड़ेगा।

दूसरा एक मार्ग है कि तुम... इतने मिट जाओ... कि तुम कह सको, मैं हूं ही नहीं। एक जगह तुम कह सके, मैं ब्रह्म हूं अर्थात मैं सब हूं; दूसरी यात्रा है जिसमें तुम कह सको कि मैं हूं ही नहीं, कुछ भी नहीं है; सब परम शून्य है। लेकिन, इससे भी तुम वहीं पहुंच जाओगे, और पहुंच के तुम यह भी न कह सकोगे कि मैं नहीं हूं; क्योंकि मैं नहीं हूं, यह कहने के लिए भी 'मैं' का होना जरूरी है। तो 'मैं' खो जायेगा। तुम यह भी नहीं कह सकोगे कि सब शून्य है; क्योंकि यह कहने के लिए 'सब' भी होना चाहिए और 'शून्य' भी होना चाहिए। तब तुम फिर चुप हो जाओगे।

तो यात्रा चाहे कहीं से हो – चाहे वह पूर्णता की तरफ से हो, चाहे शून्यता की तरफ से हो, लेकिन वह परम मौन में ले जायेगी, जहां बोलने को कुछ भी नहीं बचेगा। इसलिए कहां से कोई जाता है, यह बड़ा सवाल नहीं है; कहां पहुंचता है, यह जांचने की बात है। उसकी अंतिम मंजिल पकड़ी जा सकती है, पहचानी जा सकती है। अगर वह यहां पहुंच गया तो वह जहां से भी गया हो, ठीक ही रास्ते से गया है।

कोई रास्ता गलत नहीं है, कोई रास्ता ठीक नहीं है – इस अर्थ में कि जो पहुंचा दे, वह ठीक है। और पहुंचना यहां है। लेकिन प्राथमिक अनुभव कहीं से भी – 'मैं' से ही शुरू होगा, क्योंकि हमारी वह स्थिति है; वह गिवन सिचुएशन (दी गयी स्थिति) है, जहां से हमको चलना है।

तो चाहे हम कुंडलिनी को जगायें, तो भी वह व्यक्तिगत मालूम पड़ेगी; चाहे ध्यान में जायें, तो भी वह व्यक्तिगत मालूम पड़ेगा; चाहे शांत हों तो व्यक्तिगत होगा – जो कुछ भी होगा, वह व्यक्तिगत होगा; क्योंकि अभी हम व्यक्ति हैं। लेकिन जैसे-जैसे इसमें प्रवेश करोगे, भीतर जितने गहरे उतरोगे, व्यक्ति मिटता जायेगा। और अगर बाहर गये, तो व्यक्ति बढ़ता चला जायेगा।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

व्यक्ति का अंतिम छोर

जैसे समझ लो कि एक आदमी कुएं पर खड़ा है। अगर वह कुएं में भीतर जाये, तो एक दिन सागर में पहुंच जायेगा। और अनुभव करे कि कुआं तो नहीं था,...

असल में कुआं है क्या? ...जस्ट ए होल (एक छेद मात्र), सागर को झांकने के लिए। और क्या है? कुएं का और अर्थ क्या है? एक छेद है जिससे तुम सागर को झांक लेते हो। अगर तुम पानी को कुआं समझते हो तो गलत समझते हो, पानी तो सागर ही है। हां, वह छेद, जिससे तुमने झांका है, वह है कुआं। तो वह जो छेद है, वह जितना बड़ा होता जाये, सागर उतना बड़ा दिखाई पड़ने लगेगा। लेकिन अगर तुम कुएं के भीतर प्रवेश न किये और कुएं से दूर हटते चले गये, तो तुम्हें कुएं का पानी भी दिखाई पड़ना थोड़ी देर में बंद हो जायेगा। फिर तो वह जो कुएं का छेद है, और पाट है वही दिखाई पड़ेगा। और उसका सागर से कभी तुम तालमेल न कर पाओगे — एकदम तुम सागर के किनारे भी पहुंच जाओ, तो भी तुम यह तालमेल न बिठा पाओगे कि वह जो कुएं में झांका था — वह और यह सागर एक हो सकता है।

अंतर्यात्रा तो तुम्हें एकता पर ले जायेगी, बहिर्यात्रा तुम्हें अनेकता पर ले जायेगी। लेकिन सभी अनुभव का प्रारंभिक छोर व्यक्ति होगा, कुआं होगा; अंतिम छोर अव्यक्ति होगा — या परमेश्वर कहो — सागर होगा। इस अर्थ में मैंने कहा : अगर तुम गहरे जाओगे तो कुंड जो है तुम्हारा नहीं रह जायेगा; कुछ भी तुम्हारा नहीं रह जायेगा। कुछ भी नहीं रह जा सकता है।

पीड़ा कुएं की, आनंद सागर का

प्रश्न : यदि सब कुएं (व्यक्ति) एक ही हैं और सागर से मिले हुए ही हैं तो फिर सागर से मिलने के लिए कुएं के भीतर जाने की अर्थात शून्य होने के लिए साधना की क्या जरूरत है?

यह जो बात है न, क्योंकि तुम्हें समझ में आ रहा है कि शून्य यानी कुछ भी नहीं, इसलिए साधना की क्या जरूरत है? कुछ हो तो जरूरत है। तुम्हें ख्याल में आ रहा है कि शून्य यानी 'नाकुछ' हो गये। तो साधना की क्या जरूरत है? साधना की जरूरत तो तब लगती है, जब कुछ हम हो जायें। लेकिन तुम्हें यह पता नहीं कि शून्य का मतलब है पूर्ण; शून्य का मतलब है सबकुछ। शून्य का मतलब कुछनहीं नहीं, सबकुछ।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

लेकिन अभी तुम्हारे ख्याल में नहीं आ सकता कि शून्य यानी सब कुछ का क्या मतलब होता है। एक कुआं भी कह सकता है... कि अगर सागर की तरफ जाने का मतलब इसी बात का पता चलना है कि मैं हूं ही नहीं, तो मैं जाऊं ही क्यों। यह ठीक कह रहा है कुआं। यह कहे कि अगर मैं सागर की तरफ जाऊं और आखिर में यही पता चलना है कि मैं हूं ही नहीं, तो मैं जाऊं क्यों ? लेकिन तुम्हारे न जाने से फर्क नहीं पड़ता है। तुम नहीं हो, एक बात; तुम्हारे जाने, न जाने का सवाल नहीं – न जाओ, कुएं पर भी रुके रहो, कुएं ही बने रहो, लेकिन तुम हो नहीं कुआं। यह झूठ है सरासर। यह झूठ तुम्हें दुख देता रहेगा। यह झूठ तुम्हें पीड़ा देता रहेगा। यह झूठ तुम्हें बांधे रहेगा। इस झूठ में आनंद की कोई संभावना नहीं है।

कुआं मिटेगा जरूर सागर तक जाकर, लेकिन मिटते ही उसकी सारी चिंता, दुख, सब मिट जायेगा; क्योंकि वह उसके कुआं और व्यक्ति होने से बंधा था, उसकी इगो और अहंकार से बंधा था। और हमें तो ऐसा लगेगा कि कुआं जाकर सागर में मिट गया है, कुछ भी नहीं हुआ, लेकिन कुएं को थोड़े ही ऐसा लगेगा; कुआं तो कहेगा कि मैं सागर हो गया; कौन कहता है, मैं मिट गया ! यह तो जो नहीं गया कुआं, पड़ोस का, वह उससे कहेगा; पागल ! कहां जाता है ? वहां तो मिट ही जाना है, तो जाना क्यों ? लेकिन जो गया है, वह कहेगा : कौन कहता है, मिट जाना है; मैं तो मिटूंगा एक अर्थ में – कुएं के अर्थ में, लेकिन सागर के अर्थ हो भी जाऊंगा।

इसलिए चुनाव कुआं बने रहने का या सागर होने का है सदा; क्षुद्र से बंधे रहने का या विराट के साथ एक हो जाने का है। लेकिन वह अनुभव की बात है। और अगर कुएं ने कहा कि मैं मिटने से डरता हूं, तो फिर तो उसको सागर से सब संबंध तोड़ लेने पड़ेंगे; क्योंकि उन संबंधों में सदा भय है... कि कभी भी पता न चल जाये कि मैं सागर हूं। तो उसको सब अपने झरने तोड़ लेने पड़ेंगे, क्योंकि वे झरने सब सागर तक जाते हैं। या उस झरने की तरफ से आंख मोड़ लेनी पड़ेगी। वह सदा बाहर देखता रहे, भीतर न देखे भूलकर; क्योंकि भीतर देखने से कभी भी संभावना है कि उसे पता चल जाये कि अरे, मैं नहीं हूं, सागर ही है। तो फिर वह बाहर देखे। और झरने जितने छोटे हों, उतने अच्छे हैं; क्योंकि उनसे भीतर जाना कम आसान रह जायेगा। जितने सूखे हों, उतने अच्छे; बिलकुल सूख जायें तो और भी अच्छे। लेकिन तब कुआं मरेगा – समझेगा कि मैं बचा रहा हूं अपने को, लेकिन मरेगा।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मिटना बहुत आनंदपूर्ण है

जीसस का वचन है कि जो अपने को बचायेगा, वह मिटेगा; और जो मिटायेगा, वही केवल बच सकता है। तो यह तो हमारे मन में उठता ही है सवाल कि मिट जायेंगे, वहां जायें क्यों ? वहां जायें क्यों, मिट जायेंगे । तो अगर यह ...अगर मिटना ही हमारा सत्य है, तो ठीक है। और बचाने से कैसे बचेंगे ?

अगर सागर में पहुंच के मिटना होता है तो कुएं बने रह कर कितने दिन बच सकोगे ? इतना बड़ा सागर होकर भी मिटना हो जाता है तो इतने से कुएं को कैसे बचाओगे, कितने दिन बचाओगे ? जल्दी इसकी ईंटें गिर जायेंगी, जल्दी इस पर मिट्टी गिरेगी, जल्दी इसका पानी सूख जायेगा। जब सागर में भी न बच सकोगे, तो कुएं में कैसे बचोगे ? और कितनी देर बचोगे ?

इसी से मृत्यु का भय पैदा होता है। वह कुएं का भय है। सागर से मिलना नहीं चाहता, क्योंकि उसमें डर है मिटने का, इसलिए सागर से अपने को दूर कर लेता है और कुआं बन जाता है। और फिर मौत का भय सताने लगता है, क्योंकि सागर से जैसे ही टूटा कि मरने की स्थिति करीब आने लगी; क्योंकि सागर से जुड़कर जीवन है।

तो इसलिए हम सब मृत्यु से भयभीत हैं — डरे हुए हैं कि कहीं मर न जायें। मरना पड़ेगा। और दो ही तरह के मरने हैं : या तो तुम सागर में कूद कर मर जाओ। वह मरना बहुत आनंदपूर्ण है; क्योंकि मरोगे नहीं, सागर हो जाओगे। और एक यह कि तुम कुएं को जोर से पकड़े बैठे रहो — सूखोगे, सड़ोगे, मिट जाओगे।

हमारा मन कहता है, कोई प्रलोभन चाहिए — क्या, मिलेगा क्या... जिसकी वजह से हम सागर में जायें ? क्या मिलेगा जिससे हम समाधि को खोजें, शून्य को खोजें ?...मिलेगा क्या ? हम पहले पूछते हैं, मिलेगा क्या ? हम इसको पूछते ही नहीं कि इस मिलने की दौड़ में हमने अपने को खो दिया है। सब तो मिल गया है — मकान मिल गया है, धन मिल गया है; वह सब मिल गया है और हम खो गये हैं; हम बिलकुल नहीं हैं वहां।

अगर मिलने की भाषा में पूछते हो तो मैं कहूंगा कि अगर खोने को तैयार हो जाओ तो तुम तुमको मिल जाओगे। अगर खोने को तैयार नहीं हो, बचाने की कोशिश की तो तुम खो जाओगे और सब बच जायेगा; और बहुत सी चीजें बच जायेंगी, बस तुम खो जाओगे।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तीव्र श्वास से प्राण-ऊर्जा में वृद्धि

प्रश्न : आपने कहा था कि डीप ब्रीदिंग (गहरी श्वास) लेने से ऑक्सीजन और कार्बन डायऑक्साइड का अनुपात बदल जाता है। तो इस अनुपात के बदलने का कुंडलिनी जागरण के साथ कैसे संबंध है ?

बहुत संबंध है। एक तो हमारे भीतर जीवन और मृत्यु दोनों की संभावनाएं हैं। उसमें जो ऑक्सीजन है वह हमारे जीवन की संभावना है, और जो कॉर्बन है वह हमारी मृत्यु की संभावना है। जब ऑक्सीजन क्षीण होते होते होते होते समाप्त हो जायेगी और सिर्फ कॉर्बन रह जायेगी तुम्हारे भीतर, तो तुम लाश हो जाओगे – ऐसे ही, जैसे कि हम एक लकड़ी को जलाते हैं। जब तक ऑक्सीजन मिलती है, जलती चली जाती है। आग होती है, जीवन होता है। फिर ऑक्सीजन चुक गयी, आग चुक गयी, फिर कोयला, कॉर्बन पड़ा रह जाता है पीछे। वह मरी हुई आग है। वह जो कोयला पड़ा है पीछे, वह मरी हुई आग है। तो हमारे भीतर दोनों का काम चल रहा है पूरे समय।

भीतर हमारे जितनी ज्यादा कॉर्बन होगी, उतनी ही लिथार्जी होगी, उतनी सुस्ती होगी। इसलिए दिन में नींद लेना मुश्किल पड़ता है, रात में आसान पड़ता है; क्योंकि रात में ऑक्सीजन की मात्रा कम हो गयी है और कॉर्बन की मात्रा बढ़ गयी है। इसलिए रात में हम सरलता से सो जाते हैं और दिन में सोना इतना सरल नहीं पड़ता क्योंकि ऑक्सीजन बहुत मात्रा में है। ऑक्सीजन हवा में बहुत मात्रा में है। सूरज के आ जाने के बाद ऑक्सीजन का अनुपात पूरी हवा में बदल जाता है। सूरज के हटते से ही ऑक्सीजन का अनुपात नीचे गिर जाता है।

इसलिए अंधेरा जो है, रात्रि जो है, वह प्रतीक बन गया है – सुस्ती का, आलस्य का, तमस का। सूर्य जो है वह तेजस का प्रतीक बन गया, क्योंकि उसके साथ ही जीवन आता है। रात सब कुम्हला जाता – फूल बंद हो जाते, पत्ते झुक जाते, आदमी सो जाता – सारी पृथ्वी एक अर्थों में टेम्परेरी डेथ में चली जाती; एक अस्थायी मृत्यु में समा जाती। सुबह होते ही फिर फूल खिलने लगते, फिर पत्ते जीवित हो जाते, फिर वृक्ष हिलने लगते, फिर आदमी जगता, पक्षी गीत गाते – सब तरफ फिर पृथ्वी जागती है; वह जो टेम्परेरी डेथ थी, वह जो अस्थायी मृत्यु थी रात के आठ-दस घंटे की, वह गयी; अब जीवन फिर लौट आया है।

तो तुम्हारे भीतर भी ऐसी घटना घटती है कि जब तुम्हारे भीतर ऑक्सीजन की मात्रा तीव्रता से बढ़ती है, तो तुम्हारे भीतर जो सोयी हुई शक्तियां

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हैं वे जगती हैं; क्योंकि सोयी हुई शक्तियों के जगने के लिए सदा ही ऑक्सीजन चाहिए – किसी भी तरह की सोयी हुई शक्तियों को जगने के लिए। अब एक आदमी मर रहा है, मरने के बिलकुल करीब है, हम उसकी नाक में ऑक्सीजन का सिलिंडर लगाये हुए हैं। उसे हम दस-बीस घंटे जिंदा रख लेंगे। उसकी मृत्यु घट गयी होती दस-बीस घंटे पहले, लेकिन हम उसे दस-बीस घंटे खींच लेंगे। वर्ष, दो वर्ष भी खींच सकते हैं, क्योंकि उसकी बिलकुल क्षीण होती शक्तियों को ही हम ऑक्सीजन दे रहे हैं तो वे सो नहीं पा रही। उसकी सब शक्तियां मौत के करीब जा रही हैं, डूब रही हैं, डूब रही हैं, लेकिन हम फिर भी ऑक्सीजन दिये जा रहे हैं।

तो आज यूरोप-अमरीका में तो हजारों आदमी ऑक्सीजन पर अटके हुए हैं। और सारे अमरीका और यूरोप में बड़े से बड़ा सवाल है अथनेसिया का ....कि आदमी को स्वेच्छा-मरण का हक होना चाहिए, क्योंकि डॉक्टर अब उसको लटका सकता है बहुत दिन तक। बड़ा भारी सवाल है, क्योंकि अब डॉक्टर चाहे तो कितने ही दिन तक एक आदमी को न मरने दे। अच्छा, डॉक्टर की तकलीफ यह है कि अगर वह उसे जानकर मरने दे तो वह हत्या का आरोपण उस पर हो सकता है; वह मर्डर (हत्या) हो गया। यानी वह अभी ऑक्सीजन देकर इस अस्सी साल के मरते हुए बूढ़े को बचा सकता है – अगर न दे, तो यह हत्या के बराबर जुर्म है। तो वह तो इसे देगा; वह इसे ऑक्सीजन देकर लटका देगा। अब उसकी जो सोती हुई शक्तियां है वे कॉर्बन की कमी के कारण नहीं सो पायेंगी। समझे न मतलब ? ठीक इससे उलटा प्राणायाम और भस्त्रिका और जिसे मैं श्वास की तीव्र प्रक्रिया कह रहा हूं, उसमें होता है।

अधिक प्राण से अधिक जागृति

तुम्हारे भीतर तुम इतनी ज्यादा जीवनवायु ले जाते हो, प्राणवायु ले जाते हो कि तुम्हारे भीतर जो सोये हुए तत्व हैं जगने की क्षमता उनकी बढ़ जाती है – तत्काल वे जगने शुरू हो जाते हैं; और तुम्हारे भीतर जो सोने की प्रवृति है, भीतर, वह भी टूटती है।

सुनकर हैरान होओगे : अभी मेरे पास कोई एक चार वर्ष पहले, सिलोन से एक बौद्धभिक्षु आया। वह तीन साल से सो नहीं सका। सब तरह के इलाज किये, वे काम नहीं किये। वे काम कर नहीं सकते थे, क्योंकि वह एक 'अनापानसतीयोग' का प्रयोग कर रहा था, श्वास का – चौबीस घंटे गहरी श्वास पर ध्यान रख रहा था। अब जिसने उसे बता दिया था उसे कुछ पता नहीं

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

होगा... कि चौबीस घंटे गहरी श्वास पर अगर ध्यान रखा जायेगा तो नींद बिलकुल विदा हो जायेगी; नींद को लाया ही नहीं जा सकता।

तो इधर तो वह चौबीस घंटे श्वास पर ध्यान रख रहा है और उधर उसको दवाइयां दिलवाये जा रहे हैं। तो उसकी बड़ी तकलीफ खड़ी हो गयी; क्योंकि उसके शरीर में कॉन्फ्लिक्ट (द्वंद्व) पैदा हो गयी। दवाइयां उसको सुला रही हैं, और वह गहरी श्वास का जो प्रयोग चौबीस घंटे जारी रखे हुए है, वह उसकी शक्तियों को जगा रहा है। तो उसके भीतर ऐसी जिच (अंतर विरोध) पैदा हो गयी, जैसे कि कोई कार में एक्सीलरेटर और ब्रेक दोनों एकसाथ दबाता हो। समझे न ? तो वह तो बहुत परेशानी में था। किसी ने उसको मेरे बारे में कहा तो वह मेरे पास आया। तो मैं उसको देखकर समझा कि वह तो पागलपन में पड़ा है, यह तो कभी हो ही नहीं सकता। तो मैंने उससे कहा कि अनापानसती-योग बंद करो। तो उसने कहा, इससे क्या संबंध है ? तो उसे ख्याल ही नहीं कि अगर श्वास का इतना ज्यादा प्रयोग करोगे कि ऑक्सीजन इतनी मात्रा में हो जाये कि शरीर सो ही न सके, तो फिर कैसे सोओगे। और या फिर, मैंने उससे कहा कि सोने का ख्याल ही छोड़ दो, और यह दवाइयां लेना बंद कर दो। और तुम्हें कोई जरूरत नहीं है दवाइयां लेने की। अगर यह प्रयोग जारी रखते हो तो नींद नहीं आने से कोई हर्ज नहीं होगा। एक आठ दिन उसने प्रयोग बंद किया है कि उसे नींद आनी शुरू हो गयी; कोई दवा की जरूरत न रही।

अधिक कॉर्बन से अधिक मूर्छा

तो हमारे भीतर सोंने की संभावना बढ़ती है कॉर्बन के बढ़ने से। इसलिए जिन-जिन चीजों से हमारे भीतर कॉर्बन बढ़ती है, वे सभी चीजें हमारे भीतर सोयी हुई शक्तियों को और सुलाती हैं। उतनी हमारी मूर्छा बढ़ती चली जाती है।

जैसे दुनिया में जितनी संख्या आदमी की बढ़ रही है उतनी मूर्छा का तत्व ज्यादा होता चला जायेगा; क्योंकि जमीन पर ऑक्सीजन कम और आदमी ज्यादा होते चले जायेंगे। कल एक ऐसी हालत हो सकती है कि हमारे भीतर जागने की क्षमता कम से कम रह जाये। इसलिए तुम सुबह ताजा अनुभव करते हो – एक जंगल में जाते हो, ताजा अनुभव करते हो; समुद्र के तट पर तुम ताजा अनुभव करते हो; बाजार की भीड़ से सुस्ती छा जाती है, सब तमस हो जाता है; वहां बहुत कॉर्बन है। ऑक्सीजन भी निरंतर बन रहा है लेकिन हमारी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

भीड़, हमारी भीड़ में रहने की आदतें, वे सारी ऑक्सीजन को पीये चली जाती हैं। तो इसलिए जहां भी ऑक्सीजन ज्यादा है वहां तुम प्रफुल्ल अनुभव करोगे — वह चाहे बगीचा हो, चाहे नदी का किनारा हो, चाहे पहाड़ हो — जहां भी ऑक्सीजन ज्यादा है, वहां तुम एकदम प्रफुल्लित हो जाओगे, स्वस्थ हो जाओगे; जहां भीड़ है, भड़क्का है, सिनेमागृह है — चाहे मंदिर हो, वहां तुम एकदम से सुस्त हो जाओगे; वहां मूर्छा पकड़ेगी।

तीव्र परिवर्तन से देखना सुगम

तो तुम्हारे भीतर ऑक्सीजन को बढ़ाने का प्रयोजन है; उससे तुम्हारे भीतर का संतुलन बदलता है — तुम सोने की तरफ उन्मुख न रह कर के जागने की तरफ उन्मुख होते हो। और अगर यह मात्रा तेजी से और एकदम बढ़ायी जा सके, तो तुम्हारे भीतर संतुलन में एकदम से इतना फर्क होता है जैसे तराजू का एक पल्ला जो नीचे लगा था, एकदम ऊपर चला गया; ऊपर का तराजू का पल्ला बिलकुल नीचे आ गया। अगर झटके के साथ तुम्हारे भीतर का संतुलन बदला जा सके, तो उसका तुम्हें अनुभव भी जल्दी होगा। अगर पल्ला बहुत धीरे धीरे धीरे धीरे आये, तुम्हें पता नहीं चलेगा कि कब बदलाहट हो गयी। इसलिए मैं तीव्र श्वास के प्रयोग को कह रहा हूं... कि इतने जोर से परिवर्तन करो कि दस मिनट में तुम एक स्थिति से ठीक दूसरी स्थिति में प्रवेश कर जाओ... और तुम साफ देख सको; क्योंकि जल्दी चीज बदलती है, तभी देखी जा सकती है।

जैसे कि हम सब जवान से बूढ़े होते हैं, बच्चे से जवान होते हैं, लेकिन हम कभी पता नहीं लगा पाते कि कब हम बच्चे थे और कब हम जवान हो गये; और कब हम जवान थे और कब हम बूढ़े हो गये। अगर कोई तारीख हमसे पूछे कि किस तारीख को आप जवानी से बूढ़े हुए हैं, तो हम तारीख न बता सकेंगे। बल्कि बड़ी भ्रांति चलती रहती है : बूढ़ा मन में समझ ही नहीं पाता कि बूढ़ा हो गया; क्योंकि उसकी जवानी और उसके बुढ़ापे के बीच कोई गैप्र (अंतराल) नहीं है, कोई तीव्रता नहीं है।

बच्चा कभी नहीं समझ पाता कि अब वह जवान हो गया, वह अपने बचपन के ढंग अख्तियार किये चला जाता है। दूसरों को वह जवान दिखने लगता है, उसको पता नहीं चला कि वह जवान हो गया है। मां-बाप समझते हैं : जिम्मेदार होना चाहिए — यह होना चाहिए, वह होना चाहिए; वह अपने को बच्चा समझे जा रहा है! क्योंकि अभी ऐसी तीव्रता से कोई घटना नहीं

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

घटी जिसमें उसको पता चले कि अब वह बच्चा नहीं रहा, अब जवान हो गया है।

बूढ़ा आदमी जवान की तरह व्यवहार किये चला जाता है। उसे पता नहीं चल पा रहा है कि वह बूढ़ा हो गया है। पता कैसे चले ? क्योंकि पता चलने के लिए तीव्र संक्रमण चाहिए। अगर ऐसा हो कि एक आदमी फलां तारीख को घंटे भर में जवान से बूढ़ा हो जाये, तो किसी को कहने की जरूरत न होगी कि तुम बूढ़े हो गये हो। एक बच्चा एक घंटे में फलां तारीख को बीस साल का पूरा हो और एकदम जवान हो जाये, तो किसी को, बाप को कहना न पड़ेगा कि अब तुम्हारी उम्र अब बड़ी हो गयी है, अब जरा यह बचपना छोड़ो। यह किसी को कहने की जरूरत नहीं, वह खुद ही जान लेगा कि बात घट गयी है; अब मैं दूसरा आदमी हूं।

तो मैं इतना ही तीव्र संक्रमण चाहता हूं कि तुम पहचान सको इन दो स्थितियों का फर्क कि तुम्हारा सोया हुआ चित्त, तुम्हारा सोया हुआ व्यक्तित्व, वह तुम्हारी स्लीपिंग कांशसनेस (सोयी चेतना), और यह तुम्हारी अवेकंड, जागी हुई प्रबुद्ध चेतना। यह इतनी तीव्रता से, झटके से होना चाहिए जंप की तरह, छलांग की तरह... कि तुम पहचान पाओ कि फर्क हो गया। यह पहचान काम पड़ेगी। यह पहचान बहुत कीमत की है।

इसलिए मैं ऐसे प्रयोगों का पक्षपाती हूं जो तुम्हें तीव्रता से रूपांतरित करते हों। अगर बहुत वक्त ले लें, तो तुम कभी समझ न पाओगे कि क्या हो रहा है। और खतरा क्या है... कि अगर तुम समझ न पाओ, तो हो सकता है थोड़ा-बहुत रूपांतरण भी हो जाये, लेकिन उससे तुम्हारी समझ गहरी न हो पायेगी। कई बार ऐसा हो जाता है; कई मौकों पर ऐसा होता है कि एक आदमी... बहुत बार ऐसा होता है कि आत्मिक अनुभव के बहुत निकट पहुंच जाता है अनायास, चलते-चलते कहीं से, लेकिन झटके से नहीं, तीव्रता से नहीं, तो वह पकड़ नहीं पाता कि क्या हुआ। और उसकी वह जो व्याख्या करता है वह कभी भी ठीक नहीं होती; क्योंकि उसकी व्याख्या के लिए उतना फासला नहीं होता। बहुत मौकों पर ऐसी घटना घटती है जब कि तुम करीब होते हो एक नये अनुभव के, लेकिन तुम उसको टाल जाओगे; तुम उसकी व्याख्या अपने पुराने हिसाब में ही कर लोगे, क्योंकि वह इतना धीरे-धीरे हुआ है कि उसका कभी पता नहीं चलेगा।

एक आदमी को मैं जानता हूं कि वह भैंस को उठा लेता है। उसके घर भैंसे हैं और वह बचपन से, जब भैंस उसके घर में पैदा हुई होगी तब से उसे

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

उठाता रहा है रोज; उसे उठाकर घूमता रहा है। भैंस रोज धीरे-धीरे बड़ी होती गयी है और रोज उसका भी उठाने का बल थोड़ा-थोड़ा बढ़ता चला गया; अब वह पूरी भैंस को उठा लेता है। अब वह चमत्कार मालूम होता है, हालांकि उसको भी नहीं लगता कि यह कोई चमत्कार है। दूसरों को लगता है कि बड़ा मुश्किल का मामला है, भैंस को उठा ले एक आदमी! मगर वह इतना क्रमिक हुआ है कि उसे भी पता नहीं है और हमें यह चमत्कार दिखता है, क्योंकि हमारे लिए बड़ा फासला मालूम हो रहा है दोनों में; उसमें कहीं तालमेल नहीं दिखता है : हम उठा नहीं सकते, वह उठा रहा है!

कुंडलिनी का ईंधन है प्राण ऊर्जा

तो तीव्रता का प्रयोग इसलिए कहता हूं। और प्राणवायु का तो बहुत मूल्य है। उसका तो बहुत मूल्य है। असल में जितनी मात्रा में तुम अपने शरीर को प्राणवायु ऑक्सीजन से भर लोगे, उतनी ही त्वरा से, स्पीड से तुम शरीर के अनुभव से आत्म अनुभव की तरफ झुक जाओगे। क्योंकि अगर बहुत ठीक से समझो तो शरीर तुम्हारा डेड एंड (मृत छोर) है – यानी तुम्हारा वह हिस्सा, जो मर चुका है। इसलिए वह दिखाई पड़ रहा है। तुम्हारा वह हिस्सा जो सख्त हो चुका है, इसलिए दिखाई पड़ रहा है; तुम्हारा वह हिस्सा जो अब तरल नहीं है, ठोस हो गया है। और आत्मा तुम्हारा वह हिस्सा है जो तरल है, ठोस नहीं है – हवाई है; पकड़ में नहीं आता है। तो जितनी ज्यादा तुम्हारे भीतर ऊर्जा होगी प्राण की, और जागरण और जीवन होगा, उतना ही तुम इन दोनों के बीच साफ फासला कर पाओगे। ये दो बहुत भिन्नतम तुम्हें मालूम पड़ेंगे, तुम्हारे ही – एक हिस्सा यह, एक हिस्सा वह – बिलकुल अलग मालूम पड़ेंगे। इसलिए बहुत गहरा उपयोग है।

प्रश्न : कुंडलिनी जागरण के लिए?

हां, कुंडलिनी जागरण के लिए। इसलिए कुंडलिनी जो है, वह तुम्हारी सोयी हुई शक्ति है। उसको तुम कॉर्बन के साथ न जगा सकोगे; कॉर्बन उसे और सुला देगी; उसको जगाने के लिए ऑक्सीजन बहुत सहयोगी है। इसलिए जिस तरह से भी हो सके... इसलिए सुबह का ध्यान... निरंतर समझा गया है कि सुबह का ध्यान उपयोगी है। उसका कोई और ज्यादा मूल्य नहीं है। उसका मूल्य इतना ही है कि सुबह तुम थोड़ी भी श्वास लो तो भी ज्यादा ऑक्सीजन तुम्हारे भीतर पहुंच जाती है। तो उधर सूर्य उगने के साथ घंटे भर पृथ्वी बहुत

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ही अनोखी स्थिति में होती है। तो उस स्थिति का उपयोग करने के लिए सुबह सारी दुनिया में ध्यान का वक्त चुन लिया गया है। तुम्हारे भीतर जो सोयी हुई शक्ति है उस पर जितनी जोर से प्राणवायु की चोट होगी, उतनी ही शीघ्रता से...

हमें दिखाई नहीं पड़ता न! एक दीया जल रहा है, तो हमें तो तेल दिखाई पड़ता है, बाती दिखाई पड़ती है; माचिस से आग लगायी, वह दिखाई पड़ती है, लेकिन जो जल रही है ऑक्सीजन, वह भर नहीं दिखाई पड़ती। न तेल मूल्य का है उतना, न बाती उतने मूल्य की है, न माचिस उतने मूल्य की है – लेकिन यह दृश्य हिस्सा है; यह शरीर है उसका – यह दिखाई पड़ता है; और ऑक्सीजन जो जल रही है, वह दिखाई नहीं पड़ती।

मैंने सुना है कि एक घर में एक बच्चे को छोड़ गये हैं, और भगवान का मंदिर है उस घर में, और दीया जलाकर रख गये हैं, और जोर की तूफान की हवा आयी है, तो उस बच्चे ने सोचा : बाप कह गया है, दीया बुझ न जाये। उसे चौबीस घंटे घर में वे जलाते हैं। अब जोर की हवा है, बच्चा क्या करे? तो उसने लाकर एक कांच का बड़ा बर्तन उस दीये पर ढांक दिया। जोर की हवा से तो सुरक्षा हो गयी, लेकिन थोड़ी देर में दीया बुझ गया। अब वह बड़ी मुश्किल में पड़ गया। शायद उतनी तेज हवा को भी दीया झेल जाता, लेकिन हवा के न होने को कैसे झेलेगा? वह मर ही गया। पर वह दिखाई नहीं पड़ता न! हमारे भीतर, भी जिसको हम जीवन कह रहे हैं, वह ऑक्सीडाइज़ेशन (ओषदीकरण) ही है – उसी तरह, जैसे दीये में।

असल में अगर हम जीवन को वैज्ञानिक अर्थों में लें, तो वह प्राणवायु के जलने का नाम है। चाहे वह वृक्ष में हो, चाहे आदमी में हो, चाहे दीये में, चाहे सूरज में – कहीं भी हो – जहां भी प्राणवायु जल रही है, वहां जीवन है।

तो जितना तुम प्राणवायु को जला सको, उतनी तुम्हारी जीवन की ज्योति प्रगाढ़ हो जायेगी। और तुम्हारी जीवन की ज्योति ही है कुंडलिनी। वह उतनी ही प्रगाढ़ होकर बहने लगेगी, उतनी ही तीव्र हो जायेगी। तो उस पर प्राणवायु का तीव्र आघात परिणामकारी है।

गुफा में साधना करने के सूक्ष्म कारण

प्रश्न : बहुत से योगी समाधि के प्रयोग के लिए गुफाओं का प्रयोग करते हैं। गुफा में प्राणवायु का प्रवाह बिलकुल नहीं होता है। यह स्थिति

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

समाधि के प्रयोग के लिए किस प्रकार से उपयोगी होती है ?

असल में... असल में बहुत सी बातों का आधार है समाधि में – बहुत सी बातों का; और जो लोग भी गुफाओं का प्रयोग करते हैं समाधि के लिए, उसमें अगर और बातें नहीं हैं, तो समाधि में न जाकर वे मूर्छा में चले जायेंगे... और जिसे वे समाधि समझेंगे, वह केवल प्रगाढ़ तंद्रा होगी, और मूर्छा की अवस्था होगी।

गुफा का उपयोग सिर्फ वही कर सकता है, जिसने बहुत प्राणायाम के द्वारा अपने को ऑक्सीडाइज़ किया हुआ है कि गुफा उसके लिए बेमानी है। इसलिए एक आदमी अगर बहुत गहरा प्राणायाम किया है, और उसके खून का कण-कण, रोआं-रोआं, रेशा-रेशा ऑक्सीडाइज़ हो गया है, तो आठ दिन जमीन के नीचे दब जाये तो मर नहीं जायेगा। और कोई कारण नहीं है। उसके शरीर को जितने ऑक्सीजन की जरूरत है, उसके पास उतना अतिरिक्त संचय है। हमारे पास कोई अतिरिक्त संचय नहीं है। अगर तुम बिना प्राणायाम को समझे, और उस आदमी की बगल में सो गये, तो तुम मरे हुए निकलोगे, वह आदमी आठ दिन के बाद जिंदा निकल आयेगा। असल में आठ दिन के लिए जो न्यूनतम, मिनीमम ऑक्सीजन की जरूरत है, उतना उसके पास संचय है, उतना वह पी गया है। तो गुफा में जा सकता है एक आदमी, और तब गुफा में उसको फायदे हो जायेंगे। ऑक्सीजन को तो इस तरह पूरा कर लेगा, उसका उसे डर नहीं है ज्यादा।

और गुफा जो सुरक्षा देती है और बहुत सी चीजों से, वह उसके लिए गुफा का उपयोग कर रहा है। गुफा बहुत तरह की सुरक्षा देती है। बाहर के शोरगुल से ही नहीं, बाहर की बहुत सी तरंगों से, बाहर की बहुत सी वेव्ज़ से। और पत्थर की, और खास तरह के पत्थर की गुफा के खास अर्थ हैं।

कुछ पत्थर... कुछ विशेष पत्थर, जैसे संगमरमर कुछ तरंगों को भीतर प्रविष्ट नहीं होने देता। इसलिए संगमरमर का मंदिरों में विशेष प्रयोग किया गया। कुछ तरंगें उस मंदिर के भीतर प्रवेश नहीं कर सकतीं... उस पत्थर की वजह से। वह कारीगरी का उतना नहीं है मामला, उसके पीछे बहुत गहरे अनुभव हैं कि कुछ पत्थर किसी खास तरह की तरंगों को पी जाते हैं, भीतर नहीं जाने देते; कुछ पत्थरों पर से कुछ खास तरह की तरंगें वापिस लौट जाती हैं; कुछ पत्थर कुछ खास तरह की तरंगों को आकर्षित करते हैं।

तो विशेष तरह की गुफाएं, विशेष आकार में काटी गयीं; क्योंकि आकार का भी बड़ा मूल्य है। और वह आकार भी विशेष तरंगों को हटाने में सहयोगी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

होता है। पर हमें ख्याल में नहीं होता है, जब एक साइंस (विज्ञान) खो जाती है तो बड़ी मुश्किल हो जाती है।

हम एक कार बनाते हैं। कार को हम एक खास आकार में बनाते हैं। अगर खास आकार में न बनायें तो उसकी गति कम हो जायेगी। कार का आकार ऐसा होना चाहिए कि वह हवा को चीर सके, हवा से लड़ने न लगे। अगर आकार उसका चपटा हो सामने से और हवा से लड़ने लगे तो वह गति को तोड़ेगा। अगर हवा को चीर सके – लड़े न, सिर्फ तीर की तरह चीरे, तो वह हवा के रेसिस्टेंस (प्रतिरोध) से जो उसकी गति को बाधा पड़ती है, वह तो पड़ेगी नहीं, बल्कि चीरने की वजह से पीछे जो वैक्यूम (वायुशून्यता) पैदा होगा, वह भी उसकी गति को बढ़ाने में सहयोगी हो जायेगा।

तुम इलाहाबाद का ब्रिज (पुल) अगर कभी देखोगे, तो इलाहाबाद का ब्रिज बहुत मुश्किल से बना। क्योंकि वह गंगा, उसके पिलर्स (खंभों) को खड़ा न होने दे; वे पिलर्स गिरते ही चले गये। और एक पिलर तो बनाना असंभव ही हो गया – सारे पिलर्स बन गये, लेकिन एक पिलर नहीं बना। तुम वहां देखोगे कि एक जूते के आकार का पिलर है। लेकिन जिसने बनाया, उसे बड़ी मुश्किल हुई। उसने जूते के आकार का पिलर बनाया। तो वह गंगा का जो धक्का है, पी जाता है। जूते का आकार भी तुम्हें चलने में सहयोगी है; वह हवा को काटता है, रोकता नहीं। तो उस ख्याल से जूते के आकार का पिलर है। वह गंगा का जो धक्का था दुश्मनी का, वह उसको एब्ज़ार्व (अवशोषित) कर गया।

गुफाओं के विशेष आकार, आयतन व पत्थरों का रहस्य

तो गुफाओं क़े विशेष आकार हैं, विशेष आयतन हैं – विशेष आकार, विशेष पत्थर और विशेष आयतन हैं। एक व्यक्ति एक खास सीमा तक अपने व्यक्तित्व को आरोपित कर सकता है। और वह अनुभव में आ जाते हैं; उसके सारे रास्ते हैं, वे ख्याल में आ जाते हैं : कि अगर मैं आठ फीट चौड़े और आठ फीट लंबे चौकोर कमरे को अपने से आपूरित कर सकता हूं – यानी मैं तो एक ही जगह बैठा रहूंगा लेकिन मेरे व्यक्तित्व से निकलनेवाली सारी किरणें इतने हिस्से को घेरा बांधकर भर सकती हैं, तो यह जगह बड़ी सुरक्षित हो जायेगी। इसलिए इसमें कम से कम रंध्र होने चाहिए, कम से कम द्वार – एक ही द्वार होगा, और उसके अपने आकार होंगे, और उन आकारों की अपनी विशेषता होगी। तो बाहर के संवेदनों को भीतर न आने देंगे, और भीतर जो

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पैदा हो रहा है उसको बाहर न जाने देंगे। फिर अगर एक ही गुफा पर बहुत साधकों ने प्रयोग किया हो तब तो अदभुत फायदा होता है; उसका ...उसका मूल्य ही बहुत बढ़ जाता है। वह, विशेष तरह की सारी की सारी तरंगें वह गुफा पी जाती और नये साधक के लिए सहयोगी हो जाती है। इसलिए हजारों-हजार साल तक एक-एक गुफा का प्रयोग चला।

अजंता जब पहली दफा खोजा गया, तो वे सब मिट्टी से बंद कर दी गयीं थीं गुफाएं। उसके मिट्टी से बंद करने के कारण थे। ख्याल में नहीं है कि क्यों बंद कर दी गयीं। पर सब गुफाएं मिट्टी में ढंकी हुई मिलीं। सब मिट्टी से बंद थीं पूरी की पूरी। सैकड़ों साल तक उनका कोई पता नहीं रहा था, वह पहाड़ ही रह गया था; क्योंकि मिट्टी भर दी गयी थी और उस मिट्टी पर वृक्ष पैदा हो गये थे। और वे इसलिए भर दी गयी थी कि जब साधक उपलब्ध नहीं हो सके, तो उन गुफाओं में जो विशेषता थी, उसको बचाने के लिए और कोई रास्ता नहीं रहा, तो उसे बंद कर दिया गया। कभी भी कोई साधक खोजेगा तो फिर काम में लायी जा सकती हैं। लेकिन वे विज़िटर्स के लिए नहीं थीं; वे दर्शकों के लिए नहीं थीं। दर्शकों ने सब नष्ट कर दिया; अब वहां कुछ भी नहीं है, दर्शकों ने सब नष्ट कर दिया।

इन गुफाओं में ऑक्सीज़न का तो फायदा नहीं मिलेगा। फायदे दूसरे हैं, लेकिन साधना तो बहुत जटिल मामला है। उसके बहुत हिस्से हैं। पर उनके लिए गुफा फ़ायदे की हो सकती है, जिन्होंने काफी प्रयोग किया है। फिर जो गुफा में बैठता था, वह गुफा में नहीं बैठा रहता था, समय-समय पर गुफा में था, समय-समय पर गुफा के बाहर था। जो बाहर करने योग्य था वह बाहर कर रहा था, जो भीतर करने योग्य था वह भीतर कर रहा था।

मंदिर हैं, मस्जिद हैं, वे कभी इसी अर्थ में खोजे गये थे जहां एक विशेष तरह की तरंगों और कंपनों का संग्रह है; और उन तरंगों और कंपनों का उपयोग किया जा सकता है। कहीं अचानक किसी स्थल पर तुम पाओगे कि तुम्हारे विचार एकदम से बदल गये — हालांकि तुम पहचान न पाओगे; तुम यही समझोगे कि अपने ही भीतर कोई फर्क हो गया। तुम अचानक किसी आदमी के पास जाकर पाओगे कि तुम दूसरे आदमी हो गये हो थोड़ी देर के लिए; तुम्हारा कोई दूसरा पहलू ही ऊपर आ गया। तुम यही समझोगे कि अपने भीतर ही कुछ हो गया है, मूड की बात है। ऐसा नहीं है; इतना आसान नहीं है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

महापुरुषों के मृत शरीर भी मूल्यवान

अब जैसे बड़ी खोजबीन चलती है कि पिरामिड्स किसलिए बनाये गये; क्या हैं ? इतने-इतने बड़े पिरामिड्स रेगिस्तान में बनाने का क्या प्रयोजन है ? कितना श्रम व्यय हुआ है... कितनी शक्ति ? और सिर्फ आदमियों की लाशें गड़ाने के लिए इतनी बड़ी कब्रें बनाना बिलकुल बेकार है। वे सब के सब साधना के लिए विशेष अर्थ में बनाये गये स्थान हैं। और साधना के उपयोग के लिए ही विशेष लोगों की लाशें भी वहां रखी गयीं।

अभी तिब्बत में हजार-हजार, दो-दो हजार साल पुराने साधकों की ममीज़ (सुरक्षित लाशें) हैं, जिनको बहुत गहरे में सुरक्षित रखा हुआ है। जो शरीर बुद्ध के पास रहा हो, वह शरीर साधारण नहीं रह जाता। जिस शरीर के साथ अस्सी साल तक बुद्ध जैसी आत्मा संबंधित रही हो, वह शरीर भी साधारण नहीं रह जाता; वह काया भी कुछ ऐसी चीजें पी जाती हैं, और ऐसी तरंगें पकड़ लेती हैं जो कि अनूठी हैं – जिनका कि अब दोबारा शायद जगत में वैसा होगा कि नहीं होगा, कहना कठिन हो जाता है।

जीसस के मरने के बाद उनकी लाश को एक गुफा में रख दिया गया था; सुबह दफना दिया जायेगा; लेकिन वह लाश फिर मिली नहीं। और यह बड़ी मिस्ट्री (रहस्य) है ईसाइयत के लिए कि वह क्या हुआ; वह कहां गयी ? फिर कहानी है कि वे कहीं देखे गये, दिखाई पड़े, तो रिसरकशन हुआ; वे पुनरुज्जीवित हो गये – लेकिन फिर कब मरे ? पुनरुज्जीवित होकर फिर उनका जीवन क्या है ? ईसाइयों के पास उनकी कोई कथा नहीं है। असल में, जीसस की लाश इतनी कीमती है कि उसे तत्काल उन जगहों में पहुंचा दिया गया जहां वह सुरक्षित की जा सके, बहुत लंबे समय के लिए। और उसकी कोई खबर सामान्य नहीं बनाई जा सकती थी, क्योंकि इस लाश को बचाना बहुत जरूरी था। ऐसा आदमी मुश्किल से कभी होता है।

तो जो ममीज़ हैं पिरामिड्स में, और ये जो पिरामिड्स हैं, इनका जो आकार है, इनको जो...

गहरे ध्यान में कम श्वास की जरूरत

प्रश्न : जब हमारा गहरे ध्यान में प्रवेश होता है तब शरीर क्रमशः जड़ होता जाता है और श्वास बिलकुल क्षीण होने लगती है, मिटने लगती है। श्वास के इस धीमे होने के कारण शरीर में ऑक्सीजन तो घटता है। तो ऑक्सीजन की इस कमी का और शरीर के जड़ होने का ध्यान

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

व समाधि से क्या संबंध है ?

हां, हां, असल में... असल में, जब श्वास पूरी तीव्रता से जग जायेगी, और तुम्हारे... और तुम्हारे शरीर के बीच एक गैप पैदा हो जायेगा उसकी तीव्रता के कारण, तुम्हारा सोया हिस्सा और तुम्हारा जागा हिस्सा भिन्न मालूम होने लगेगा, तो जैसे ही तुम इस जागे हुए हिस्से की तरफ यात्रा शुरू करोगे, शरीर को फिर ऑक्सीजन की कोई जरूरत नहीं है — शरीर को। अब तो उचित है कि बिलकुल सो जाये वह; अब तो उचित है कि वह बिलकुल जड़ हो जाये, मुर्दे की तरह पड़ा रह जाये; क्योंकि तुम्हारी जीवन-ऊर्जा अब शरीर की तरफ नहीं बह रही, अब तुम्हारी जीवन-ऊर्जा तो आत्मा की तरफ बहनी शुरू हो गयी है।

ऑक्सीजन की जो जरूरत है वह है शरीर की; वह जरूरत आत्मा की नहीं है। समझ रहे हो न तुम ? वह है जरूरत शरीर की। इसलिए जब तुम्हारी आत्मा की तरफ तुम्हारी जीवन-ऊर्जा बहने लगी, तो अब शरीर के लिए बहुत मिनिमम (अल्पतम) ऑक्सीजन की जरूरत है... जितने से कि वह सिर्फ जीवित रह पाये, बस। इससे ज्यादा की कोई जरूरत नहीं है। इससे ज्यादा अगर उसको मिलेगी, तो वह बाधा बनेगी। इसलिए क्षीण होती जायेगी श्वास पीछे तुम्हारी। उसका जगाने के लिए उपयोग है... कि तुम्हारे भीतर कोई चीज जग गयी; जब वह जग गयी, तब उसका कोई उपयोग नहीं है। अब तुम्हारे शरीर को बहुत कम से कम श्वास की जरूरत है। कुछ क्षण तो ऐसे आ जायेंगे जब श्वास बिलकुल बंद हो जायेगी। होगी ही नहीं।

समाधि में श्वास का खो जाना

असल में, जब तुम ठीक संतुलन पर पहुंचोगे, बैलेंस पर पहुंचोगे — जिसको हम समाधि कहें, उस पर पहुंचोगे — तो श्वास बंद हो जायेगी। लेकिन हमें श्वास बंद होने का कोई ख्याल नहीं है कि उसका मतलब क्या होता है ? अगर अभी हम अनुभव भी करें तो हम बंद करेंगे। वह अनुभव वह नहीं है। श्वास चल रही है, हमने रोक ली, यह एक अभ्यास है। श्वास बाहर जा रही है, श्वास भीतर आ रही है, ये दो अनुभव हमारे हैं — बाहर जाना, भीतर आना; बाहर जाना, भीतर आना — लेकिन एक दिन तो ऐसा आता है कि श्वास आधी बाहर है और आधी भीतर है और सब ठहर गया है। तो कुछ क्षण ऐसे आयेंगे ध्यान में जबकि तुम्हें लगेगा कि श्वास ठहर तो नहीं गयी ! कहीं बंद तो नहीं हो गयी ! कहीं मर तो नहीं जाऊंगा ! बिलकुल

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ऐसे क्षण आयेंगे। जितना तुम गहरे जाओगे, उतना ही फिर श्वास के कंपन कम होते चले जायेंगे; क्योंकि उस गहराई पर तुम्हें ऑक्सीजन की कोई जरूरत नहीं है; उसकी जरूरत थी बिलकुल पहली चोट पर। यह ऐसा ही है, जैसे कि मैंने चाबी लगायी ताले में और ताला खुल गया। अब मैं चाबी लगाये ही थोड़ा चला जाऊंगा, चाबी बेकार हो गयी; वह ताले में अटकी रह गयी, मैं भीतर चला गया। तुम कहोगे कि आपने पहले चाबी लगायी, अब आप भीतर चाबी क्यों नहीं लगा रहे हैं। वह चाबी लगायी ही इसलिए थी कि वह द्वार पर ही उसकी जरूरत थी।

जब तक तुम्हारे भीतर जगी नहीं है कुंडलिनी, तब तक तो तुम्हें श्वास की चाबी का जोर से प्रयोग करना पड़ेगा; लेकिन जैसे ही वह जग गयी, यह बात बेकार हो गयी, अब तुम भीतर की यात्रा पर चल पड़े हो। और अब तुम्हारा शरीर बहुत कम श्वास मांगेगा। यह तुम्हें बंद नहीं करनी है, यह अपने से होने लगेगी धीमी धीमी धीमी धीमी... और ऐसे क्षण आयेंगे बीच-बीच में, झलक आयेगी ऐसी कि जैसे सब बंद हो गया, सब ठहर गया।

समाधि जीवन का नहीं, अस्तित्व का अनुभव

असल में वह जो क्षण है जब श्वास बिलकुल ठहरी हुई है – न बाहर जाती, न भीतर जाती; वह परम संतुलन का जो क्षण है, वही समाधि का क्षण है। उस क्षण में तुम अस्तित्व को जानोगे, जीवन को नहीं, इस फर्क को ठीक से समझ लेना – लाइफ को नहीं, इग्ज़िसटेंस को। जीवन की जानकारी तो श्वास से ही बंधी है; जीवन तो ऑक्सीडाइज़ेशन ही है; वह तो श्वास का ही हिस्सा है, लेकिन उस क्षण तुम उस अस्तित्व को जानोगे जहां श्वास भी अनावश्यक है, जहां सिर्फ होना है; जहां पत्थर हैं, पहाड़ हैं, चांद हैं, तारे हैं – जहां सब ठहरा हुआ है; जहां कोई कंपन भी नहीं है। उस क्षण तुम्हारे श्वास का कंपन भी रुक जायेगा। वहां श्वास का भी प्रवेश नहीं है, क्योंकि वहां जीवन का भी प्रवेश नहीं है। वह जो है बियांड – जीवन के भी पार।

और ध्यान रहे, जो चीज मृत्यु के पार है वह जीवन के भी पार होगी। इसलिए परमात्मा को हम जीवित नहीं कह सकते; क्योंकि जिसके मरने की कोई संभावना नहीं है उसे जीवित कहना फिजूल है; कोई अर्थ नहीं है। परमात्मा का कोई जीवन नहीं है, अस्तित्व है। हमारा जीवन है; अस्तित्व के बाहर जब हम आते हैं, तो हमारा जीवन है; जब हम अस्तित्व में वापिस लौटते हैं तो हमारी मौत है। जैसे कि लहर उठी सागर में, यह इसका जीवन है – लहर

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

का । इसके पहले लहर तो नहीं थी, सागर था । उसमें कोई कंपन न था, उसमें लहर थी नहीं । लहर उठी, यह जीवन शुरू हुआ; फिर लहर गिरी, यह लहर की मौत हुई । उठना, लहर का जीवन है; गिरना, मर जाना है । लेकिन सागर का जो अस्तित्व है, लहरहीन है । जब लहर नहीं उठी थी जो तब भी था, और अब लहर गिर जायेगी तब भी होगा, उस अस्तित्व का, उस ट्रैंक्विलिटि (समता) का जो अनुभव है वह समाधि है ।

तो समाधि जीवन का अनुभव नहीं है, अस्तित्व का अनुभव है; एग्ज़िस्टेंशियल (अस्तित्वगत) है वह । वहां श्वास की कोई जरूरत नहीं है। वहां श्वास का कोई अर्थ नहीं है । वहां 'नहीं श्वास' का कोई सवाल नहीं है, श्वास का कोई सवाल नहीं है । वहां कभी-कभी सब ठहर जायेगा ।

समाधिस्त व्यक्ति के वापिस लौटने की समस्या

इसलिए जब गहरी साधक की स्थिति हो, तो अनेक बार उसे जीवित रखने के लिए और लोगों की जरूरत पड़ती है, अन्यथा वह खो जा सकता है । अन्यथा वह खो जा सकता है; वह अस्तित्व से वापिस ही न लौटे ।

रामकृष्ण बहुत बार ऐसी हालत में पहुंच जाते थे । तो छह-छह दिन लग जाते, वे नहीं लौटन्ने की हालत में हो जाते । रामकृष्ण को इतना सम्मान है, लेकिन जिस आदमी ने रामकृष्ण को दुनिया को दिया, उसका हमें पता भी नहीं है । उनका एक भतीजा (हृदयराम) उनके पास था । उसने उनको बचाया निरंतर । वह रात-रात भर जागता, जबरदस्ती मुंह में पानी डालता, जबरदस्ती दूध पिलाता; श्वास घुटने लगती तो मालिश करता । वह उनको वापिस लाता रहा ।

रामकृष्ण की, विवेकानंद ने तो उनकी चर्चा की दुनिया से, लेकिन जिस आदमी ने बचाया, उसका तो हमें पता भी नहीं चलता । उस आदमी ने सारी मेहनत की । वर्षों की मेहनत थी उसकी । और रामकृष्ण तो कभी भी जा सकते थे; क्योंकि वह इतना आनंदपूर्ण है कि लौटना कहां ?

तो अस्तित्व के उस क्षण में खोना संभव है बिलकुल । वह बहुत बारीक रेखा है जहां से तुम उस पार चले जा सकते हो । तो उससे बचाने के लिए स्कूल पैदा हुए, उससे बचाने के लिए आश्रम पैदा हुए । इसलिए जिन संन्यासियों ने आश्रम नहीं बनाये, वे संन्यासी समाधि में बहुत गहरे नहीं जा सके । जिनका संन्यास परिव्राजक का है, सिर्फ घूमते रहने का, वे ज्यादा गहरे नहीं जा सके क्योंकि उस गहरे जाने के लिए ग्रुप चाहिए, स्कूल चाहिए; उस गहरे जाने में

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

लिए और बचाव के लिए और लोग भी चाहिए जो जानते हों, नहीं तो आदमी कभी भी खो जा सकता है।

तो उन्होंने छोटी सी व्यवस्था कर ली कि कहीं ज्यादा देर रुकेंगे तो मोह हो जायेगा। लेकिन जिसको ज्यादा देर रुकने से मोह पैदा हो जाता है, उसको कम देर से भी होता होगा – थोड़ा कम होता होगा, और क्या फर्क पड़ेगा! तीन महीने में ज्यादा होता होगा, तीन दिन में जरा कम होता होगा। मात्रा का ही फर्क पड़ेगा, और तो कोई फर्क पड़नेवाला नहीं है।

तो जिन-जिन लोगों के संन्यासी सिर्फ घूम रहे हैं, उनमें योग खो जायेगा, उनमें समाधि खो जायेगी, उनमें समाधि नहीं बच सकती, क्योंकि समाधि के लिए ग्रुप (साधकों का समूह) चाहिए। व्यक्ति तो समाधि में जा सकता है, लेकिन उसको लौटाना बहुत मामला और है।

तो ध्यान तक तो व्यक्ति को कोई कठिनाई नहीं है, समाधि के क्षणों के बाद बहुत सुरक्षा की जरूरत है। और वही क्षण है, जब वह बचाया जा सके तो उस लोक की खबरें ला सकता है – जहां उसने 'पीप' किया, जहां उसने झांक लिया जरा सा। उसको अगर हम लौटा सकें तो वहां की थोड़ी खबरें ला सकता है। जितनी खबरें हमें मिली हैं, वे उन थोड़े से लोगों की वजह से मिली हैं जो वहां से थोड़ा सा लौट आये। नहीं तो उस लोक की हमें कोई खबर नहीं मिल सकती। उसके बाबत सोचा तो जा ही नहीं सकता; उसके सोचने का तो कोई उपाय नहीं है। और अक्सर यह है कि वहां जो जाये उसके लौटने की कठिनाई हो जाती है; वह वहां से खो सकता है। वह प्वाइंट आफ नो रिटर्न (न लौटने का बिंदु) है। वह वह जगह है जहां से छलांग हो जाती है और खड्ड मिल जाता है; जहां से रास्ता टूट जाता है और पीछे लौटने के लिए रास्ता नहीं दिखाई पड़ता। उस वक्त बड़े... बड़े काम की जरूरत है।

इधर मैं निरंतर चाहता हूं; जिस दिन भी तुम्हें मैं समाधि की तरफ उन्मुख करूं, उस दिन व्यक्ति कीमती नहीं रह जाता, उस दिन फौरन स्कूल चाहिए जो तुम्हारी फिक्र ले सके – अन्यथा तुम तो गये – और तुम्हें लौटा सके; और तुम्हें जो अनुभव मिला है वह सुरक्षित करवा सके। नहीं तो अनुभव खो जायेगा।

सहज समाधिस्थ व्यक्ति की लयबद्ध श्वास

प्रश्न : सहज समाधि की अवस्था में जो व्यक्ति जीता है, उसकी श्वास की अवस्था कैसी होती है?

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

बहुत ही रिदमिक हो जाती, बहुत लयबद्ध हो जाती, संगीतपूर्ण हो जाती। और बहुत सी बातें होती हैं। जो आदमी चौबीस घंटे ही सहज समाधि में है, वह जिसका मन डोलता नहीं, इधर-उधर नहीं होता; जैसा है वैसा ही बना रहता है; जो जीता नहीं अस्तित्व में होता है, ऐसा जो आदमी है, उसकी श्वास एक बहुत ही अपने तरह की लयबद्धता ले लेती। और जब वह कुछ भी नहीं कर रहा है – बोल नहीं रहा है, खाना नहीं खा रहा है, चल नहीं रहा है, तब श्वास उसके लिए बड़ी आनंदपूर्ण स्थिति हो जाती; तब सिर्फ होना, सिर्फ श्वास का चलना इतना रस देता है जितनी और कोई चीज नहीं देती... और बहुत संगीतपूर्ण हो जाती, बहुत नादपूर्ण हो जाती।

उस अनुभव को थोड़ा बहुत श्वास की व्यवस्था से भी अनुभव किया जा सकता है। इसलिए श्वास की व्यवस्थाएं पैदा हुईं : कि जैसा सहज समाधिस्थ व्यक्ति की श्वास होती है, जिस रिदम्, जिस छंद में चलती है, उसी छंद में दूसरा आदमी भी अपनी श्वास चलाये, तो उसे शांति का अनुभव होगा। इसलिए सब प्राणायाम इत्यादि की अनेक व्यवस्थाएं पैदा हुईं। ये अनेक समाधिस्थ लोगों के पास उनकी श्वास की लयबद्धता को देखकर पैदा की गयी हैं। थोड़ा परिणाम होगा, और सहायता मिलेगी।

और यह जो श्वास है, सहज समाधिस्थ व्यक्ति की, यह अत्यंत मिनिमम हो जाती, न्यूनतम हो जाती; क्योंकि जीवन अब जो है उतना अर्थपूर्ण नहीं रह जाता, जितना अस्तित्व अर्थपूर्ण हो जाता है – यानी इस व्यक्ति के भीतर एक और दिशा खुल गयी है जो अस्तित्व की है, जहां श्वास वगैरह की कोई जरूरत नहीं है। वह जीता तो वहीं है, वह रहता तो वहीं है, वह हमसे जब संबंधित होता है तभी वह शरीर का उपयोग कर रहा है, अन्यथा वह शरीर का उपयोग नहीं कर रहा है। और हमसे संबंधित होने के लिए उसे जो-जो करना पड़ता है – वह खाना खा रहा है, कपड़े पहन रहा है, सो रहा है, स्नान कर रहा है, वह हमसे संबंधित होने की व्यवस्था है; उनका अब उसके लिए कोई अर्थ नहीं है। और इस सबके लिए जितनी जीवन-ऊर्जा चाहिए, उतनी उसकी श्वास चल रही है। वह बहुत न्यून हो जाती है।

इसलिए वह बहुत कम ऑक्सीजन की जगह में भी जी सकता है।

निर्वात स्थानों में साधकों का रहना

इसलिए पुराने मंदिरों या पुरानी गुफाओं में द्वार-दरवाजे नहीं हैं। जिसको हम आज की दुनिया में कहें तो बहुत हैरानी की बात है; क्योंकि वे

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सभी के सब हमें बिलकुल ही स्वास्थ्य विज्ञान के विपरीत मालूम पड़ेंगे – सारे पुराने मंदिर – न खिड़की है, न दरवाजा है, न कुछ है। गुफाएं हैं, कुछ उपाय नहीं है... वायु के आने-जाने का कोई खास उपाय नहीं दिखाई पड़ता। जो उनके भीतर रह रहा था, उसे बहुत उपयोग नहीं था। और वायु को, वह चाहता नहीं था कि वह ज्यादा भीतर आये-जाये। क्योंकि वायु के जो कंपन भीतर आते हैं, वहा भीतर के जो और एस्ट्रल कंपन हैं, जो सूक्ष्म कंपन है, उनको सबको नष्ट कर डालते हैं; उनके धक्के से उनको जला जाते हैं। इसलिए वह इनकी सुरक्षा कर रहा था। वह आने देने के लिए उत्सुक नहीं था उनका बहुत। लेकिन आज नहीं हो.सकता, क्योंकि आज उसके लिए पहले पूरी श्वास की लंबी साधना चाहिए, तब... या समाधिस्थ स्थिति चाहिए, तब।

अनापानसती : कीमती प्रयोग है

प्रश्न : बुद्धिस्ट साधना में जो अनापानसति है, उसमें श्वास पर ध्यान करने से ऑक्सीजन की मात्रा पर क्या असर पड़ता है ?

बहुत असर पड़ता है। असल में, यह बहुत मजे की बात है, और समझने जैसी है : जीवन की जो भी क्रियाएं हैं, इन में किसी पर भी अगर तुम ध्यान ले जाओ, तो उनकी गति बढ़ जाती है। जीवन की जो क्रियाएं हैं वे ध्यान के बाहर चल रही हैं। जैसे, तुम्हारी नाड़ी चल रही है; तो जब तुम्हारा डॉक्टर तुम्हारी नाड़ी जांचता है, तो वह उतनी ही नहीं होती जितनी जांचने के पहले थी, थोड़ी सी बढ़ जाती है; क्योंकि तुम्हारा ध्यान और डॉक्टर – दोनों का ध्यान उस पर चला जाता है। और अगर लेडी (महिला) डॉक्टर जांच रही है तो और ज्यादा बढ़ जायेगी; क्योंकि ध्यान और ज्यादा चला जायेगा। समझ रहे हैं न ? उतनी ही नहीं होती, जितनी थी; थोड़ा सा अंतर पड़ जाता है। इसको तुम ऐसा प्रयोग करो : अपनी नाड़ी ही जांचो पहले, और फिर दस मिनट नाड़ी पर ध्यान रखो कि कैसी चल रही है, और इसके बाद जांचो, तो तुम पाओगे : उसके कंपन बढ़ गये।

असल में शरीर के भीतर जो भी क्रियाएं चल रही हैं, वे हमारे ध्यान के बाहर चल रही हैं। ध्यान के जाते ही उनकी गति बढ़ जायेगी। ध्यान की मौजूदगी उनकी गति को बढ़ाने के लिए कटेलिटिक एजेंट (उत्प्रेरक तत्व) का काम करती है।

तो अनापानसति जो है, वह जो प्रयोग है, वह बहुत कीमती प्रयोग है। वह है श्वास पर ध्यान देने का प्रयोग। श्वास को घटाना-बढ़ाना नहीं है, श्वास

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जैसी चल रही है, उसे तुम्हें देखना है, लेकिन तुम्हारे देखते से ही वह बढ़ जाती। तुमने देखा, तुम ऑब्ज़र्वर (निरीक्षक) हुए कि श्वास की गति बढ़ी। वह अनिवार्य है उसका बढ़ना। तो उसके बढ़ जाने से परिणाम होंगे। और उसको देखने के भी परिणाम होंगे। लेकिन अनापानसती का मूल लक्ष्य उसको बढ़ाना नहीं है, उसका मूल लक्ष्य तो उसे देखना है; क्योंकि जब तुम अपनी श्वास को देख पाते हो – धीरे धीरे धीरे निरंतर निरंतर देखने से श्वास तुमसे अलग होती जाती है; क्योंकि जिस चीज को भी तुम दृश्य बना लेते हो, तुम बहुत गहरे में उससे भिन्न हो जाते हो।

असल में दृश्य से द्रष्टा एक हो ही नहीं सकता; उससे वह तत्काल भिन्न होने लगता है। जिस चीज को भी तुम दृश्य बना लोगे, उससे तुम भिन्न होने लगोगे। तो श्वास को अगर तुमने दृश्य बना लिया अपना, और चौबीस घंटे – चलते, उठते, बैठते तुम उसको देखने लगे – ज़ा रही, आ रही; जा रही, आ रही – तो तुम देखते रहे, देखते रहे, तुम्हारा फासला अलग होता जायेगा; एक दिन तुम अचानक पाओगे कि तुम अलग खड़े हो और श्वास... वह चल रही है; बहुत दूर तुमसे उसका आना-जाना हो रहा है। तो इससे वह घटना घट जायेगी : तुम्हारे शरीर से पृथक होने का अनुभव उससे हो जायेगा।

इसलिए किसी भी चीज को, अगर तुम शरीर की गतियों को देखने लगो – रास्ते पर चलते वक्त ख्याल रखो कि बांया पैर उठा, दांया पैर उठा – बस, तुम अपने दोनों पैर ही देखते रहो एक पंद्रह दिन, तुम अचानक पाओगे कि तुम पैर से अलग हो गये; अब तुम्हें पैर अलग से उठते हुए मालूम पड़ने लगेंगे और तुम बिलकुल देखनेवाले रह जाओगे। तुम्हारे ही पैर तुम्हें बिलकुल ही मैकेनिकल (यांत्रिक) मालूम होने लगेंगे कि उठ रहे हैं, चल रहे हैं, और तुम बिलकुल अलग हो गये हो।

इसलिए ऐसा आदमी कह सकता है कि चलता हुआ चलता नहीं, बोलता हुआ बोलता नहीं, सोता हुआ सोता नहीं, खाता हुआ खाता नहीं; ऐसा आदमी कह सकता है। उसका दावा गलत नहीं है, मगर उसका दावा समझना बहुत मुश्किल है। अगर वह खाने में साक्षी है तो वह खाते हुए खाता नहीं, ऐसा उसे पता चलता है; अगर वह चलने में साक्षी है तो वह चलते हुए चलता नहीं, क्योंकि उसका साक्षी है। तो अनापानसति का तो उपयोग है, पर दूसरी दिशा से वह यात्रा है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पूर्ण श्वास से पूर्ण जीवन

प्रश्न : तीव्र व गहरी श्वास से क्या आवश्यकता से अधिक ऑक्सीजन फेफड़े में नहीं चली जायेगी और उससे क्या कोई हानि नहीं होगी ?

असल में कोई भी आदमी ऐसा नहीं है जिसके पूरे फेफड़े में ऑक्सीज़न जाती हो। कोई छह हजार छिद्र अगर हैं फेफड़े में, तो हजार डेढ़ हजार छिद्रों तक स्वस्थ आदमी की जाती है, जिसको पूर्ण स्वस्थ कहें; बाकी में कॉर्बनडायऑक्साइड भरी रहती है। वे सब गंदी हवा से भरे रहते हैं। तो इसलिए ऐसा तो आदमी मिलना मुश्किल है जो जरूरत से ज्यादा ले ले। जरूरत में ही लेनेवाला आदमी मिलना मुश्किल है। बहुत बड़ा हिस्सा बेकार पड़ा रहता है। उस तक, पूरे तक आप पहुंचा दें तो बड़े परिणाम होंगे। बड़े अदभुत परिणाम होंगे। आप की कांशसनेस (चेतना) का एक्सपांशन (विस्तार) एकदम से हो जायेगा। क्योंकि जितनी मात्रा में आपके फेफड़े में ऑक्सीजन पहुंचती है, उतना ही जीवन का आपको विस्तार मालूम पड़ता है; उतनी ही आपके जीवन की सीमा होती है। जैसे-जैसे फेफड़े में ज्यादा पहुंचती है, आपके जीवन का विस्तार बड़ा होता है। तो अगर हम पूरे फेफड़े तक ऑक्सीजन पहुंचा सकें, तो मैक्ज़ीमम (अधिकतम) जिंदगी का हमें अनुभव होगा।

और स्वस्थ और बीमार आदमी में वही फर्क है कि बीमार आदमी और भी कम पहुंचा पाता है... और भी कम पहुंचा पाता है। बहुत बीमार को हमें ऑक्सीजन ऊपर से देनी पड़ती है, वह पहुंचा ही नहीं पाता। उस पर ही छोड़ देंगे तो वह मर जायेगा। बीमार और स्वस्थ को भी हम अगर चाहें तो ऑक्सीजन की मात्रा से भी नाप सकते हैं कि उसके भीतर कितनी ऑक्सीजन जा रही है। इसलिए आप दौड़ेंगे तो स्वस्थ हो जायेंगे, क्योंकि ऑक्सीजन की मात्रा बढ़ जायेगी; व्यायाम करेंगे तो स्वस्थ हो जायेंगे, क्योंकि ऑक्सीजन की मात्रा बढ़ जायेगी। आप कुछ भी ऐसा करेंगे जिससे ऑक्सीजन की मात्रा बढ़ती हो, वह आपके स्वास्थ्य में वर्द्धक हो जायेगी। और आप कुछ भी ऐसा करेंगे जिससे ऑक्सीजन की मात्रा कम होती है, वह आपकी बीमारी के लाने में सहयोगी हो जायेगी। लेकिन जितनी आप ले सकते हैं उतनी भी कभी नहीं ले रहे; और जितनी आप पूरी ले सकते हैं उससे ज्यादा लेने का सवाल ही नहीं उठता। आप ले नहीं सकते। आपका पूरा फेफड़ा भर जाये, उससे ज्यादा आप ले नहीं सकते; उतनी भी नहीं ले पायेंगे, उतना भी बहुत मुश्किल मामला है। उतनी भी नहीं ले पायेंगे।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रश्न : हम श्वास में जो वायु लेते हैं उसमें केवल ऑक्सीजन ही नहीं होती, उसमें नाइट्रोजन, हाइड्रोजन आदि अनेक प्रकार की हवाएं भी हैं। क्या उन सब का ध्यान के लिए सहयोग है ?

बिलकुल ही ध्यान के लिए सहयोगी होगी, क्योंकि हवा में जो कुछ भी है... और बहुत कुछ है – ऑक्सीजन ही नहीं है और बहुत कुछ है। वह सब का सब आपके लिए, जीवन के लिए सार्थक है, इसलिए आप जिंदा हैं। जिस ग्रह पर, जिस उपग्रह पर हवा में उतनी मात्रा में ये सब चीजें नहीं हैं, वहां जीवन नहीं हो सकेगा। वहं जीवन की पॉसिबिलिटि (संभावना) है सब का सब। तो इसलिए इतनी चिंता लेने की जरूरत नहीं है। उसकी चिंता लेने की जरूरत नहीं है। और जितनी तीव्रता से आप लेंगे उतना हितकर है, क्योंकि उतनी तीव्रता में ऑक्सीजन ही ज्यादा से ज्यादा प्रवेश कर पायेगी और आपका हिस्सा बन पायेगी। बाकी चीजें फेंक दी जायेंगी। और वह जिस अनुपात में जो चीजें हैं वे सब की सब आपके जीवन के लिए उपयोगी हैं; उससे कोई हानि नहीं है। ...उससे कोई हानि नहीं है।

हलकेपन का अनुभव और उसकी अभिव्यक्ति

प्रश्न : तीव्र श्वास-प्रश्वास के बाद शरीर बिलकुल हलका सा महसूस होता है !

हां, हलका महसूस होगा। हलका महसूस होगा, क्योंकि हमारे शरीर का जो बोध है, शरीर का बोध ही हमारा भारीपन है। जिसको हम भारीपन कहते हैं, वह हमारे शरीर का बोध है। इसलिए बीमार दुबला-पतला हो तो भी उसको बोझ मालूम पड़ता है और स्वस्थ्य आदमी कितना ही वजनी हो तो भी उसे हलका मालूम पड़ेगा। शरीर की जो कांशसनेस (बोध) है हमारी, वह ही हमारा बोझ है। और शरीर की कांशसनेस, शरीर का जो बोध है उसी मात्रा में होता है जिस मात्रा में शरीर में तकलीफ हो। अगर पैर में दर्द है तो पैर का पता चलता है, सिर में दर्द है तो सिर का पता चलता है; अगर कहीं कोई तकलीफ नहीं है, तो शरीर का पता ही नहीं चलता।

इसलिए स्वस्थ आदमी की परिभाषा ही है : जो विदेह अनुभव करे; जिसको ऐसा न लगे की मैं शरीर हूं। तो समझना चाहिए वह आदमी स्वस्थ है। अगर उसको कोई भी हिस्सा लगता हो कि यह मैं हूं, तो समझ लेना चाहिए वह हिस्सा बीमार है।

तो जिस मात्रा में ऑक्सीजन बढ़ेगी और कुंडलिनी जगेगी, तो कुंडलिनी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

के जगते ही आपको आत्मिक प्रतीतियां शुरू हो जायेंगी जो कि शरीर की नहीं हैं। और सब बोझ शरीर का है। तो उनकी वजह से तत्काल हलकापन लगना शुरू हो जायेगा। बहुत हलकापन लगेगा। बहुत लोगों को लगेगा कि जैसे हम जमीन से ऊपर उठ गये। सभी उठ नहीं जाते, कभी ऐसा घटती है सौ में एकाध दफा घटना कि कभी शरीर थोड़ा ऊपर उठता है; आमतौर से उठता नहीं है, लेकिन अनुभव बहुत लोगों को होगा। जब आंख खोलकर देखेंगे तो पायेंगे, बैठे तो वहीं हैं! लेकिन यह क्या अनुभव हुआ था कि उठ गये? असल में इतनी वेटलेसनेस (भारशून्यता) मालूम हुई, इतना हलकापन मालूम हुआ कि हलकेपन को जब हम चित्रों की भाषा में कहेंगे तो कैसे कहेंगे? और हमारा जो गहरा मन है वह भाषा नहीं जानता, वह चित्र जानता है। तो वह यह नहीं कह सकता कि हलके हो गये, वह चित्र बना लेता है कि जमीन से उठ गये।

अचेतन मन की चित्रमय भाषा

हमारा जो गहरा मन है अचेतन, वह चित्र ही जानता है। इसलिए रात सपने में भाषा नहीं होती आपके पास, चित्र ही चित्र होते हैं। और सपने को सारी बातों को चित्रों में बदलना पड़ता है, इसलिए हमारे सपने समझ में नहीं आते सुबह; क्योंकि हम जो सुबह जागकर भाषा बोलते हैं, वह सपने में नहीं होती; और जो भाषा हम सपने में अनुभव करते हैं, वह सुबह नहीं होती। तो इतना बड़ा ट्रांसलेशन (अनुवाद) है सपने से जिंदगी में कि उसके लिए बड़े भारी व्याख्याकार चाहिए, नहीं तो वह ट्रांसलेट (अनुवादित) नहीं होता।

अब एक आदमी बहुत महत्वाकांक्षी है, बहुत एंबिशियस है, तो सपने में वह एंबीशन को कैसे अनुभव करे? वह पक्षी हो जायेगा। वह आकाश में ऊपर से ऊपर उड़ता जायेगा; सब उसके नीचे आ जायेंगे। अब महत्वाकांक्षा सपने में जब प्रकट होगी तो उड़ान की तरह प्रकट होगी... उड़ रहा है एक आदमी। कुछ आदमी उड़ने-उड़ने के सपने देखेंगे, वह महत्वाकांक्षा का सपना है। लेकिन महत्वाकांक्षा शब्द वहां हो गयी है। सुबह वह आदमी कहेगा, क्या बात है... मुझे उड़ने-उड़ने के सपने आते हैं! पर उसकी जो महत्वाकांक्षा है वह सपने में उड़ना बन जाती है।

ऐसे ही ध्यान की गहराई में पिक्टोरियल लैंगवेज (चित्रों की भाषा) होगी। हलकापन अनुभव होगा तो ऐसा लगेगा शरीर उठ गया। शरीर उठ गया है, यही हलकेपन का पिक्चर (चित्र) बन सकता है, और तो कोई पिक्चर बन नहीं सकता। और कभी बहुत ही हलकेपन की हालत में शरीर उठ भी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जाता है ।

शारीरिक रूपांतरण की प्रक्रिया

प्रश्न : कभी-कभी टूटने का डर लगता है, जैसे कि कुछ टूट जायेगा !

लग सकता है, बिलकुल लग सकता है । ...बिलकुल लग सकता है ।

प्रश्न : इसका डर नहीं रखना चाहिए क्या ?

रखने की तो कोई जरूरत नहीं है, लेकिन वह लगता है; वह स्वाभाविक है ।

प्रश्न : गरमी भी बहुत पैदा होती है ?

वह भी हो सकता है; क्योंकि हमारे भीतर सारी की सारी व्यवस्था बदलती है – यानी जो-जो हमारा इंतजाम है, वह सब बदलता है; जहां जहां से हम शरीर से जुड़े हैं वहां-वहां ढिलाई होनी शुरू होती है; जहां हम नहीं जुड़े हैं वहां नये जोड़ बनने शुरू होते हैं; पुराने ब्रिज (सेतु) गिरते हैं, नये ब्रिज बनते हैं; पुराने दरवाजे बंद होते हैं, नये दरवाजे खुलते हैं । वह पूरा मकान ऑलट्रेशन (रूपान्तर) में होता है, तो इसलिए बहुत सी चीजें टूटती मालूम पड़ती हैं, बहुत से डर मालूम पड़ते हैं, सब व्यवस्था अव्यवस्था हो जाती है । तो ट्रांज़ीशन (संक्रमण) के वक्त में यह चलेगा, लेकिन जैसे ही नयी व्यवस्था आ जायेगी, वह पुरानी व्यवस्था से अदभुत है, उसका फिर कोई मुकाबला नहीं । फिर कभी ख्याल भी नहीं आयेगा कि पुरानी व्यवस्था टूट गयी या थी ! बल्कि ऐसा लगेगा कि इतने दिनों उसको कैसे खींचा ! तो वह होगा ।

अंत तक प्रयत्न ज़ारी रखो

प्रश्न : शक्तिपात के बाद भी क्या तीव्र श्वास और 'मैं कौन हूं' पूछने का प्रयत्न करना पड़ेगा या वह सहज ही होने लगता है ?

जब सहज होने लगे तब तो सवाल नहीं उठता । तब तो सवाल नहीं है । तब कोई सवाल नहीं है । तब तो सवाल भी असहज है । होने लगे वह, तब तो कोई बात ही नहीं है । लेकिन जब तक नहीं हुआ है, तब तक कई बार मन मानने का होता है कि अब छोड़ो, अब तो हो गया; अब क्या बार-बार पूछते चले जा रहे हैं ! अब कितने दिन से तो पूछ रहे हैं ! जब तक मन तुमसे कहे कि छोड़ो, अब क्या फायदा है, तब तक तो करते ही चले जाना; क्योंकि

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मन अभी है। जिस दिन अचानक तुम पाओगे कि अब तो करने का कोई सवाल ही नहीं, करना भी चाहो तो नहीं कर सकते; क्योंकि मैं कौन हूं तुम तभी तक पूछ सकते हो जब तक पता नहीं है; जिस दिन पता चल जायेगा उस दिन तुम पूछोगे कैसे ? वह तो एब्सर्डिटि (विसंगति) है, उसको तुम पूछ ही कैसे सकते हो जब तुम्हें पता ही चल गया ?

मैं पूछता हूं कि दरवाजा कहां है, दरवाजा कहां है अब मुझे पता चल गया कि यह रहा दरवाजा – अब मैं पूछूंगा, दरवाजा कहां है ? यह भी नहीं पूछूंगा कि क्या मैं पूछूं अब कि दरवाजा कहां है ? इसका कोई मतलब नही है। जो हमें पता नहीं है, वहीं तक हम पूछ सकते हैं; जैसे ही हमें पता हुआ वैसे ही बात खत्म हो गयी। तो जैसे ही 'मैं कौन हूं' इसकी अनुभूति तुम पर बरस जाये, वैसे ही तुम्हारे प्रश्न की दुनिया गयी; और जैसे ही तुम छलांग लगा जाओ उस लोक में, फिर करने का कोई सवाल नहीं है; फिर तो तुम जो करोगे, वह सभी वही होगा। तुम चलोगे तो ध्यान होगा, तुम बैठोगे तो ध्यान होगा, तुम चुप रहोगे तो ध्यान होगा, तुम बोलोगे तो ध्यान रहेगा। ऐसा भी कि तुम लड़ने भी चले जाओगे तो भी ध्यान होगा। यानी, तुम्हारा क्या करना है, इससे फिर कोई फर्क नहीं पड़ता। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता।

दांव पूरा ही लगाना

प्रश्न : शक्तिपात का प्रभाव जब क्रियाशील होता है तब तो शरीर की क्रियाएं व श्वास-प्रश्वास आप ही आप गतिशील हो जाती हैं, लेकिन बीच-बीच में शरीर शांत हो जाता है व श्वास भी शांत हो जाती है। तो क्या इस बीच में भी प्रयास करना चाहिए ?

करोगे तो फायदा होगा। सवाल यह नहीं कि श्वास चले कि नहीं; वह न चले तो कोई हर्जा नहीं... तुमने प्रयास किया कि नहीं। यह सवाल नहीं है; वह नहीं चलेगी तो नहीं चलेगी, तुम क्या करोगे ? लेकिन तुम मत छोड़ देना प्रयास। तुम्हारा प्रयास ही सार्थक है। बड़ा सवाल इतना नहीं है कि वह हुआ कि नहीं हुआ – तुमने किया। तुमने अपने को पूरा दांव पर लगाया; तुमने कहीं बचा नहीं लिया अपने को। नहीं तो मन बहुत बचाव करता है; वह कहता है : अब तो हो ही नहीं रहा, अब छोड़ो। हमारे मन के साथ कठिनाई ऐसी है कि वह रोज हजार रास्ते खोजता है : कि अब तो यह हो ही नहीं रहा, अब तो बिलकुल दम घुटा जा रहा है, अब तो तुम मर ही जाओगे, अब छोड़ो।

तो तुम यह मत सुनना। तुम कहना, घुट जाये तो बड़ा आनंद है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नहीं आ सकेगी तो वह दूसरी बात है, उसमें तुम्हारा कोई बस नहीं है। लेकिन अपनी तरफ से तुम पूरी कोशिश करना; तुम अपने को पूरा दांव पर लगाना। उसमें रत्ती भर अपने को बचाना मत, क्योंकि कभी-कभी रत्ती भर बचाना ही सब रोक देता है। ...रत्ती भर बचाना ! कोई नहीं जानता कि ऊंट आखिरी तिनके से बैठ जाये। तुमने बहुत वजन लादा है ऊंट पर, लेकिन अभी इतना वजन नहीं हुआ है कि ऊंठ बैठे। और हो सकता है सिर्फ आखिरी तिनका — घास का एक छोटा सा टुकड़ा और ऊंट बैठ जाये। क्योंकि संतुलन तो एक छोटे से तिनके से ही आखिर में तय होता है; पहले नहीं होता है तय। पहले तुमने दो मन लादा और उससे कुछ नहीं हुआ, ऊंट चलता ही चला गया।

तुमने एक हथौड़े से ताला तोड़ा, तुम पचास हथौड़े मार चुके ...पूरी ताकत से — और ईक्यावनवां तुमने बहुत धीमी ताकत से मारा और टूट गया। संतुलन तो अंत में बड़ी छोटी बात से तय होता है; कभी-कभी इंच भर से तय होता है — तिनके से तय होता है। इसलिए ऐसा न हो कि तुम सारी मेहनत करो और एक तिनके से चूक जाओ। और चूक गये तो तुम पूरे चूक गये।

अभी ऐसा हुआ : एक मित्र अमृतसर में तीन दिन से ध्यान कर रहे थे। पढ़े-लिखे डॉक्टर हैं, पर नहीं कुछ हो रहा था। आखिरी दिन, मुझे तो पता ही नहीं था कि वे क्या कर रहे हैं, क्या नहीं कर रहे हैं; जानता भी नहीं था उनको। आखिरी दिन मैंने यह कहा कि हम पानी को गरम करते हैं, तो वह सौ डिग्री पर भाप बनता है। और निन्यानबे डिग्री से भी वापिस लौट गये, तो यह मत सोचना कि हमने निन्यानबे डिग्री तक गरम किया था तो एक डिग्री की क्या बात थी ! वह पानी रह जायेगा। साढ़े निन्यानबे तक भी पानी रह जायेगा; रत्ती भर भी फासला रह जायेगा तो भी पानी रह जायेगा। वह तो आखिरी रत्ती भी जब सौ को पार करेगा, क्रॉस करेगा तभी भाप बनेगा। और इसमें कोई शिकायत नहीं की जा सकती।

तो वे उसी दिन सांझ को मेरे पास आये कि यह आपने अच्छा कहा, मैं तो कर रहा था कि भई, चलो धीरे-धीरे कर रहे हैं, बहुत नहीं होगा तो थोड़ा तो होगा ! हमारे क्या ख्याल में होते हैं ! तो आपने जब कहा, तब मुझे ख्याल में आया कि यह बात तो ठीक है। अठानबे डिग्री पर गर्म किया तो ऐसा नहीं कि थोड़ा पानी भाप बनेगा और थोड़ा नहीं बनेगा, वह बनेगा ही नहीं। बनना तो शुरू होगा... एक भी बिंदु अगर बनना हो तो वह सौ डिग्री पर ही उड़ेगा; उसकी उड़ान तो सौ डिग्री पर ही होगी। उसके पहले वह पानी होना नहीं छोड़ सकता। पानी होना छोड़ने के लिए उतनी यात्रा उसे करनी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ही पड़ेगी, आखिरी इंच तक।

तो उन्होंने मुझसे कहा कि आपने अच्छा कह दिया यह; आज मैंने पूरी ताकत लगायी, तो मैं तो हैरान हूं कि मैं तीन दिन से मेहनत फिजूल कर रहा था; थक भी जाता था, कुछ होता भी नहीं था; आज थका भी नहीं हूं, और कुछ हो भी गया। तो उन्होंने कहा कि मुझे सौ डिग्री की बात ख्याल रही पूरे वक्त; और मैंने इंच भर भी नहीं छोड़ा, मैंने कहा कि अपनी तरफ से नहीं छोड़ना, पूरी ताकत लगा देनी है।

जिनको नहीं हो रहा है, और जिनको हो रहा है, उनमें और कोई फर्क नहीं है – सिर्फ इतना ही फर्क है। और एक बात और ध्यान रखना कि कई दफा ऐसा लगता है कि तुम्हारा पड़ोसी तुमसे ज्यादा ताकत लगा रहा है और उसको नहीं हो रहा, लेकिन उसकी सौ डिग्री और तुम्हारी सौ डिग्री में फर्क है। अगर उसके पास ताकत ज्यादा है...

एक आदमी के पास पांच सौ रुपये हैं, और वह तीन सौ रुपये लगा रहा है दांव पर, और तुम्हारे पास पांच रुपये हैं और तुम चार रुपये दांव पर लगा रहे हो – तुम आगे निकल जाओगे। यह तीन सौ और चार से तय नहीं होगा, पूरे अनुपात से तय होगा। तुमने अपना पूरा लगाया तो सौ डिग्री पर होगा। और सबकी सौ डिग्री अलग होंगी। उसका कितना... पूरा लगाने का सवाल है। अगर तुमने पांच रुपये लगा दिये तो तुम जीत जाओगे, और वह तीन सौ और चार सौ भी लगा दे तो नहीं जीतेगा, उसके पास पांच सौ थे; जब तक वह पांच सौ न लगा दे, तब तक वह जीतनेवाला नहीं है।

चरम-बिंदु पर ही सावधानी

इसलिए अंतिम अर्थों में एक बात ध्यान रखना सदा जरूरी है कि तुम अपने को बचाना मत; कहीं भी यह मत सोचना कि अब ठीक है, फिर से हो जायेगा। ऐसा तुमने सोचा कि तुम लौटना शुरू हो जाओगे। और अक्सर ऐसा होगा कि जिस बिंदु से घटना घटती है उसी बिंदु से ऐसा होगा; क्योंकि मन उसी बिंदु पर घबड़ाना शुरू होता है कि अब तो भाप बनी, अब भाप बनी। अब वह कहता है कि अब बस, काफी हो गया, उबल चुके, पानी आग हुआ जा रहा है, अब क्या फायदा; अब लौट आओ।

वही क्षण बहुत कीमती है, जब तुम्हारा मन कहे कि अब लौट चलो। अब मन को लगने लगा कि अब मामला खतरे का है; अब टूटने का वक्त करीब आता है, अब मिटे, अब मरे। तो जैसे ही उसको लगे कि अब खतरा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आता है...

जब तक खतरा नहीं, तब तक वह कहेगा कि खूब मजे से करो, जैसे ही खतरे के करीब पहुंचे, ब्वाइलिंग प्वांइट (उबलने के बिंदु) के पहले ही वह तुमसे कहेगा कि अब बस, अब तो सारी ताकत लगा दी, अब तो होता ही नहीं, उसी वक्त सावधान रहना। वही क्षण है जब तुम्हें पूरा लगा देना है। उस एक क्षण में चूकने से कभी वर्ष चूकना हो जाता है। और निन्यानवे डिग्री तक पहुंचने में भी वर्षों लग जाते हैं कभी। और कभी पहुंच पाते हैं और तत्काल चूक जाते हैं। जरा सी बात और चुका सकती है। इसलिए तुम मत बचाव करना। वह नहीं होगा, नहीं होगा।

प्रश्न : ज्यादा ताकत लगाने से नाड़ियां अगर टूट जायेंगी तो ?

ये सारी की सारी जो बातें हैं, सारी की सारी जो बातें हैं, हमारे सारे भय जो हैं... असर तो होगा ही, असर क्यों नहीं होगा ? असर तो होगा ही। असर होने के लिए ही तो सारी बात है। टूट जाने दो, बचाकर भी क्या करना है ! टूट ही जायेगी, बचाकर भी क्या करोगी।

प्रश्न : हम अज्ञान में तो मरना नहीं चाहते ?

तो मरोगी अगर नाड़ी बचाओगी। करोगी क्या ? यह हमारी तकलीफ यह है कि हम जिन चीजों को बचाने के लिए चिंतित रहते हैं उनको बचाने से होना क्या है ?

प्रश्न : हमारे पास इतना ही अल्प सा तो है; उसे भी खो दें ?

हां, अगर वह भी होता तब भी कुछ था; तब तुम्हें डर न होता उसके खोने का। वह भी नहीं है। अक्सर नंगे आदमी कपड़े चोरी जाने के डर से भयभीत रहते हैं, क्योंकि इससे एक मजा आता है कि अपने पास भी कपड़े हैं। उसका जो रस है भीतर, वह यह रहता है कि अरे, अपने कोई नंगे थोड़े ही हैं, कपड़े चोरी न चले जायें। कपड़े हैं तो चोरी जाने की फिक्र करनी चाहिए। कपड़े ही हैं न, चोरी चले जायेंगे तो चले जायेंगे। यह भय छोड़ना।

इसका यह मतलब नहीं है कि तुम्हारी नाड़ियां टूट जायेंगी। भय से टूट सकती हैं, ध्यान से नहीं टूट सकती। भय से तो टूट ही जाती हैं। लेकिन भय से हम भयभीत नहीं होते। भय से टूट जायेंगी, चिंता से टूट जायेंगी, उससे हम भयभीत नहीं हैं। तनाव से टूट जायेंगी, उससे हम भयभीत नहीं हैं; ध्यान से हम भयभीत हैं जहां कि टूटने का कोई सवाल नहीं है। जहां टूटी भी होगीं

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तो जुड़ सकतीं हैं। लेकिन हम अपने भय पालते हैं। और वह भय हमें सुविधा बना देते हैं कि ऐसा न हो जाये, ऐसा न हो जाये, ऐसा न हो जाये। लौट आने का हम सारा इंतजाम कर लेते हैं। तो मैं यह कहता हूं, जाओ ही क्यों? यह दुविधा खतरनाक है। मैं कहता हूं : जाओ ही मत; बात ही छोड़ो; उसकी चिंता ही मत लो। लेकिन हम दोनों काम करना चाहते हैं।

दुविधा साधक की एकमात्र शत्रु

हम जाना भी चाहते हैं और नहीं भी जाना चाहते हैं। तब दुविधा हमारे प्राण ले लेती है। और तब हम अकारण परेशान होते हैं। सैकड़ों, लाखों लोग अकारण परेशान होते हैं। उनको परमात्मा को खोजना भी है और बचना भी है कि कहीं मिल न जाये। अब ये दोहरी दिक्कतें हैं। हमारी सारी तकलीफ जो है न, वह ऐसी है कि हम जो करना चाहते हैं उसको किसी दूसरे तल पर मन के नहीं भी करना चाहते। दुविधा हमारा प्राण है। हम ऐसा कर ही नहीं पाते कि कुछ हम करना चाहते हैं तो करना चाहते हैं। जिस दिन ऐसा हो उस दिन तुम्हें कोई रुकावट नहीं होगी। उस दिन जिंदगी गति बन जाती है। लेकिन हमारी हालतें ऐसी हैं कि एक पैर उठाते हैं और एक पैर वापस लौटा लेते हैं; एक ईंट मकान की रखते हैं और दूसरी उतार लेते हैं। रखने का भी मजा लेते रहते हैं और रोने का भी मजा लेते रहते हैं कि मकान बन नहीं रहा। दिन भर मकान जमाते हैं, रात भर उतार देते हैं। दूसरे दिन फिर दीवाल वहीं की वहीं हो जाती है, फिर हम रोने लगते हैं कि बड़ी मुश्किल है कि मकान बन नहीं रहा।

यह जो कठिनाई है, यह समझनी चाहिए अपने भीतर। और इसको ऐसे ही समझ सकोगे : जब तुम यह समझो कि ठीक है, टूटेगी न, तो टूट ही जायेगी। तीस-चालीस साल नहीं भी टूटी तो करोगी क्या? एक दफ्तर में नौकरी करोगी, रोज खाना खाओगी, दो-चार बच्चे पैदा करोगी, नहीं पैदा करोगी — पति होगा; यह होगा, वह होगा; यही सब होगा। और इन को छोड़ जाओगी तो ये बेचारे अपनी नाड़ियां न टूट जायें उसके लिए डरते रहेंगे। ...करोगी क्या?

अगर हमको थोड़ा सा भी यह ख्याल में आ जाये कि जिंदगी जिसको हम बनाने की कोशिश में हैं, उसमें बचाने योग्य भी क्या है! तो दांव पर लगा सकते हैं, नहीं तो नहीं लगा सकते। और यह बहुत ही, जिसको कहना चाहिए स्पष्ट हमारे मन में साफ हो जाना चाहिए कि जिस-जिस चीज को हम बचाना

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चाहते हैं, उसमें बचाने जैसा भी क्या है; क्या है बचाने जैसा ? और बचाकर भी कहां बचता है – यह स्पष्ट हो तो फिर तुम्हें कठिनाई नहीं होगी। टूटेगी तो टूट जायेगी। टूटती नहीं है, अभी तक टूटी नहीं है। अगर तोड़ दो तुम तो एक नयी घटना होगी।

बंबई, रात्रि, दिनांक 2 जुलाई, 1970.

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पांचवीं प्रश्नोत्तर चर्चा

मुक्ति सोपान की सीढ़ियां

शक्तिपात और प्रसाद

प्रश्न : आपने नारगोल शिविर में कहा कि शक्तिपात का अर्थ है – परमात्मा की शक्ति आप में उतर गयी। बाद की चर्चा में कहा कि शक्तिपात और ग्रेस (प्रसाद) में फर्क है। इन दोनों कथनों के बीच विरोधाभास लगता है। कृपया इसे समझाएं।

दोनों में थोड़ा फर्क है, और दोनों में थोड़ी समानता भी है। असल में दोनों के क्षेत्र एक-दूसरे में प्रवेश कर जाते हैं। शक्तिपात परमात्मा की ही शक्ति है। असल बात तो यह है कि उसके अलावा और किसी की शक्ति ही नहीं है। लेकिन, शक्तिपात में कोई व्यक्ति माध्यम की तरह काम करता है। अंततः तो वह भी परमात्मा है। लेकिन प्रारंभिक रूप से कोई व्यक्ति माध्यम की तरह काम करता है।

जैसे आकाश में बिजली कौंधी; घर में भी बिजली जल रही है; वें दोनों एक ही चीज हैं। लेकिन घर में जो बिजली जल रही है, वह एक माध्यम से प्रवेश की है घर में -- नियोजित। आदमी का हाथ उसमें साफ और सीधा है। वह भी परमात्मा की है। वर्षा में जो बिजली कौंध रही है वह भी परमात्मा की है। लेकिन इसमें बीच में आदमी भी है, उसमें बीच में आदमी नहीं है। अगर दुनिया से आदमी मिट जाये तो आकाश की बिजली तो कौंधती रहेगी,

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

लेकिन घर की बिजली बुझ जायेगी । शक्तिपात घर की बिजली जैसा है, जिसमें आदमी माध्यम है; और प्रसाद, ग्रेस आकाश की बिजली जैसा है, जिसमें आदमी माध्यम नहीं है ।

व्यक्ति : परमात्म शक्ति का माध्यम

तो जिस व्यक्ति को ऐसी शक्ति उपलब्ध हुई है, जो परमात्मा से किसी अर्थों में संयुक्त हुआ है, वह तुम्हारे लिए माध्यम बन सकता है; क्योंकि वह ज्यादा अच्छा विहिकल है, तुमसे ज्यादा अच्छा वाहन है । उस शक्ति के लिए वह आदमी परिचित है, उसके रास्ते परिचित हैं; वह शक्ति उस आदमी से बहुत शीघ्रता से प्रवेश कर सकती है । तुम बिलकुल अपरिचित हो, अनगढ़ हो, वह आदमी गढ़ा हुआ है । और उसके माध्यम से तुम में प्रवेश करे, तो एक तो वह गढ़ा हुआ वाहन है, इसलिए बड़ी सरलता है । और दूसरा वह तुम्हारे लिए बहुत संकीर्ण द्वार है जहां से तुम्हारी पात्रता के योग्य शक्ति तुम्हें मिल जायेगी । तो घर की बिजली में बैठकर तुम पढ़ सकते हो, आकाश की बिजली के नीचे बैठकर पढ़ नहीं सकते । घर की बिजली एक नियंत्रण में है, आकाश की बिजली किसी नियंत्रण में नहीं है ।

तो कभी अगर किसी व्यक्ति के ऊपर आकस्मिक प्रसाद की स्थिति बन जाये, अनायास ऐसे संयोग इकट्ठे हो जायें कि उसके ऊपर शक्तिपात हो जाये, तो बहुत संभावना है : वह व्यक्ति पागल हो जाये, विक्षिप्त हो जाये, उन्मादग्रस्त हो जाये; क्योंकि वह शक्ति इतनी बड़ी हो और उसकी पात्रता सब अस्त-व्यस्त हो जाये । फिर अनजान, अपरिचित सुखद अनुभव भी दुखद हो जाते हैं । जो आदमी वर्षों तक अंधेरे में रहा हो, उसके सामने अचानक सूरज आ जाये, तो उसे प्रकाश दिखाई नहीं पड़ेगा, और भी ज्यादा अंधेरा दिखाई पड़ेगा – जितना अंधेरे में भी दिखाई नहीं पड़ता था । अंधेरे में तो वह थोड़ा देखने का आदी हो गया था; रोशनी में तो उसकी आंख ही बंद हो जायेगी ।

तो कभी ऐसा हो जाता है कि ऐसी स्थितियां बन सकती हैं भीतर कि अनायास तुम पर विराट शक्ति का आगमन हो जाये, लेकिन उससे तुम्हें सांघातिक नुकसान पहुंच सकते हैं; क्योंकि तुम तो तैयार नहीं हो; तुम तो चौंक कर पकड़ लिए गये हो । तो दुर्घटना हो जाये । ग्रेस भी दुर्घटना बन सकती है ।

शक्ति का नियंत्रित संचार

दूसरी जो शक्तिपात की स्थिति है, उसमें दुर्घटना की संभावना बहुत कम

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है – नहीं के बराबर है; क्योंकि कोई व्यक्ति माध्यम है। और संकीर्ण माध्यम से एक तो शक्ति का मार्ग बहुत संकरा हो जाता है, फिर वह व्यक्ति नियंत्रण भी कर सकता है; वह तुम तक उतना ही पहुंचने दे सकता है, जितना तुम झेल सकते हो।

लेकिन ध्यान रहे कि फिर भी वह व्यक्ति स्वयं शक्ति का मालिक नहीं है, सिर्फ वाहक है। इसलिए कोई कहता हो : मैंने शक्तिपात किया तो वह गलत कहता है : वह ऐसे ही होगा, जैसे बल्ब कहने लगे कि मैं प्रकाश दे रहा हूं। तो वह गलत कहता है। हालांकि बल्ब को यह भ्रांति हो सकती है... इतने दिन से रोज-रोज प्रकाश देता है... यह भ्रांति हो सकती है कि प्रकाश मैं दे रहा हूं। बल्ब से प्रकाश प्रगट तो हो रहा है, लेकिन बल्ब से प्रकाश पैदा नहीं हो रहा; वह उदगम का स्रोत नहीं है, अभिव्यक्ति का माध्यम है। तो जो कोई दावा करता हो कि मैं शक्तिपात करता हूं, वह भ्रांति में पड़ गया है; वह बल्ब जैसी भ्रांति में पड़ गया है।

शक्तिपात तो सदा परमात्मा का ही है, लेकिन कोई व्यक्ति माध्यम बने तो उसको शक्तिपात कहेंगे; कोई व्यक्ति माध्यम न हो, तो यह आकस्मिक हो सकता है कभी, तो नुकसान पहुंच सकता है। लेकिन किसी व्यक्ति ने बड़ी अनंत प्रतीक्षा की हो, और किसी व्यक्ति ने अनंत धैर्य से ध्यान किया हो, तो भी प्रसाद के रूप में शक्तिपात हो जायेगा। तब कोई माध्यम भी नहीं होगा। लेकिन तब दुर्घटना नहीं होगी। क्योंकि उसकी अनंत प्रतीक्षा, उसका अनंत धैर्य, उसकी अनंत लगन, उसका अनंत संकल्प, उसमें अनंतता को झेलने की सामर्थ्य पैदा करता है। तो दुर्घटना नहीं होगी।

इसलिए दोनों तरफ से घटना घटती है। लेकिन तब उसे शक्तिपात मालूम नहीं पड़ेगा, उसको प्रसाद ही मालूम पड़ेगा; क्योंकि कोई माध्यम तो नहीं है; कोई बीच में दूसरा व्यक्ति नहीं है।

अहंशून्य व्यक्ति ही माध्यम

तो दोनों बातों में समानता है, दोनों बातों में भेद है। मैं इसी पक्ष में हूं कि जहां तक हो सके प्रसाद उपलब्ध हो, जहां तक हो सके ग्रेस उपलब्ध हो, जहां तक हो सके कोई व्यक्ति बीच में माध्यम न बने। लेकिन, कई स्थितियों में यह असंभव है; कई लोगों के लिए असंभव है। तो बजाय इसके कि वे अनंत काल तक भटकते रहें, किसी व्यक्ति को माध्यम भी बनाया जा सकता है। लेकिन वही व्यक्ति माध्यम बन सकता है जो व्यक्ति न रह गया हो। तब खतरा बहुत

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कम हो जाता है। वही व्यक्ति माध्यम बन सकता है जिसमें अब कोई अस्मिता, कोई इगो शेष न रह गयी हो। तब खतरा न के बराबर हो जाता है। खतरा इसलिए न के बराबर हो जाता है कि ऐसा व्यक्ति माध्यम भी बन जायेगा और फिर भी गुरु नहीं बनेगा। क्योंकि गुरु बननेवाला तो अब कोई नहीं रहा। इस फर्क को ठीक से समझ लेना।

सदगुरु वही, जो गुरु नहीं बनता

जब कोई व्यक्ति गुरु बनता है तो तुम्हारे संबंध में बनता है, और जब माध्यम बनता है तब परमात्मा के संबंध में बनता है; तुमसे कुछ लेना-देना फिर नहीं रह जाता। समझ गये न मेरा फर्क ? और परमात्मा के संबंध में कोई भी स्थिति बने, वहां अहंकार नहीं टिक सकता। लेकिन तुम्हारे संबंध में कोई भी स्थिति बने, तो अहंकार टिक जायेगा। तो जिसको ठीक गुरु कहें, वह वही है जो गुरु नहीं बनता है। सदगुरु की परिभाषा अगर करनी हो तो यही है सद्गुरु की परिभाषा कि जो गुरु नहीं बनता। इसका मतलब हुआ कि समस्त गुरु बननेवाले लोग गुरु नहीं होने की योग्यता रखते हैं। गुरु बनने के दावे से बड़ी अयोग्यता और कोई नहीं है – यानी वही डिसक्वालिफिकेशन (अयोग्यता) है; क्योंकि तुम्हारे संबंध में वह एक अहंकार की स्थिति ले रहा है। और खतरनाक हो जायेगा।

अगर अनायास कोई व्यक्ति शून्य हो गया है, अहंकार विलीन हो गया है, और वाहन बन सकता है – बन सकता है, कहना भी शायद गलत है – कहना चाहिए, वाहन बन गया है। तो उसके निकट भी शक्तिपात की घटना घट सकती है। लेकिन तब उसमें दुर्घटना की कोई संभावना नहीं रहेगी। न तो तुम्हारे व्यक्तित्व को दुर्घटना की संभावना है, और न जिस वाहन से शक्ति तुम तक आयी है, उसके व्यक्तित्व को दुर्घटना की संभावना है। फिर भी मौलिक रूप से मैं ग्रेस (प्रसाद) के पक्ष में हूं। और जब इतनी शर्तें पूरी हो जायें कि व्यक्ति न हो, अहंकार न हो, तो फिर शक्तिपात ग्रेस के करीब पहुंच गया... बहुत करीब पहुंच गया। और अगर उस व्यक्ति को कोई पता ही न हो, तब फिर वह बहुत ही करीब पहुंच गया। तब उसके पास होने से घटना घट जाये। तो अब यह जो व्यक्ति है, तुम्हें व्यक्ति की तरह दिखाई पड़ रहा है, लेकिन अब यह परमात्मा के साथ एकाकार ही हो गया – कहना चाहिए, परमात्मा का फैला हुआ हाथ हो गया है जो तुम्हारे करीब है। अब... अब यह बिलकुल इंस्ट्रुमेंटल है, साधन मात्र है। और ऐसी स्थिति में अगर

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यह व्यक्ति 'मैं' की भाषा भी बोले, तो भूल हमें हो जाती है बहुत बार; क्योंकि ऐसी अवस्था में जब यह व्यक्ति 'मैं' बोलता है, तो इसका मतलब होता है परमात्मा। लेकिन हमें बड़ी कठिनाई... क्योंकि हम तो...

इसलिए कृष्ण कह सकते हैं अर्जुन से – 'मामेकं शरणं व्रज'; मेरी शरण में आ जा तू। और हजारों साल तक हम सोचेंगे कि यह आदमी कैसा रहा होगा, जो कहता है : मेरी शरण में आ जा। तब तो अहंकार पक्का है। लेकिन यह आदमी कह ही इसलिए पाया है कि यह बिलकुल नहीं है। अब इसका यह 'मैं' तो किसी का फैला हुआ हाथ है, और वही बोल रहा है : मेरी शरण आ जा – मुझ एक की शरण आ जा। यह शब्द बड़ा कीमती है, 'मामेकं'... मुझ एक की शरण आ जा। 'मैं' तो एक कभी नहीं होता, 'मैं' तो अनेक है। यह किसी ऐसी जगह से बोल रहा है जहां 'मैं' एक ही होता है, लेकिन अब यह कोई अहंकार की भाषा नहीं है।

लेकिन, हम तो अहंकार की भाषा ही समझते हैं। इसलिए हम समझेंगे कि कृष्ण अर्जुन से कह रहे हैं कि मेरी शरण में आ जा। तब भूल हो जायेगी। इसलिए हमारे प्रत्येक शब्द को देखने के दो मार्ग हैं : एक हमारी तरफ से, जहां से भ्रांति सदा होगी, और एक परमात्मा की तरफ से जहां कोई भ्रांति का सवाल नहीं है। तो कृष्ण जैसे व्यक्ति से घटना घट सकती है; और उसमें कृष्ण के व्यक्तित्व का कोई लेना-देना नहीं है।

इतने करीब आ जाना जाहिए शक्तिपात प्रसाद के कि तुम जो कहते हो कि आपकी दोनों बातों में विरोध दिखाई पड़ता है... दोनों घटनाएं अपनी अति पर बहुत विरुद्ध हैं, लेकिन दोनों घटनाएं अपने केंद्र पर अति निकट हैं। और मैं उसी पक्ष में हूं जहां कि प्रसाद में और शक्तिपात में किंचित फर्क करना मुश्किल हो जाये। वहीं सार्थक है बात, वहीं कीमती है।

चीन में एक संन्यासी बड़ा समारोह मना रहा है। वह अपने गुरु का जन्म दिन मना रहा है। और उस तरह का त्यौहार गुरु के जन्म दिन पर ही मनाया जाता है, लेकिन लोग उससे पूछते हैं कि तुम तो कहते थे कि मेरा कोई गुरु नहीं है, तो तुम जन्म दिन किसका मना रहे हो ? और तुम तो सदा कहते थे कि गुरु की कोई जरूरत ही नहीं है, तो तुम आज यह उत्सव किसका मना रहे हो ? तो वह आदमी कहता है कि मुझे मुश्किल में मत डालो; अच्छा हो कि मैं चुप रहूं। लेकिन जितना वह चुप रहता है उतना लोग और पूछते हैं कि बात क्या है, तुम यह मना क्या रहे हो ? क्योंकि यह दिन तो गुरु-पर्व है; इस दिन तो गुरु का उत्सव ही मनाया जाता है; तुम्हारा कोई गुरु है क्या ?

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तो वह कहता है : तुम नहीं मानोगे तो मुझे कहना पड़ेगा; मैं आज उस आदमी का स्मरण कर रहा हूं जिसने मेरा गुरु बनने से इनकार कर दिया था; क्योंकि अगर वह मेरा गुरु बन जाता तो मैं सदा के लिए भटक जाता। उस दिन तो मैं बहुत नाराज हुआ था, आज लेकिन उसे धन्यवाद देने का मन होता है... कि वह चाहता तो गुरु तत्काल बन सकता था। मैं तो खुद गया था उसको मनाने, लेकिन वह गुरु बनने को राजी नहीं हुआ था। तो वे लोग पूछते हैं कि फिर धन्यवाद क्यों दे रहे हो, जब गुरु बनने को राजी नहीं हुआ ? तो वह संन्यासी कहता है, तुम मुझे ज्यादा मुश्किल में मत डालो; अब इतना मैंने कह दिया, यह काफी है; क्योंकि वह आदमी गुरु तो नहीं बना था, लेकिन जो कोई गुरु नहीं कर सकता है, वह आदमी कर गया है। इसलिए ऋण दोहरा हो गया। एक तो वह आदमी गुरु भी बन जाता, तो भी लेन-देन हो जाता न दोनों तरफ से ? कुछ उसने भी हमें दिया था, हमने भी कुछ उसे दिया था – आदर दिया था, श्रद्धा दी थी, पैर छू लिये थे – निपटारा हो गया था; कुछ हमने भी कर लिया था। लेकिन वह आदमी गुरु भी नहीं बना, उसने आदर भी नहीं मांगा, श्रद्धा भी नहीं मांगी, तो ऋण दोहरा हो गया – बिलकुल इकतरफा हो गया; वह दे गया और हम धन्यवाद भी नहीं दे पायें; क्योंकि धन्यवाद देने का भी उसने स्थान नहीं छोड़ा था।

शुद्धतम शक्तिपात प्रसाद के निकट

तो यहां शक्तिपात – ऐसी स्थिति में – और प्रसाद में कोई फर्क नहीं रह जायेगा। और जितना फर्क हो उतना ही शक्तिपात से बचना; और जितना फर्क कम हो उतना ही ठीक है। इसलिए मैं जोर देता हूं प्रसाद पर, ग्रेस पर। और जिस दिन शक्तिपात भी प्रसाद के करीब आ जाये – इतना करीब आ जाये कि तुम डिस्टिंग्विश न कर सको, फर्क न कर सको... कि दोनों में क्या फर्क है – उस दिन समझ लेना कि बात ठीक हो गयी।

तुम्हारे घर की बिजली जिस दिन आकाश की बिजली की तरह स्वच्छंद, सहज और विराट शक्ति का हिस्सा हो जाये, और जिस दिन तुम्हारे घर का बल्ब दावा करना छोड़ दे कि मैं हूं शक्ति का स्रोत, उस दिन तुम समझना कि अब शक्तिपात भी हो तो वह प्रसाद ही है। मेरी बात ख्याल रखना।

विस्फोट : दो शक्तियों का मिलन

प्रश्न : नारगोल में आपने समझाया था कि आपसे शक्ति उठे और

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

परमात्मा से मिल जाये या परमात्मा की शक्ति आये और आप में मिल जाये। प्रथम तो कुंडलिनी का उठना है, दूसरी बात ईश्वर की ग्रेस मिलने की है। आगे आपने कहा है कि आपके भीतर सोयी हुई ऊर्जा जब विराट की ऊर्जा से मिलती है तब एक्सप्लोज़न (विस्फोट) होता है। तो एक्सप्लोज़न या समाधि के लिए कुंडलिनी जागरण और ग्रेस का मिलन आवश्यक है या कुंडलिनी का सहस्रार तक विकास और ग्रेस की उपलब्धि एक ही बात है?

असल में विस्फोट एक शक्ति से कभी नहीं होता, विस्फोट सदा दो शक्तियों का मिलन है। एक्सप्लोज़न (विस्फोट) जो है, वह एक शक्ति से कभी नहीं होता। अगर एक शक्ति से होता तो कभी का हो जाता। तुम्हारी माचिस भी रखी है, तुम्हारी माचिस की काड़ी भी रखी है, और वह रखी है अनंत जन्मों तक – एक इंच के फासले पर, आधा इंच के फासले पर, वह रखी रहे, रखी रहे, तो आग पैदा नहीं होगी। उस विस्फोट के लिए उन दोनों की रगड़ जरूरी है, तो आग पैदा होगी। आग छिपी है दोनों में, लेकिन किसी एक में भी अकेले पैदा होने का उपाय नहीं है। जो विस्फोट है, वह दो शक्तियों के मिलने पर पैदा हुई संभावना है।

तो व्यक्ति के भीतर जो सोयी हुई है शक्ति, वह उठे और उस बिंदु तक आ जाये, सहस्रार वह बिंदु है जिसके पहले मिलन बहुत असंभव है। जैसे कि तुम्हारे दरवाजे बंद हैं और सूरज बाहर खड़ा है। रोशनी तुम्हारे दरवाजे पर आकर रुक गयी है। तुम अपने घर के भीतर चलो, चलो; भीतर से बाहर की तरफ आओ, आओ; और दरवाजे तक आकर भी खड़े हो जाओ, तो भी तुम्हारा सूरज की रोशनी से मिलन न होगा। दरवाजा खुले और मिलन हो जाता है।

सहस्रार पर प्रतीक्षारत परमात्मा

तो जो हमारा अंतिम चरम बिंदु है कुंडलिनी का – सहस्रार, वह हमारा द्वार है, जहां ग्रेस सदा ही खड़ी हुई है; जिस द्वार पर परमात्मा निरंतर तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा है। लेकिन तुम ही अपने द्वार पर नहीं हो; तुम ही अपने द्वार से बहुत भीतर कहीं और हो। तो तुम्हें अपने द्वार तक आना है, वहां मिलन हो जायेगा। और वह मिलन विस्फोट होगा। विस्फोट इसलिए कह रहे हैं उसे कि उस मिलन में तुम तत्काल विलीन हो जाओगे; एक्सप्लोज़न इसलिए है कि उस मिलन के बाद तुम बचोगे नहीं। वह जो काड़ी है माचिस की वह बचेगी नहीं उस विस्फाट के बाद। माचिस तो बचेगी, काड़ी नहीं बचेगी, काड़ी तो

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जलकर राख हो जायेगी, काड़ी तो निराकार में विलीन हो जायेगी।

तो उस घटना में तुम चूंकि मिट जाओगे, टूट जाओगे, बिखर जाओगे, खो जाओगे, तुम बचोगे नहीं; तुम जैसे थे द्वार तक आने के पहले, वैसे तुम नहीं बचोगे। तुम्हारा सब खो जायेगा, तुम मिट जाओगे। जो द्वार पार खड़ा था, वही बचेगा; तुम उसी के हिस्से हो जाओगे।

यह घटना तुमसे अकेले नहीं हो सकती। इस विस्फोट के लिए, उस विराट शक्ति के पास तुम्हारा जाना जरूरी है। उस शक्ति के पास जाने के लिए तुम्हारी शक्ति जहां सोयी है वहां से उसे उठकर वहां तक जाना पड़ेगा जहां वह शक्ति तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही है।

तो कुंडलिनी की जो यात्रा है, वह तुम्हारे सोये हुए केंद्र से है – उस स्थान तक है, उस सीमांत तक, जहां तुम समाप्त होते हो; तुम्हारी जो सीमा है।

मनुष्य की दो सीमाएं

तो एक सीमा तो हमारे शरीर की है जो हमने मान रखी है। यह बड़ी सीमा नहीं है; क्योंकि मेरा हाथ कट जाये, तो भी कुछ खास फर्क नहीं पड़ता; मेरे पैर कट जायें, तो भी कुछ खास फर्क नहीं पड़ता, फिर भी मैं रहता हूं। यानी इन सीमाओं के घटने-बढ़ने से मैं मिटता नहीं। मेरी आंखें चली जायें, मेरे कान चले ज़ायें, तो भी मैं हूं। तुम्हारी असली सीमा तुम्हारे शरीर की सीमा नहीं है, तुम्हारी असली सीमा सहस्रार का बिंदु है, जिसके बाद तुम नहीं बच सकते। उस सीमा पर इन्क्रोचमेंट (प्रवेश) हुआ कि तुम गये, फिर तुम नहीं बच सकते।

तुम्हारी कुंडलिनी तुम्हारी सोयी हुई शक्ति है। तो वह तुम्हारे यौन के केंद्र के निकट और तुम्हारे मस्तिष्क के केंद्र के निकट तुम्हारी सीमा है। इसीलिए हमें निरंतर यह ख्याल होता है कि हम अपने पूरे शरीर से चाहे अपनी आइडेंटिटि (तादात्म्य) छोड़ दें, लेकिन अपने सिर से, अपने चेहरे से आइडेंटिटि नहीं छोड़ पाते। यानी मुझे यह मानने में बहुत कठिनाई नहीं लगती कि हो सकता है, यह हाथ मैं न होऊं, लेकिन अगर दर्पण में अपना चेहरा देखकर यह सोचूं कि यह चेहरा मैं नहीं हूं, तो बहुत मुश्किल हो जाती है; वह सीमांत है। इसलिए आदमी सब खोने को तैयार हो सकता है, बुद्धि खोने को तैयार नहीं होता।

सुकरात से किसी ने पूछा है कि तुम एक असंतुष्ट सुकरात होना पसंद करोगे कि एक संतुष्ट सुअर होना पसंद करोगे, क्योंकि सुकरात संतोष की बातें

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कर रहा था; वह कह रहा था : संतोष परम धन है। तो कोई उससे पूछ रहा है कि तुम एक संतुष्ट सुअर होना पसंद करोगे कि असंतुष्ट सुकरात होना। तो वह सुकरात कहता है कि संतुष्ट सुअर होने से तो मैं एक असंतुष्ट सुकरात होना ही पसंद करूंगा; क्योंकि संतुष्ट सुअर को संतोष का पता भी तो नहीं हो सकता, असंतुष्ट सुकरात को कम से कम असंतोष का पता तो होगा। अब यह जो कह रहा है असंतुष्ट सुकरात, वह हम यह कह रहे हैं कि हम सब खोने को तैयार हैं लेकिन बुद्धि को न खोयेंगे, चाहे बुद्धि असंतुष्ट ही क्यों न हो। बुद्धि भी हमारे उस केंद्र के बहुत निकट है।

अगर हम ठीक से समझें तो हमारी सीमांत दो हैं : एक 'यौन' हमारी सीमा-रेखा है, जिसके पार प्रकृति शुरू होती है – जिसके नीचे; बिलो दैट... प्रकृति की दुनिया शुरू होती। तो जहां हम सेक्स के बिंदु पर होते हैं, वहां हममें, पशु में, पौधे में कोई फर्क नहीं होता; क्योंकि पशु की, पौधे की वह अंतिम सीमा है जो हमारी प्रथम सीमा है; वहां उनकी सीमा खतम होती है। इसलिए सेक्स के बिंदु पर पशु में और हममें कोई फर्क नहीं होता। वह पशु की अंतिम सीमा है और हमारी पहली सीमा है। उस बिंदु पर जब हम खड़े होते हैं तो हम पशु ही होते हैं।

हमारी दूसरी सीमा है, 'बुद्धि'; वह हमारे दूसरी सीमांत के निकट है, जिसके पार परमात्मा है। उस बिंदु पर होकर भी फिर हम नहीं होते, फिर हम परमात्मा ही होते हैं। और ये हमारी दो सीमा-रेखाएं हैं, और इनके बीच हमारी शक्ति का आंदोलन है।

अभी हमारी सारी शक्ति जिस कुंड पर सोयी है, वह यौन के पास है। इसलिए आदमी का निन्यानबे प्रतिशत चिंतन, निन्यानबे प्रतिशत स्वप्न, निन्यानबे प्रतिशत क्रिया-कलाप, निन्यानबे प्रतिशत जीवन उसी कुंड के आसपास व्यतीत होता है। सभ्यता कितना ही झुठलाये, समाज कितना ही और कुछ कहे, आदमी जीता वहीं है; वह 'काम' (सेक्स) के पास ही जीता है – वह धन कमाता है तो उसलिए, मकान बनाता है तो उसलिए, यश कमाता है तो उसलिए – वह जो भी कर रहा है, उसके बहुत मूल में खोजने पर उसका काम मिल जायेगा।

दो लक्ष्य, दो साधन

इसलिए जिनको समझी थी, उन्होंने दो ही लक्ष्य बताये : काम और मोक्ष; ये दो लक्ष्य हैं। और अर्थ और धर्म, दो साधन हैं। अर्थ यानी धन, वह काम का साधन है। इसलिए जितना कामुक युग होगा, उतना धनपिपासु होगा;

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जितना मोक्ष की आकांक्षा करनेवाला युग होगा, उतना धर्मपिपासु होगा। धर्म साधन है, जैसे धन साधन है। अगर मोक्ष पाना हो तो धर्म साधन बन जाता है, और अगर काम तृप्ति पानी है तो धन साधन बन जाता है।

तो दो हैं लक्ष्य और दो हैं साधन, क्योंकि दो हमारी सीमाएं हैं। और उन सीमाओं पर हम... और यह बड़े मजे की बात है कि इन दो सीमाओं के बीच में तुम कहीं भी नहीं टिक सकते; उनके बीच में तुम कहीं नहीं ठर सकते; क्योंकि उनके बीच में तुम ऐसे मालूम पड़ोगे कि जैसा गधा, घर का न घाट का हो जाता है। कुछ लोग उस हालत में पड़कर बड़ी मुसीबत में पड़ जाते हैं। बहुत लोग पड़ जाते हैं उस मुसीबत में। बहुत मुसीबत में पड़ जाते हैं। उनको मोक्ष की अभीप्सा नहीं होती है, और काम का विरोध अगर किसी वजह से पैदा हो गया, तो वे कठिनाई में पड़ जायेंगे; वे काम के बिंदु से दूर हटने लगेंगे और मोक्ष के बिंदु के पास नहीं जायेंगे। तब वे एक ऐसी दुविधा में पड़ जायेंगे जो बहुत ही कठिन है, बहुत दुखद है, बहुत नारकीय है। और उनका जीवन सारा का सारा अंतर्द्वंद्व से भर जायेगा।

बीच के बिंदु पर टिकना न उचित है, न स्वाभाविक है, न अर्थपूर्ण है। इसे हम ऐसा समझ लें कि जैसे कोई सीढ़ी पर चढ़े और बीच में रुक जाये, तो हम उससे कहेंगे कि कुछ भी करो – या तो वापिस लौट आओ या ऊपर चले जाओ, क्योंकि सीढ़ी कोई मकान नहीं है, सीढ़ी कोई निवास नहीं है; उसमें बीच में रुक जाना किसी भी अर्थ का नहीं है। यानी एक आदमी अगर सीढ़ी पर रुक जाये तो समझो कि उससे ज्यादा व्यर्थ आदमी खोजना बहुत मुश्किल होगा; क्योंकि उसे कुछ भी करना है तो उसे सीढ़ी के या तो नीचे के बिंदु पर आना पड़ेगा या ऊपर के बिंदु पर जाना पड़ेगा।

तो हमारी जो रीढ़ है, समझ लो कि सीढ़ी है... है भी सीढ़ी। और रीढ़ का एक-एक गुरिया समझो कि एक-एक स्टेप (सीढ़ी) है। और वह जो हमारी कुंडलिनी है, वह नीचे के केंद्र से यात्रा शुरू करती है और ऊपर के अंतिम केंद्र तक जाती है। ऊपर के केंद्र पर वह पहुंच जाये तो विस्फोट निश्चित है; वहां फिर विस्फोट नहीं बच सकता। और नीचे के केंद्र पर पहुंच जाये तो स्खलन निश्चित है, वहां स्खलन नहीं बच सकता। इन दोनों बातों को ठीक से समझ लेना।

निम्न बिंदु पर स्खलन और उच्चतम पर विस्फोट

कुंडलिनी नीचे के बिंदु पर है तो स्खलन निश्चित है, ऊपर के बिंदु पर

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पहुंच जाये तो विस्फोट निश्चित है। दोनों ही विस्फोट हैं, और दोनों के लिए ही दूसरे की जरूरत है। वह जो यौन का स्खलन है, उसमें भी दूसरा अपेक्षित है – चाहे कल्पना में ही सही, लेकिन दूसरा अपेक्षित है। तो उस जगह से तुम्हारी पूरी ऊर्जा विकीर्ण नहीं हो सकती। नहीं हो सकती इसलिए कि वह बिंदु तुम्हारा प्राथमिक बिंदु है; तुम उससे बहुत ज्यादा हो; उस बिंदु से तुम आगे जा चुके हो। पशु तो वहां पूरा तृप्त हो जाता है, इसलिए पशु मोक्ष नहीं खोजता।

अगर पशु कोई शास्त्र लिखे तो वहां दो ही पुरुषार्थ होंगे – काम और धन... अर्थ और काम। धन भी पशु की दुनिया का धन होगा। अब जिस पशु के पास ज्यादा मांस है, ज्यादा शक्ति है, उसके पास ज्यादा धन है; वह दूसरे पशुओं से काम की प्रतियोगिता में जीत जायेगा; वह अपने आसपास दस मादाएं इकट्ठी कर लेगा। वह भी एक तरह का धन इकट्ठा किया है। उसके पास चर्बी ज्यादा है, वह धन है। एक के पास तिजोरी ज्यादा है, वह भी चर्बी है... जो चर्बी कनवर्ट (परिवर्तित) हो सकती है। तो एक राजा है, वह हजार रानियां इकट्ठी कर लेगा।

एक जमाना था कि आदमी के पास कितनी संपदा है, वह उसकी स्त्रियों से नापा जाता था कि उसके पास कितनी स्त्रियां हैं। गरीब आदमी है तो वह कैसे चार स्त्री रख सकता है! तो जैसे आज हम शिक्षा से नापते हैं कि कौन आदमी कितना शिक्षित है, या किस आदमी के पास कितना बैंक-बैलेंस है। ये सब बहुत बाद के मेजरमेंट (माप) हैं, पहला मेजरमेंट तो एक ही था कि उसके पास कितनी स्त्रियां हैं। इसलिए बहुत बार हमें अपने महापुरुषों को बड़ा बताने के लिए बहुत स्त्रियां गिनानी पड़ीं, जो झूठी हैं... जैसे कृष्ण की सोलह हजार। अब ये कृष्ण को बड़ा बताने का इसके सिवाय कोई उपाय नहीं था... कि अगर कृष्ण बड़े आदमी हैं तो औरतें कितनी हैं? वह एक मात्र मेजरमेंट (माप) होने की वजह से हमको फिर गिनती करानी पड़ी कि बहुत हैं। और सोलह हजार अब बहुत कम मालूम पड़ती हैं, क्योंकि अब हमारे पास बहुत बड़ी संख्याएं हैं। उन दिनों संख्याएं बहुत बड़ी नहीं थी। अगर अफ्रीका में जायें तो अब भी ऐसी कौमें हैं कि जिनकी कुल संख्या तीन तक खतम हो जाती है। अगर किसी के पास चार औरतें हैं तो वह यह कहेगा, बहुत; क्योंकि तीन के बाद संख्या खतम हो जाती है। तो वह कहेगा, बहुत... असंख्य औरतें – असंख्य! क्योंकि तीन के बाद तो संख्या खतम हो जाती है उनकी, तो तीन के बाद जितनी... उनको गिन तो सकता नहीं, तो वह कहता है, असंख्य औरतें

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हैं ।

दोनों के लिए दूसरा अपेक्षित

उस तल पर भी दूसरा अपेक्षित है । अगर दूसरा वस्तुतः मौजूद न हो, तो भी कल्पना में अपेक्षित है । बाकी दूसरा अपेक्षित है । दूसरे के बिना स्खलन भी नहीं हो सकता ऊर्जा का । लेकिन कल्पना में भी दूसरा उपस्थित हो तो स्खलन हो सकता है । इसी वजह से ख्याल पैदा हुआ है कि अगर कल्पना में भी परमात्मा उपस्थित हो तो विस्फोट हो सकता है । इसलिए भक्ति की लंबी धारा चली जिसने कि कल्पना को ही विस्फोट का आधार बनाने की कोशिश की । क्योंकि जब कल्पना में वीर्य-स्खलन हो सकता है, तो सहस्रार में ऊर्जा का विस्फोट क्यों नहीं हो सकता ? इस ख्याल ने काल्पनिक ईश्वर को भी जोर से मन में बिठा लेने की संभावनाओं को प्रगाढ़ कर दिया । उसका कारण यही था । लेकिन यह नहीं हो सकता, स्खलन इसलिए हो सकता है कल्पना में, क्योंकि वस्तुतः स्खलन हुआ है; इसलिए उसकी कल्पना की जा सकती है । लेकिन परमात्मा से तो कभी मिलन नहीं हुआ, इसलिए कोई कल्पना नहीं की जा सकती । कल्पना हम उसकी ही कर सकते हैं जो हुआ है । तो फिर उसकी कल्पना से भी काम लिया जा सकता है ।

यानी एक आदमी ने कोई एक तरह का सुख लिया है तो फिर वह आंख बंद करके उसका सपना भी देख सकता है, लेकिन अगर लिया ही नहीं है तो फिर सपना नहीं देख सकता । जैसे बहरा आदमी लाख कोशिश करे, सपने में भी शब्द नहीं सुन सकता, उसकी कल्पना भी नहीं कर सकता; अंधा आदमी हजार उपाय करे तो भी सपने में भी प्रकाश नहीं देख सकता । हां, यह हो सकता है कि एक आदमी की आंखें चली गयीं, अब वह सपने में बराबर प्रकाश देख सकता है । बल्कि अब सपने में ही देख सकता है, क्योंकि अब तो आंख तो नहीं है, इसलिए असलियत में तो नहीं देख सकता ।

तो जो हमारा अनुभव हुआ है, उसकी हम कल्पना भी कर सकते हैं; लेकिन जो अनुभव नहीं हुआ है, उसकी तो कल्पना का भी उपाय नहीं । और विस्फोट हमारा अनुभव नहीं है, इसलिए वहां कल्पना काम नहीं कर सकती । वहां वस्तुतः जाना होगा और वस्तुतः ही घटना घट सकती है ।

तो जो सहस्र चक्र है, वह तुम्हारी अंतिम सीमा है, जहां से तुम समाप्त होते हो ।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मनुष्य : पशु और परमात्मा के बीच का सेतु

जैसा मैंने कहा कि सीढ़ी । और आदमी एक सीढ़ी ही है । इसलिए नीत्से के वचन बहुत कीमती हैं । वह कहता है कि आदमी सिर्फ एक सेतु है – 'द मैन इज़ ए ब्रिज बिट्वीन टू इटर्निटिज़' – दो अनंतताओं के बीच में एक सेतु । एक अनंतता है प्रकृति की, उसकी भी कोई सीमा नहीं है; और एक अनंतता है परमात्मा की, उसकी भी कोई सीमा नहीं है । और आदमी दोनों के बीच में झूलता हुआ एक सेतु है ।

इसलिए आदमी पड़ाव नहीं है – या तो पीछे जाओ या आगे जाओ, इस सेतु पर मकान बनाने की जगह नहीं है; और जो भी इस पर मकान बनायेगा वह पछतायेगा; क्योंकि सेतु कोई मकान बनाने की जगह नहीं है, सिर्फ पार होने के लिए है ।

फतहपुर सीकरी में अकबर ने जो एक सर्व धर्म मंदिर बनाने की कल्पना की थी, उसमें जो एक दीन-ए-इलाही का ख्याल था... कि सब धर्मों का सारभूत हो, तो उसने उस दरवाजे पर जो वचन खुदवाया है वह जीसस का वचन है । जीसस का वचन उसने खुदवाया है उस दरवाजे पर, वह वचन यह है कि 'यह जगत मुकाम नहीं, सिर्फ पड़ाव है । यहां थोड़ी देर ठहर सकते हो, लेकिन रुक ही मत जाना; यह कोई यात्रा का अंत नहीं है, यह सिर्फ थकान मिटाने के लिए एक पड़ाव है, एक सराय है – जहां हम रात भर रुकते हैं और सुबह फिर चल पड़ते हैं । और रुकते सिर्फ इसीलिए हैं कि सुबह चल सकें, और रुकने का कोई प्रयोजन नहीं है; रुकने के लिए नहीं रुकते ।

पशु-वृत्तियों का सुख हमेशा क्षणिक

तो आदमी एक सीढ़ी है जिस पर यात्रा है । इसलिए आदमी सदा तनावग्रस्त है । अगर हम ठीक से कहें तो तनावग्रस्त है आदमी, यह कहना शायद ठीक नहीं, यही कहना ठीक है कि मनुष्य एक तनाव है; क्योंकि ब्रिज जो है, तनाव ही है – तना हुआ है; तना हुआ होकर ही ब्रिज हो सकता है । वह दो छोरों पर... और बीच में बेसहारा... तना हुआ है ।

यह मनुष्य एक अनिवार्य तनाव है । इसलिए मनुष्य कभी शांत नहीं हो सकता । या तो वह पशु होता है तो थोड़ी सी शांति मिलती है, और या फिर वह परमात्मा होता है तो फिर पूरी शांति मिलती है । पशु होकर भी तनाव उतर जाता है, क्योंकि वह वापिस लौट आया है सीढ़ी से, नीचे जमीन पर खड़ा हो गया है – परिचित जमीन पर, पहचानी हुई जमीन पर, जिसमें वह अनंत-

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अनंत जन्मों रहा है, वहां वापिस आ गया है; झंझट के बाहर हो गया है। अभी कोई तनाव नहीं है।

इसलिए या तो आदमी सेक्स में खोजता है तनाव की मुक्ति, या सेक्स से संबंधित और अनुभवों में खोजता है – शराब में, नशे में – जहां भी मूर्छा है, वहां वह खोज लेता है। लेकिन वहां तुम थोड़ी देर ही रुक सकते हो; क्योंकि तुम अब कुछ भी चाहो तो स्थायी रूप से पशु नहीं हो सकते। बुरे से बुरा आदमी भी क्षण काल को ही पशु हो सकता है। वह जो आदमी किसी की हत्या कर देता है, वह भी क्षण भर में ही कर पाता है। अगर क्षण भर और रुक गया होता तो शायद नहीं कर पाता। यानी हमारा पशु होना करीब-करीब ऐसा है जैसे एक आदमी जमीन पर छलांग लगाता है; तो एक सेकेंड को हवा में रह पाता हैं फिर वापिस जमीन पर लौट आता है।

तो बुरे से बुरा आदमी भी स्थायी बुरा नहीं होता, न हो सकता है। बुरे से बुरा आदमी भी किन्हीं क्षणों में बुरा होता है। और उन क्षणों के बाहर वह एक ऐसा ही आदमी होता है, जैसे सारे आदमी हैं। पर उस एक क्षण को उसे राहत मिल सकती है, क्योंकि वह परिचित भूमि पर पहुंच गया है, जहां कोई तनाव नहीं था।

इसलिए पशु के मन में तुम्हें कोई तनाव नहीं दिखेगा; उसकी आंखों में झांकोगे तो कोई तनाव नहीं दिखेगा। पशु पागल नहीं होता, आत्महत्या नहीं करता, उसे हृदय का दौरा नहीं पड़ता। उसे ये सब बातें नहीं होतीं। हां, आदमी के चक्कर में पड़ जाये तो पड़ सकता है; आदमी की बैलगाड़ी में जुट जाये तो हृदय का दौरा हो सकता है; आदमी का घोड़ा बन जाये तो मुश्किल में पड़ सकता है; आदमी का कुत्ता हो तो पागल भी हो सकता है। वह दूसरी बात है। वह भी इसीलिए है कि वह आदमी अपने ब्रिज पर उसको खींच लेता है, इसलिए वह झंझट में डाल देता है उसे।

अब जैसे एक कुत्ता इस कमरे में आये तो अपनी मौज से घूमेगा, लेकिन अगर किसी आदमी का पाला हुआ कुत्ता हो तो वह उससे कहेगा – बैठ जाओ उस कोने में। तो कुत्ता उस कोने में बैठेगा। वह आदमी की दुनिया में प्रवेश कर गया। वह पशु की दुनिया से बाहर हो गया। अब वह झंझट में पड़नेवाला है कुत्ता। वह बैठा है, है तो वह कुत्ता। लेकिन बैठा है आदमी की तरह। तुमने उसको तनाव में डाल दिया है। अब वह बड़ी झंझट है कि कब आज्ञा हटे और वह वहां से बाहर हो जाये।

आदमी कुछ देर के लिए, क्षण दो क्षण के लिए वहां पहुंच सकता है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इसीलिए जो हम निरंतर कहते हैं कि हमारे सब सुख क्षणिक हैं, उसका और कोई कारण नहीं है... सुख शाश्वत हो सकता है; लेकिन जहां हम सुख खोजते हैं वह स्थिति क्षणिक है, सुख क्षणिक नहीं है। हम खोजते हैं पशु होने में, तो वह क्षणिक ही हो सकता है, क्योंकि हम पशु क्षण भर को मुश्किल से हो पाते हैं। वह ऐसा ही है कि जैसे हम...

किसी स्थिति में वापिस लौटना सदा मुश्किल है। अगर तुम कल में वापिस लौटना चाहो, बीते कल में, तो तुम आंख बंद करके एकाध क्षण को ऐसी कल्पना में हो सकते हो कि लौट गये, लेकिन कितनी देर ? आंख खोलोगे और पाओगे कि नहीं, वापिस खड़े हो – जहां थे वहीं आ गये हो।

पीछे लौटा नहीं जा सकता; क्षण भर की कोई जबरदस्ती की जा सकती है। फिर पछतावा होगा। इसलिए जितने भी क्षणिक सुख हैं सबके पीछे पछतावा है, सबके पीछे रिपेंटेंस है; सबके पीछे एक दुख-बोध है... बेकार मेहनत की, वह सब व्यर्थ गया। लेकिन फिर चार दिन बाद तुम भूल जाओगे और फिर छलांग लगा लोगे।

पशु के तल पर जाकर क्षण भर को सुख पाया जा सकता है, प्रभु के तल पर जाकर शाश्वत सुख में डूबा जा सकता है, लेकिन यह यात्रा तुम्हारे भीतर पहले पूरी होगी; तुम्हें अपने सेतु के एक कोने से दूसरे कोने पर पहुंचना होगा तब दूसरी घटना घटेगी।

संभोग और समाधि में समानता

इसलिए मैं संभोग और समाधि को बड़ी समतुल बातें मानता हूं। समतुल मानने का कारण है। असल में वे ही दो समतुल घटनाएं हैं, और कोई घटना समतुल नहीं है। संभोग कि स्थिति में हम ब्रिज के एक छोर पर होते हैं, सीढ़ी के नीचेवाले हिस्से पर होते हैं – जहां से हम प्रकृति से मिलते हैं। और समाधि में हम सीढ़ी के दूसरे छोर पर होते हैं जहां हम परमात्मा से मिलते हैं। दोनों मिलन हैं, दोनों विस्फोट हैं, एक अर्थों में। दोनों में किसी खास अर्थ में तुम खोते हो – हां, किसी में क्षण भर के लिए, सेक्स में... संभोग में क्षण भर के लिए और समाधि में सदा के लिए। वह दूसरी बात है। लेकिन दोनों स्थितियों में तुम मिटते हो। यह बड़ा क्षणिक विस्फोट है जो वापिस लौट आता है; तुम रिक्रिस्टेलाईज़ (पुनःसंगठित) हो जाते हो; क्योंकि तुम जहां गये थे वह तुमसे पीछे की अवस्था थी, उसमें तुम लौट नहीं सकते। लेकिन परमात्मा में जाकर तुम रिक्रिस्टलाईज़ नहीं हो सकते हो; वापिस तुम सुसंगठित नहीं हो सकते।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

क्योंकि जिसमें तुम गये हो, उसमें जाते ही, फिर तुम्हारा वापिस लौटना उतना ही असंभव है – जैसे कि पहले तुम्हारा पीछे वापिस लौटना असंभव था। अब तो और भी असंभव है। अब तो उतना असंभव है... ऐसे जैसे कि एक आदमी बड़ा हो गया और उसके बचपन के पाजामे में उसे वापस लौट आना पड़े। पर वह भी संभव है; यह संभव नहीं है। क्योंकि तुम विराट के साथ एक हो गये, अब तुम व्यक्ति में नहीं लौट सकते। अब वह व्यक्ति इतनी क्षुद्र, संकीर्ण जगह है कि जहां तुम्हारे प्रवेश का कोई उपाय नहीं है। अब तुम सोच ही नहीं सकते कि इसमें जाना कैसे हो सकता है! तुम यह भी नहीं सोच सकते कि मैं इसमें कभी था तो कैसे था; इतने छोटे होने में मैं कैसे हो सकता हूं! वह बात खत्म हो जाती है।

उस विस्फोट के लिए दोनों बातें जरूरी हैं; तुम्हारे भीतर की यात्रा तुम्हारे अंतिम बिंदु सहस्रार तक आनी चाहिए। और क्यों उसे हम 'सहस्र' कहते हैं, वह भी थोड़ा ख्याल में ले जरूरी है।

सहस्र-दल-कमल का खिलना

ये सारे शब्द आकस्मिक नहीं हैं। हमारी भाषा आमतौर से आकस्मिक है, उपयोग से पैदा हुई। जैसे किसी चीज को हम दरवाजा कहते हैं, दरवाजा न कहें कुछ और कहें तो कुछ हर्ज नहीं होता। दुनिया में हजार भाषाएं हैं तो हजार शब्द होंगे दरवाजे के लिए, और सभी शब्द काम कर जाते हैं। लेकिन फिर भी कोई एक बात जो सांयोगिक नहीं है, वह शायद सभी में मेल खायेगी।

तो 'दरवाजा' या 'डोर' या 'द्वार' का जो भाव है : जिसके द्वारा हम बाहर-भीतर आते-जाते हैं, वह सभी भाषाओं में मेल खायेगा; क्योंकि वह अनुभव का हिस्सा है, वह सांयोगिक नहीं है। जिससे हम बाहर-भीतर आते-जाते हैं; जिससे जगह मिलती है बाहर-भीतर आने की; स्पेस का एक ख्याल जो उसमें है, वह सबमें होगा।

तो 'सहस्र' शब्द बड़ा अनुभव का है, सांयोगिक नहीं है। जैसे ही तुम उस अनुभूति को उपलब्ध होते हो, तुम्हें लगता है कि तुम्हारे भीतर जैसे हजार-हजार फूल एकदम से खिल गये – सब बंद हजार फूल एकदम से खिल गये। हजार भी इसी अर्थ में कि संख्या के बाहर जैसी घटना घटती है... और फूल इस अर्थ में कि फ्लावरिंग (खिलना) होती है; कोई चीज जो बंद थी कली की तरह वह खुलती है।

फूल का मतलब है, खिलना। फूल का मतलब वही होता है जो प्रफुल्ल

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

होने का होता है – खुल जाना। फ्लावरिंग का भी वही मतलब होता है – खुल जाना। कोई चीज बंद थी वह खुल गयी है। तो कली की तरह कोई चीज थी वह फूल की तरह हो गयी है। फिर एकाध चीज नहीं खुल गयी, अनंत चीजें हैं जो पूरी तरह से खुल गयी हैं। और, इसलिए इसको सहस्त्र कमल, हजार कमल खिल गये हैं, यह ख्याल आना बिकलुल स्वाभाविक था। अगर तुमने कभी सुबह कमल को खिलते देखा है – नहीं देखा तो गौर से देखना चाहिए बहुत निकटता से, बहुत चुपचाप बैठकर उसके पूरे... धीरे-धीरे... पूरे खिलने को देखना चाहिये – तो तुम्हें यह ख्याल आ सकेगा कि अगर हजार मस्तिष्क के कमल एकदम से खिल जायेंगे तो कैसे प्रतीति होगी... कि तुम थोड़ी सी रूप-रेखा कल्पना में ले सकोगे।

और भी एक अदभुत अनुभव हुआ है। जिन लोगों को संभोग का बहुत गहरा अनुभव होगा, उन्हें भी खिलने का एक अनुभव होता है क्षण भर को; उनके भीतर भी कोई चीज खिलती है – बस, क्षण भर को, फिर बंद हो जाती। लेकिन उस खिलने में और इस खिलने में एक और अनुभव होगा कि जैसे कि फूल नीचे की तरफ लटका हुआ खिले, और फूल ऊपर की तरफ खिले... पर वह तुलना तभी हो सकती है जब दूसरा अनुभव तुम्हारे ख्याल में आ जाये... तब तुम्हें पता चलेगा कि नीचे की तरफ फूल खिल रहे थे... और अब ऊपर की तरफ फूल खिल रहे हैं। नीचे की तरफ जो फूल खिलते थे, स्वभावतः वे नीचे के जगत से जोड़ देते थे; ऊपर की तरफ जो फूल खिलते हैं, स्वभावतः वे ऊपर के जगत से जोड़ देते हैं। असल में उनका खिलना और उनकी ओपनिंग तुम्हें वनरेबल बना देती है, तुम्हें खोल देती है; तुम किसी दूसरी दुनिया के लिए दरवाजा बन जाते हो। वहां से कुछ तुममें प्रवेश करता है, और उस प्रवेश से तुम्हारे भीतर विस्फोट घटित होता है।

इसलिए दोनों बातें जरूरी हैं : तुम जाओगे वहां तक और वहां कोई प्रतीक्षा ही कर रहा है। आना कहना ठीक नहीं है कि वहां से कोई आयेगा; तुम जाओगे वहां तक, कोई वहां प्रतीक्षा कर रहा है, घटना घट जायेगी।

शक्तिपात दोहरी घटना

प्रश्न : क्या केवल शक्तिपात के माध्यम से कुंडलिनी सहस्त्रार तक विकसित हो सकती है? उसके सहस्त्रार पर पहुंचने पर क्या समाधि का एक्सप्लोज़न (विस्फोट) हो जाता है? यदि शक्तिपात से कुंडलिनी सहस्त्रार तक विकसित हो सकती हो तो इसका अर्थ यह न हो जायेगा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

किं दूसरे से समाधि उपलब्ध हो सकती है ?

इसे थोड़ा समझना पड़े । असल बात यह है : इस जगत में, इस जीवन में कोई भी घटना इतनी सरल नहीं है जिसको तुम एक ही तरफ से देखो और समझ लो; उसे बहुत तरफ से देखना पड़ेगा । अब जैसे मैं एक दरवाजे पर आऊं और जोर से एक हथौड़ा मारूं और दरवाजा खुल जाये, तो मैं यह कह सकता हूं कि मेरे हथौड़े से दरवाजा खुला । और यह कहना एक अर्थ में सच भी है, क्योंकि मैं अगर हथौड़ा नहीं मारता तो दरवाजा अभी खुलता नहीं । लेकिन इसी हथौड़े को मैं दूसरे दरवाजे पर मारूं और दरवाजा न खुले, हथौड़ा ही टूट जाये – तब ? तब तुम्हें दूसरा पहलू भी ख्याल में आयेगा कि जब तक एक दरवाजे पर मैंने हथौड़ा मारा और दरवाजा खुला, तो सिर्फ हथौड़े के मारने से नहीं खुला, दरवाजा भी खुलने के लिए पूरी तरह तैयार था; क्योंकि दूसरा दरवाजा नहीं खुला । किसी भी कारण से तैयार था – कमजोर था, जराजीर्ण था, पर उसकी तैयारी थी । यानी खुलने में सिर्फ हथौड़ा ही नहीं खोल दिया है उसे, दरवाजा भी खुला; क्योंकि और दूसरे दरवाजों पर हथौड़े की चोट करके देखी है तो हथौड़ा ही टूट गया है कहीं... कहीं हथौड़ा नहीं टूटा, न दरवाजा खुला है । कहीं हम थक गये चोट कर-करके, वह नहीं खुला ।

तो इस घटना में जहां शक्तिपात से कुछ घटना घटती है, वहां शक्तिपात से ही घटती है इस भ्रांति में नहीं पड़ने की जरूरत । वहां वह दूसरा व्यक्ति भी किसी बहुत आंतरिक तैयारी के एक छोर पर पहुंच गया है, जहां जरा सी चोट सहयोगी हो जाती । नहीं यह चोट लगती तो शायद थोड़ी देर लग सकती थी । तो इस शक्तिपात से जो हो रहा है वह कुंडलिनी सहस्रार तक नहीं पहुंच रही, इस शक्तिपात से इतना ही हो रहा है कि टाइम एलिमेंट जो है, समय का जो थोड़ा व्यवधान था वह कम हो रहा है; और कुछ भी नहीं हो रहा । यह आदमी पहुंच तो जाता ही ।

समझ लो कि मैं इस हथौड़े से चोट नहीं मारता इस दरवाजे पर, और यह जराजीर्ण दरवाजा है, यह बिलकुल गिरने को हो रहा है; कल हवा के थपेड़े से गिर जाता । हवा का थपेड़ा भी न आता, क्योंकि दरवाजे का भाग्य – न आये, हवा का थपेड़ा ही न आये उस तरफ, तो क्या तुम सोचते हो, यह दरवाजा खड़ा ही रहता ? यह दरवाजा जो एक ही चोट से गिर गया, जो हवा के थपेड़े से डरता था कि गिर जायेगा, यह बिना हवा के थपेड़े के भी एक दिन गिर जायेगा । जब तुम्हें कारण भी बताना मुश्किल हो जायेगा कि किसने गिराया, तब यह अपने से भी गिर जायेगा, यह गिरने की तैयारी इकट्ठी करता जा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रहा है। तो ज्यादा से ज्यादा जो फर्क लाया जा सकता है, वह सिर्फ समय की परिधि का, टाइम गैप का है।

जो घटना रामकृष्ण के पास अगर विवेकानन्द को घटी, उसमें अगर अकेले रामकृष्ण ही जिम्मेवार हैं, तो फिर और किसी को भी घट जाती, बहुत लोग उनके करीब गये। ...सैकड़ों उनके शिष्य हैं। तो और किसी को नहीं घट गयी है। और अगर विवेकानन्द जिम्मेदार थे अकेले, तो वह रामकृष्ण के पहले और बहुत लोगों के पास गये थे, उनके पास वह नहीं घटी थी। समझ रहे हो न ? तो विवेकानन्द की अपनी एक तैयारी थी, रामकृष्ण की अपनी एक सामर्थ्य थी, यह तैयारी और यह सामर्थ्य किसी बिंदु पर अगर मिल जायें, तो टाइम गैप कम हो सकता है। विवेकानन्द को हो सकता है, अगले जन्म में यह घटना घटती – वर्ष भर बाद घटती, दो वर्ष बाद घटती – दस जन्मों बाद घटती, यह सवाल नहीं है; इस व्यक्ति की अपनी भीतरी तैयारी अगर हो रही थी तो घटना घटती।

टाइम गैप कम हो सकता है। और समझने की बात यह है कि टाइम बड़ी ही फिक्टीशस, बड़ी मायिक घटना है, इसलिए उसका कोई बहुत मूल्य नहीं है। असल में समय इतनी ज्यादा स्वप्निल घटना है कि उसका कोई बड़ा मूल्य नहीं है। अभी तुम एक झपकी लो और हो सकता है कि घड़ी में एक ही मिनट गुजरे और तुम जागकर कहो कि मैंने इतना लंबा स्वप्न देखा कि मैं बच्चा था, जवान था, बूढ़ा हुआ, मेरे लड़के थे, शादी हुई, धन कमाया, सट्टे में हार गया – यह सब हो गया, और यहां बाहर हम कहें कि यह तुम कैसी बातें कर रहे हो, इतना लंबा सपना देखने के लिए भी वक्त लगेगा, क्योंकि अभी तुम एक सेकेंड... तुम्हारी आंख बंद हुई है सिर्फ, तुमने झपकी भर ली है। असल में ड्रीम टाइम जो है, स्वप्न का जो समय है, उसकी यात्रा बहुत अलग है। वह बहुत छोटे से समय में बहुत घटनाएं घटाने की उसकी संभावना है, इसलिए हमें बड़ी भ्रांति होती है।

अब ये कुछ कीड़े हैं जो कि पैदा होते हैं सुबह और सांझ मर जाते हैं; हम कहते हैं, बेचारे ! लेकिन हमें यह पता नहीं कि उनका टाइम का जो अनुभव है, वह उतना ही है जितना हमें सत्तर साल में होता। कोई फर्क नहीं पड़ता। वे इस बारह घंटे में वे सब काम कर लेते है – घर बना लेते हैं, पत्नी खोज लेते हैं, शादी-विवाह रचा लेते हैं, लड़ाई-झगड़ा कर लेते हैं – जो भी करना है, सब कर-करा के सांझ मर जाते हैं। इसमें कुछ कमी नहीं छोड़ते; इसमें सब हो जाता है। इसमें शादी-विवाह, तलाक, लड़ाई-झगड़ा सब घटना

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

घट-घटाकर वे संन्यास वगैरह भी सब कर डालते हैं – सुबह से सांझ तक ! पर वह जो समय का उनका जो बोध है, उसमें फर्क है । इसलिए हमें लगता है, बेचारे ! और वे अगर सोचते होंगे तो हमरी बाबत सोचते होंगे कि हम जो बारह घंटे में कर लेते हैं, तुमको सत्तर साल लग जाते हैं – बेचारे ! इतना काम तो हम बहुत जल्दी निपटा लेते हैं, इन लोगों को क्या हो गया है ! कैसी मंद बुद्धि के हैं, सत्तर साल लगा देते हैं !

समय जो है, वह बिलकुल ही मनोनिर्भर, मेंटल एन्टिटि है । इसलिए हमारा भी हमारे मन के अनुसार समय का अनुपात छोटा-बड़ा होता रहता है । जब तुम सुख में होते हो, समय एकदम छोटा हो जाता है; जब तुम दुख में होते हो, समय एकदम लंबा हो जाता है । घर में कोई मर रहा है और तुम उसकी खाट के पास बैठे हो तो तब रात बहुत लंबी हो जाती है, कटती ही नहीं । ऐसा लगता है कि अब यह रात कभी खत्म होगी कि नहीं होगी; सूरज उगेगा कि नहीं उगेगा ! रात इतनी लंबी होती जाती है कि लगता है कि अब नहीं, यह आखिरी रात है; अब यह कभी होगा नहीं, सूरज उगेगा नहीं ! दुख समय को बहुत लंबा कर देता है; क्योंकि दुख में तुम जल्दी से समय को बिताना चाहते हो; तुम्हारी अपेक्षा जल्दी की हो जाती है । तुम्हारा एक्सपेक्टेशन है कि जल्दी बीत जाये । जितनी तुम्हारी अपेक्षा तीव्र हो जाती है, समय उतना मंदा मालूम पड़ने लगता है, क्योंकि उसका अनुभव रिलेटिव (सापेक्ष) है । जब तुम्हारी अपेक्षा बहुत तीव्र होती है, वह तो अपनी गति से चला जा रहा है, पर तुम्हें ऐसा लगता है कि बहुत धीमे जा रहा है । जैसे कोई प्रेमी अपनी प्रेयसी से मिलने बैठा है और वह चली आ रही है; वह तो चाहता है कि बिलकुल दौड़ती हुई जेट की रफ्तार से आये, लेकिन वह आदमी की रफ्तार से आ रही है । तो उसे लगता है, कैसी मंद गति चलती है ।

तो दुख में तुम्हारा समय का बोध एकदम लंबा हो जाता है । सुख आता है, तुम्हारा मित्र मिलता है, प्रियजन मिलता है, रात भर जागकर तुम गपशप करते रहते हो, सुबह विदा होने का वक्त आता है : तुम कहते हो, रात कैसे बीत गयी क्षण भर में ! यह तो आयी, न आयी बराबर हो गयी; ऐसा लगता ही नहीं कि आयी थी ।

सुख में तुम्हारे समय का बोध एकदम भिन्न हो जाता है, दुख में भिन्न हो जाता है ।

तो तुम्हारी मनोनिर्भर ईकाई है समय । इसलिए इसमें तो फर्क पैदा ही किये जा सकते हैं, क्योंकि तुम्हारे मन तक तो चोट की जा सकती है । इसमें

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कोई कठिनाई नहीं है। अगर मैं तुम्हारे सिर पर लट्ठ मार दूं तो तुम्हारा सिर खुल जाता है। तब तुम क्या कहोगे कि तुम्हारा सिर एक आदमी ने खोल दिया, उस पर निर्भर हो गये तुम ! हो ही गये निर्भर। तुम्हारे शरीर को चोट की जा सकती है; तुम्हारे मन को भी चोट की जा सकती है; हां, तुमको चोट नहीं की जा सकती, क्योंकि तुम न शरीर हो, न तुम मन हो। लेकिन अभी तुम मन पर ठहरे हुए अपने को मन मान रहे हो, या अपने को शरीर मान रहे हो, तो इन सबको तो चोट की जा सकती है, और इनकी चोट से तुम्हारे समय के अंतर को बहुत कम किया जा सकता है – कल्पों को क्षणों में बदला जा सकता है; क्षणों को कल्पों में बदला जा सकता है।

मुक्ति समयातीत है

लेकिन जिस दिन तुम जागोगे, यह बहुत मजे की बात है कि बुद्ध जिस दिन जागे, उनको तो पच्चीस सौ साल हो गये, जीसस को दो हजार साल हो गये, कृष्ण को शायद पांच हजार साल हो गये, जरथुस्त्र को बहुत समय हुआ, मूसा को बहुत समय हुआ – लेकिन जिस दिन तुम जागोगे, तुम अचानक पाओगे कि अरे, वे भी अभी ही जागे हैं ! क्योंकि वह जो टाइम गैप (काल-अनंराल) है, वह एकदम खतम हो जायेगा; ये पच्चीस सौ साल, और दो हजार, और पांच हजार साल एकदम सपने के मालूम पड़ेंगे।

इसलिए जब कोई जागता है, तो एक ही क्षण में सब जागते हैं, कोई क्षण में फर्क नहीं पड़ता। लेकिन यह बड़ा कठिन है ख्याल में लेना। यह बड़ा कठिन है कि जिस दिन तुम जागोगे, उस दिन तुम एकदम कंटेंपरेरी (समकालीन) हो जाओगे – बुद्ध के, महावीर के, कृष्ण के : वे सब तुम्हें चारों तरफ खड़े हुए मालूम पड़ेंगे; सब अभी-अभी जागे – अभी, तुम्हारे साथ ही। एक क्षण का भी फासला वहां नहीं है। वहां नहीं हो सकता।

हैं, वे परिधि की भाषा समझते हैं। इसलिएं बहुत भूल की संभावना है वहां।

एक आदमी मेरे पास आया। भक्त है, जीसस का भक्त। तो उसने मुझसे पूछा कि आपका जीसस के बाबत क्या ख्याल है ? तो मैंने उससे कहा कि अपने ही बाबत ख्याल बनाना अच्छा नहीं होता। मुझे, थोड़ा उसने चौंककर देखा, उसने कहा कि नहीं, शायद आप सुने नहीं; मैं पूछ रहा हूं : जीसस के बाबत आपका क्या ख्याल हैं ? तो मैंने उससे कहा कि मैं भी समझता हूं कि तुमने शायद सुना नहीं ! मैं कहता हूं कि अपने ही बाबत ख्याल बनाना ठीक नहीं होता। उसने कुछ परेशानी से मुझे देखा। मैंने उससे कहा कि जीसस के

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

बाबत ख्याल तभी तक बनाया जा सकता है जब तक जीसस को नहीं जानते, जिस दिन जानोगे उस दिन तुममें और जीसस में क्या फर्क है ? कैसे ख्याल बनाओगे ?

ऐसा हुआ कि रामकृष्ण के पास कभी कोई चित्रकार आया और उनका एक चित्र बनाकर लाया। और वह रामकृष्ण को लाकर उसने बताया कि देखिये, आपका चित्र बनाया है, कैसा बना है ? रामकृष्ण उस चित्र के पैरों में सिर लगाकर नमस्कार करने लगे। तो वहां जितने लोग बैठे थे उन सबने सोचा कि कुछ भूल हो गयी है, क्योंकि अपने ही चित्र के पैर पड़ रहे हैं तो ! क्या, गड़बड़ क्या है ? शायद समझे नहीं, चित्र उन्हीं का है। तो उस चित्रकार ने कहा : माफ करिये, यह चित्र आपका ही है... और आप ही इसके...

तो उन्होंने कहा कि अरे, मैं भूल गया। असल में, उन्होंने कहा कि यह चित्र इतना समाधिस्थ है कि मेरा कैसे हो सकता है ! रामकृष्ण ने कहा, यह चित्र इतना समाधि का है कि मेरा कैसे हो सकता है ? क्योंकि समाधि में कहां 'मैं' और कहां 'तू'। तो मैं तो समाधि के पैर पड़ने लगा; तुमने ठीक याद दिला दी, और वक्त पर याद दिला दी, नहीं तो लोग बहुत हंसते। ...और लोग तो हंस ही चुके थे !

परिधि और केंद्र की भाषाएं अलग हैं। इसीलिए अगर ...अगर कृष्ण कहते हैं कि मैं ही था राम, और अगर जीसस कहते मैं कि मैं ही पहले भी आया था और तुम्हें कह गया था, और अगर बुद्ध कहते हैं कि मैं फिर आऊंगा, तो इस सबमें वे सब केंद्र की भाषा बोल रहे हैं जिससे हमको बड़ी कठिनाई होती है। अब बौद्ध भिक्षु प्रतीक्षा कर रहे हैं कि वे कब आयेंगे। वे बहुत बार आ चुके। वे रोज खड़े होंगे तो भी नहीं पहचान में आयेंगे, क्योंकि अब उसी शकल में तो आने को कोई उपाय नहीं है; वह शकल तो सपने की शकल थी, वह खो गयी।

तो वहां कोई समय का अंतराल नहीं है। और इसीलिए तुम्हारे समय की स्थिति में तो तीव्रता और कमी की जा सकती है; बहुत कमी की जा सकती है। उतना शक्तिपात से हो सकता है।

कोई दूसरा नहीं है

और दूसरी बात जो तुम उसमें पूछते हो कि इसमें तो दूसरा... वह दूसरा भी तभी तक दिखाई पड़ रहा है न ! वह दूसरे का जो दूसरा होना है, वह भी हमारी अपनी सीमा की जोर से पकड़े होने की वजह से मालूम पड़ रहा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है । तो विवेकानन्द को लगेगा कि रामकृष्ण की वजह से मुझे हो गया । रामकृष्ण को लगे तो बड़ी नासमझी हो जायेगी । रामकृष्ण के लिए तो ऐसी घटना घटी है, जैसे कि मेरे हाथ पर कोई चोट लगी हो और मैंने मलहम लगा दी । तो मेरा यह हाथ... बायां हाथ समझेगा कि कोई और मेरी सेवा कर रहा है । दायें हाथ से मैं लगाऊंगा न ! ...तो कोई और कर रहा है । हो सकता है, धन्यवाद भी दे; हो सकता है, इनकार भी कर दे कि भई, रहने दो; मैं स्वावलंबी हूं; मैं दूसरे की सहायता नहीं लेता हूं । लेकिन उसे पता नहीं कि जो उसमें प्रवेश किया हुआ है, बायें में, वही दायें में भी प्रवेश किया हुआ है; वह एक ही है ।

तो जब कभी कोई किसी दूसरे के लिए दूसरे की तरफ से सहायता पहुंचती है, तो सच में कोई दूसरा नहीं है; तुम्हारी तैयारी ही उस सहायता को तुम्हारे ही दूसरे हिस्से से बुलाती है और पुकारती है ।

इजिप्त में एक बहुत पुरानी किताब है जो यह कहती है कि तुम गुरु को कभी मत खोजना, क्योंकि जिस दिन तुम तैयार हो, गुरु तुम्हारे दरवाजे पर हाजिर हो जायेगा; तुम खोजने जाना ही मत । और वे यह भी कहते हैं कि अगर तुम खोजने भी जाओगे तो खोजे कैसे सकोगे ? तुम पहचानोगे कैसे ? क्योंकि अगर तुम इस योग्य ही हो गये कि गुरु को भी पहचान लो, तब फिर और क्या कमी रह गयी । इसलिए सदा ही गुरु शिष्य को पहचानता है, शिष्य कभी गुरु को नहीं पहचान सकता । उसका कोई उपाय नहीं है । मेरा मतलब समझे न ? उसका उपाय कहां है ? अभी तुम अपने को नहीं पहचानते तो तुम गुरु को कैसे पहचानोगे कि यही आदमी है ! तुम नहीं पहचान सकते । हां, लेकिन जिस दिन तुम तैयार हो, उस दिन तुम्हारा ही कोई हाथ तुम्हारी सहायता के लिए मौजूद हो जाता है । वह दूसरे का हाथ तभी तक है जब तक तुम्हें पता नहीं चला है । जिस दिन तुम्हें पता चलेगा उस दिन तुम धन्यवाद देने को भी नहीं रुकोगे ।

जापान में ज़ेन मॉनेस्ट्री का एक हिसाब है कि जब कोई मॉनेस्ट्री में, आश्रम में आता है ध्यान सीखने, तो अपनी चटाई आकर बिछाता है – चटाई दबाकर लाता है, बिछा देता है, बैठ जाता है; समझ लेता है, ध्यान करके चला जाता है, चटाई वहीं छोड़ जाता है । फिर वह रोज आता रहता है और अपनी चटाई पर बैठता है, चला जाता है । जिस दिन पूरा हो जाता है उस दिन अपनी चटाई गोल कर के चला जाता है; गुरु समझ जाता है, हो गया । इसके लिए धन्यवाद देने की भी क्या जरूरत है ? वह जिस दिन चटाई गोल करता है, उस दिन गुरु कहता है कि अच्छा, जा रहे हो ? क्योंकि किसको धन्यवाद देना

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है ! वह यह भी नहीं कहता है कि हो गया, वह अपनी चटाई लपेटने लगता है तो गुरु समझता है कि चलो, ठीक है, बस, चटाई लपेटने का वक्त आ गया, अच्छी बात है। इतनी औपचारिकता की भी कहां जरूरत है कि धन्यवाद दो... किसको धन्यवाद दो ! और अगर कोई धन्यवाद देगा तो गुरु डंडा भी मार सकता है उसको... कि खोल चटाई वापिस, अभी तेरा नहीं हुआ; किसको धन्यवाद देते हो ?

तो वह जो दूसरे का ख्याल है वह हमारे अज्ञान की ही धारणा है, अन्यथा कौन है दूसरा। हमी हैं बहुत रूपों में, हमी हैं बहुत यात्राओं पर, हमी हैं बहुत दर्पणों में। निश्चित ही, सभी दर्पणों में, लेकिन दिखाई तो कोई और ही पड़ रहा है।

एक सूफी कहानी है कि एक कुत्ता एक राजमहल में घुस गया। और उस राजमहल में सारी दिवालें दर्पण की बनाई गयी थीं। वह कुत्ता बहुत मुश्किल में पड़ गया, क्योंकि उसे चारों तरफ कुत्ते ही कुत्ते दिखाई पड़ने लगे। वह बहुत घबड़ाया। इतने कुत्ते चारों तरफ ! अकेला घिर गया इतने कुत्तों में ! निकलने का भी रास्ता नहीं रहा। द्वार-दरवाजे पर भी आईने थे। सब तरफ आईने ही आईने थे। फिर वह भौंका। लेकिन उसके भौंकने के साथ सारे कुत्ते भौंके और उसकी आवाज सारी दीवालों से टकरा कर वापस लौटी, तब तो बिलकुल पक्का हो गया कि खतरे में जान है। और बहुत दूसरे कुत्ते मौजूद हैं। और वह चिल्लाता रहा, और जितना चिल्लाया उतने ही जोर से बाकी कुत्ते भी चिल्लाये; और जितना वह लड़ा और भौंका और दौड़ा उतने ही सारे कुत्ते भी दौड़े और भौंके। और उस कमरे में वह अकेला कुत्ता था। रात भर वह भौंकता रहा, भौंकता रहा, सुबह जब पहरेदार आया तो वह कुत्ता मरा हुआ पाया गया, क्योंकि वह दीवालों से लड़कर और भौंककर थक गया और मर गया, हालांकि वहां कोई भी नहीं था। जब वह मर गया तो दीवालें भी शांत हो गयीं, वह दर्पण चुप हो गया।

असल में ऐसा समझो कि हम एक बड़ा वृत्त खीचें, एक बड़ा सर्कल बनायें, और सर्कल के सेंटर (केंद्र) पर हम वृत्त से बहुत सी रेखाएं खीचें; हजार रेखाएं परिधि से खीचें और केंद्र पर जोड़ दें। परिधि पर तो बहुत फासला होगा, दो रेखाओं के बीच में। फिर तुम केंद्र की तरफ बढ़ने लगे, फासला कम होने लगा। फिर तुम जब केंद्र पर पहुंचोगे, तुम पाओगे फासला खतम हो गया, दोनों रेखाएं एक हो गयीं। तो जिस दिन अनुभूति की उस प्रगाढ़ता के केंद्र पर कोई पहुंचता है, तो वे जो परिधि पर फासले थे, ढाई हजार साल के, दो

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हजार साल के, वे सब खत्म हो जाते हैं। इसलिए बहुत दिक्कत होती है, बड़ी कठिनाई होती है, क्योंकि उस जगह से बोलने से कई बार भूल हो जाती है; क्योंकि जिनसे हम बोल रहे है। मगर यह परम अनुभव के बाद ख्याल में आना शुरू होगा, उसके पहले तो निश्चित ही दूसरा है।

अनुभूति और अभिव्यक्ति

प्रश्न : विवेकानन्द को शक्तिपात से नुकसान हुआ था, ऐसा आपने एक बार कहा था ?

असल में विवेकानन्द को शक्तिपात से तो नुकसान नहीं हुआ, लेकिन शक्तिपात के पीछे जो हुआ उससे नुकसान हुआ; जो और चीजें चलीं। पर नुकसान और हानि की बात भी सपने के भीतर की बात है, बाहर की नहीं। तो जिस भांति रामकृष्ण की सहायता से उनको एक झलक मिली – जो झलक शायद उनको अपने ही पैरों पर कभी मिलती, वक्त लग जाता – लेकिन उस झलक के बाद, चूंकि वह झलक दूसरे से मिली थी, दूसरे के द्वारा मिली थी। जैसे मैंने हथौड़ा मारा दरवाजे पर और दरवाजा टूट गया, लेकिन मैं दरवाजे को फिर खड़ा कर गया, उसी हथौड़े से कीलें ठोंक गया और वापिस ठीक कर गया। जो हथौड़ा दरवाजा गिरा सकता है, वह कीलें भी ठोंक सकता है, हालांकि दोनों हालत में एक ही बात हो रही है। पहले भी समय ही थोड़ा कम हुआ था, अब समय ही फिर थोड़ा हो जायेगा।

रामकृष्ण की कुछ कठिनाइयां थीं जिनके लिए उन्हें विवेकानन्द का उपयोग करना पड़ा। रामकृष्ण निपट देहाती, अपढ़, अशिक्षित आदमी थे; अनुभव उनको गहरा हुआ था, लेकिन अभिव्यक्ति उनके पास नहीं थी। और जरूरी था कि वह अपनी अभिव्यक्ति के लिए किसी आदमी को साधन बनायें, वाहन बनायें, नहीं तो रामकृष्ण का आपको पता ही नहीं चलता। और रामकृष्ण को जो मिला था, यह उनकी करुणा का हिस्सा ही है कि वह किसी आदमी के द्वारा उसे आप तक पहुंचाते। मेरे घर में खजाना मिल जाये मुझे, और मेरे पैर टूटे हों, और मैं किसी आदमी के कंधे पर खजाना रखकर आपके घर तक पहुंचा दूं, तो उस आदमी के कंधे का तो मैंने उपयोग किया, उसे थोड़ी तकलीफ भी दी; क्योंकि इतनी दूर वजन तो उसे ढोना ही पड़ेगा। लेकिन उस आदमी को तकलीफ देने का इरादा नहीं है, इरादा वह जो खजाना मुझे मिला है, आप तक पहुंचाने का है; क्योंकि मैं हूं लंगड़ा, और यह खजाना यहीं पड़ा रह जायेगा, और मैं घर के बाहर खबर भी नहीं ले जा सकूंगा।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तो रामकृष्ण को एक कठिनाई थी। बुद्ध को ऐसी कठिनाई नहीं थी। बुद्ध के व्यक्तित्व में रामकृष्ण और विवेकानन्द एकसाथ मौजूद हैं। तो बुद्ध जो जानते थे, वे कह भी सकते थे; रामकृष्ण जो जानते थे, वे कह नहीं सकते थे। कहने के लिए उन्हें एक आदमी चाहिए था जो उनका मुंह बन जाये। तो विवेकानन्द को उन्होंने झलक तो दिखा दी, लेकिन तत्काल विवेकानन्द से कहा कि अब चाबी मैं रखे लेता हूं अपने हाथ में, अब मरने के तीन दिन पहले लौटा दूंगा। अब विवेकानन्द बहुत चिल्लाने लगे कि आप यह क्या कर रहे हैं! अब जो मुझे मिला है, उसे छीनें मत! रामकृष्ण ने कहा, लेकिन अभी तुझे और दूसरा काम करना है; अगर यह तू इसमें डूबा तो गया। तो अभी मैं तेरी चाबी रखे लेता हूं; इतनी तू कृपा कर। और मरने के तीन दिन पहले तुझे लौटा दूंगा। और अब मरने के तीन दिन पहले तक तुझे समाधि उपलब्ध न हो... तुझे कुछ और काम करना है जो समाधि के पहले ही तू कर पायेगा। और इसका भी कारण यह था कि रामकृष्ण को पता नहीं था कि समाधि के बाद भी लोगों ने यह काम किया है। लेकिन रामकृष्ण को पता हो भी नहीं सकता था, क्योंकि वे समाधि के बाद कुछ भी नहीं कर पाये थे।

स्वभावतः हम अपनी ही अनुभूति से चलते हैं। रामकृष्ण की अनुभूति के बाद रामकृष्ण कुछ भी नहीं कह पाते थे; बोल नहीं पाते थे। बोलना तो बहुत मुश्किल था, वे तो इतने... कोई कह देता 'राम' – और वे बेहोश हो जाते। यह तो... दूसरा कह देता... कोई चला आया है, उसने कहा : 'जय राम जी' – और वे बेहोश होकर गिर गये! उनके लिए तो 'राम' शब्द भी सुनाई पड़ जाये तो मुश्किल मामला था... उनको याद आ गयी उसी जगत की। किसी ने कह दिया : 'अल्लाह', तो वे गये; मस्जिद दिखाई पड़ गयी तो वहीं खड़े होकर बेहोश हो गये; कहीं भजन-कीर्तन हो रहा है,वे चले जा रहे हैं अपने रास्ते से... वे गये – वहीं सड़क पर गिर गये। उनकी कठिनाई यह हो गयी थी : कहीं से भी जरा सी स्मृति आ जाये उनको उस रस की... कि वे गये। तब उनको तो बहुत कठिनाई थी। और उनका अनुभव उनके लिहाज से ठीक ही था कि विवेकानन्द को अगर यह अनुभूति हो गयी तो फिर क्या होगा! तो उन्होंने विवेकानन्द से कहा कि तुझे तो मैं कुछ... एक बड़ा काम, वह तू कर ले, उसके बाद...

इसलिए विवेकानन्द की पूरी जिंदगी समाधि-रहित बीती; और इसलिए बहुत तकलीफ में बीती। तकलीफ लेकिन सपने की... इस बात को ख्याल में रख लेना कि तकलीफ सपने की है; एक आदमी सोया है और बड़ी तकलीफ

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

का सपना देख रहा है। मरने के तीन दिन पहले चाबी वापस मिल गयी, लेकिन मरने तक बहुत पीड़ा थी। मरने के पांच-सात दिन पहले तक भी जो पत्र उन्होंने लिखे वे बहुत दुख के थे कि मेरा क्या होगा, मैं तड़प रहा हूं। और तड़प और भी बढ़ गयी, क्योंकि जो देख लिया है एक दफा, उसकी दुबारा झलक नहीं मिली।

अभी उतनी तड़प नहीं है आपको, क्योंकि कुछ पता ही नहीं है कि क्या हो सकता है; उसकी एक झलक मिल जाये...

आप खड़े थे अंधेरे में, कोई तकलीफ न थी; हाथ में कंकड़-पत्थर थे, तो भी बड़ा आनंद था, क्योंकि संपत्ति थी। फिर चमक गयी बिजली और दिखाई पड़ा कि हाथ में कंकड़-पत्थर हैं – और सामने दिखाई पड़ा कि रास्ता भी है, और सामने दिखाई पड़ा कि हीरों की खदान भी है, लेकिन बिजली खो गयी – और बिजली कह गयी है कि अभी दूसरा काम तुम्हें करना है : वे जो और पत्थर बीन रहे हैं उनसे कहना है कि यहां आगे खदान है। इसलिए अभी तुम्हारे लिए वापिस बिजली नहीं चमकेगी; अब तुम ये जो बाकी पत्थर इकट्ठे कर रहे हैं इनको समझाओ।

तो विवेकानन्द से एक काम लिया गया है जो कि रामकृष्ण के लिए सप्लिमेंटरि (पूरक) था, जरूरी था; जो उनके व्यक्तित्व में नहीं था वह दूसरे व्यक्ति से लेना पड़ा

ऐसा बहुत बार हो गया है, बहुत बार हो जाता है; कुछ बात जो नहीं संभव हो पाये एक व्यक्ति से, उसके लिए दो-चार व्यक्ति भी खोजने पड़ते हैं। कई बार तो एक ही काम के लिए दस-पांच व्यक्ति भी खोजने पड़ते हैं। उन सबके सहारे से वह बात पहुंचायी जा सकती है। उसमें है तो करुणा ही। लेकिन विवेकानन्द के साथ तो...

इसलिए मेरा कहना यह है कि जहां तक बने शक्तिपात से बचना; जहां तक बने वहां तक प्रसाद की फिक्र करना। और शक्तिपात भी वही उपयोगी है जो प्रसाद-जैसा हो। जिसके साथ कोई कंडिशनिंग न हो, जिसके साथ कोई शर्त न हो – जो यह न कहे कि अब हम चाबी रखे लेते हैं। मेरा मतलब समझे न ? जो यह न कहे कि अब कोई शर्त है इसके साथ – जो बेशर्त, अनकंडिशनल हो; जो आपको हो जाये और वह आदमी कभी आपसे पूछने भी न आये कि क्या हुआ; आपको अगर धन्यवाद भी देना हो तो उसको खोजना भी मुश्किल हो जाये कि उसे कहां जाकर धन्यवाद दें। उतना ही आपके लिए आसान पड़ेगा। लेकिन कभी रामकृष्ण जैसे व्यक्ति को जरूरत पड़ती है। तो उसके

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सिवाय कोई रास्ता नहीं था। अन्यथा रामकृष्ण का जानना खो जाता; वे कह नहीं पाते। उनके लिए जबान चाहिए थी जो उनके पास नहीं थी। वह जबान उन्हें विवेकानन्द से मिल गयी।

इसलिए विवेकानन्द निरंतर कहते थे कि जो भी मैं कह रहा हूं वह मेरा नहीं है। और अमरीका में जब उन्हें बहुत सम्मान मिला, तो उन्होंने कहा कि मुझे बड़ा दुख हो रहा है, और मुझे बड़ी मुश्किल पड़ती है, क्योंकि जो सम्मान मुझे दिया जा रहा है वह एक और दूसरे आदमी को मिलना चाहिए था जिसका आपको पता ही नहीं। और जब उन्हें कोई महापुरुष कहता, तो वे कहते कि जिस महापुरुष के पास मैं बैठकर आया हूं, मैं उसके चरणों की धूल भी नहीं हूं।

लेकिन रामकृष्ण अगर अमरीका में जाते, तो वे किसी पागलखाने में भर्ती किये जा सकते थे; और उनकी चिकित्सा की जाती; उनकी कोई नहीं सुनता, वे बिलकुल पागल सिद्ध होते। वे पागल थे। अभी तक हम यह नहीं साफ कर पाये कि एक सिकुलर (लौकिक) पागलपन होता है और एक नॉनसिकुलर (अलौकिक) पागलपन भी होता है। अभी हम फर्क नहीं कर पाये कि एक पागलपन सांसारिक पागलपन, और एक और पागलपन भी है — डिवाइन भी... वह हमें फर्क तो नहीं हो पाया।

तो अमरीका में एक-से दोनों पागल एकसाथ पागलखाने में बंद कर दिये जाते हैं; दोनों की एक चिकित्सा हो जाती है। रामकृष्ण की चिकित्सा हो जाती। और विवेकानन्द को सम्मान मिला! क्योंकि विवेकानन्द जो कह रहे हैं, वह कहने की बात है; वे खुद कोई दीवाने नहीं है; वे एक संदेशवाहक हैं, एक डाकिया। चिट्ठी ले गये हैं किसी की, वह जाकर पढ़कर सुना दी है। लेकिन वे अच्छी तरह पढ़कर सुना सकते हैं।

नसरुद्दीन के जीवन में एक बहुत अद्भुत घटना है। नसरुद्दीन अपने गांव में अकेला पढ़ा-लिखा आदमी है। और जिस गांव में एक ही अकेला पढ़ा-लिखा हो, वह भी बहुत पढ़ा-लिखा तो होता नहीं! तो चिट्ठी किसी को लिखवानी हो, तो उसी से लिखवानी पड़ती है। तो एक आदमी उससे चिट्ठी लिखवाने आया है। वह नसरुद्दीन कहता है कि मैं न लिखूंगा, मेरे पैर में बड़ी तकलीफ है। उस आदमी ने कहा, भई पैर से चिट्ठी लिखने को कहता कौन है! आप हाथ से चिट्ठी लिखिये। नसरुद्दीन ने कहा कि तुम समझे नहीं, असल में हम चिट्ठी लिखते हैं तो हम ही पढ़ते है; हमें दूसरे गांव में जाकर पढ़नी भी पड़ती है। पैर में बहुत तकलीफ है, अभी हमें चिट्ठी लिखने की झंझट में नहीं पड़ना। लिख तो देंगे, पढ़ेगा कौन ? वह दूसरे गांव में हमीं को जाना

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पड़ता है न ! तो अभी जब तक पैर में तकलीफ है, हम चिट्ठी लिखना बंद ही रखेंगे।

तो, रामकृष्ण जैसे जो लोग हैं, जो चिट्ठी भी लिखेंगे... ये खुद ही पढ़ सकते हैं। ये आपकी भाषा भूल ही गये; आपकी भाषा का इनको कोई पता ही नहीं है। और ये एक और तरह की भाषा बोल रहे हैं जो आपके लिए बिकलुल मीनिंगलेस, अर्थहीन हो गयी है। हम इनको पागल कहेंगे कि यह आदमी पागल है। तो हमारे बीच में से इन्हें कोई डाकिया पकड़ना पड़े जो हमारी भाषा में लिख सके। निश्चित ही, वह डाकिया ही होगा। इसलिए विवेकानन्द से जरा सावधान रहना। उनका कोई अपना अनुभव गहरा नहीं है। जो वे कह रहे हैं, वह किसी और का है। हां, कहने में वे कुशल हैं, होशियार हैं। जिसका था वह इतनी कुशलता से नहीं कह सकता था। लेकिन, फिर भी वह विवेकानन्द का अपना नहीं है।

ज्ञानियों की झिझक और अज्ञानियों का अति आत्मविश्वास

इसलिए विवेकानन्द की बातचीत में ओवरकांफिडेंस (अति आत्मविश्वास) मालूम पड़ेगा। जरूरत से ज्यादा वे बल दे रहे हैं। वह बल कमी की पूर्ति के लिए है। उन्हें खुद भी पता है कि वे जो कह रहे हैं, वह उनका अपना अनुभव नहीं है। इसलिए ज्ञानी तो थोड़ा बहुत हेज़िटेट (झिझक) करता है; वह थोड़ा बहुत डरता है। उसके मन में पचास बातें होती हैं कि यह कहूं, ऐसा कहूं, वैसा कहूं, गलत न हो जाये। जिसको कुछ पता नहीं है वह बेधड़क, जो उसे कहना है, कह देता है; क्योंकि उसे कोई कठिनाई नहीं होती, हेज़िटेशन (झिझक) कभी नहीं होता; वह कह देता है कि ठीक है।

बुद्ध जैसे ज्ञानी को तो बड़ी कठिनाई थी। तो वे तो बहुत सी बातों का जवाब ही नहीं देते थे। वे कहते थे,मैं जवाब ही नहीं दूंगा, क्योंकि कहने में बड़ी कठिनाई है। कुछ लोग तो कहते, इससे तो हमारे गांव में अच्छे आदमी हैं, वे जवाब तो देते हैं, वे ज्यादा ज्ञानी हैं आप से; कोई भी चीज पूछो, जवाब दे देते हैं। भगवान है कि नहीं ? तो वे कहते तो हैं कि है या नहीं। उनको पता तो है, आपको पता नहीं है क्या ? आप क्यों नहीं कहते कि 'है' या 'नहीं' ? अब बुद्ध की बड़ी मुश्किल थी। 'है' कहें तो मुश्किल है, 'नहीं' कहें तो मुश्किल है। तो वे हेज़िटेट (संकोच) करेंगे, वे कहेंगे कि नहीं भई, इस संबंध में बात ही मत करो, कुछ और बातें करें। स्वभावतः, हम कहेंगे कि फिर पता नहीं है, आप तो यही कह दो। यह भी बुद्ध नहीं कह सकते, क्योंकि पता तो है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

और हमारी कोई भाषा काम नहीं करती।

इसलिए बहुत बार ऐसा हुआ है कि रामकृष्ण जैसे बहुत लोग पृथ्वी पर अपनी बात को बिना कहे खो गये हैं। वे नहीं कह पाते, क्योंकि यह बहुत रेअर कंबिनेशन (दुर्लभ संयोग) है कि एक आदमी जाने भी और कह भी सके। और जब यह घटना घटती हैं तो ऐसे व्यक्ति को हम तीर्थंकर, अवतार, पैगंबर, इस तरह के शब्दों का उपयोग करने लगते हैं। वह, उसका कारण यह नहीं है कि इस तरह के और लोग नहीं होते, इस तरह के और भी लोग हुए, लेकिन कह नहीं सके।

बुद्ध से किसी ने पूछा है... कि आपके पास ये दस हजार भिक्षु हैं, चालीस साल से आप लोगों को समझा रहे हैं, इनमें से कितने लोग आपकी स्थिति को उपलब्ध हुए ? बुद्ध ने कहा, बहुत लोग हैं इनमें। तो उस आदमी ने कहा, आप जैसा कोई पता तो नहीं चलता हमें। बुद्ध ने कहा, फर्क इतना ही है कि मैं कह सकता हूं, वे कह नहीं सकते; और कोई फर्क नहीं है। मैं भी न कहूं तो तुम मुझको भी नहीं पहचान सकोगे, बुद्ध ने कहा; क्योंकि तुम बोलना पहचानते हो, तुम जानना थोड़े ही पहचानते हो। यह संयोग की बात है कि मैं बोल भी सकता हूं, जानता भी हूं; यह बिलकुल संयोग की बात है।

तो, इसलिए वह थोड़ी सी कठिनाई विवेकानन्द के लिए हुई जो उनको अगले जन्मों में पूरी करनी पड़े, लेकिन वह कठिनाई जरूरी थी। इसलिए रामकृष्ण को लेनी मजबूरी थी। लेनी पड़ी। और नुकसान लेकिन सपने का है। फिर भी मैं कहता हूं, सपने में भी क्यों नुकसान उठाना; सपना ही देखना है तो अच्छा क्यों नहीं देखना, क्यों बुरा देखना।

मैंने सुना है कि ईसप की एक फेबल (बोधकथा) है कि एक बिल्ली एक वृक्ष के नीचे बैठी है और सपना देख रही है। एक कुत्ता भी उधर आकर विश्राम कर रहा है। और बिल्ली बड़ा आनंद ले रही है... बहुत ही आनंद ले रही है सपने में। उसकी प्रसन्नता देखकर कुत्ता भी बहुत हैरान है कि क्या देख रही है, क्या कर रही है! जब उसकी आंख खुली तो उसने पूछा कि जाने से पहले जरा बता दे कि क्या मामला था कि इतनी प्रसन्न हो रही थी! उसने कहा कि बड़ा ही आनंद आ रहा था, एकदम चूहे बरस रहे थे आकाश से। तो उस कुत्ते ने कहा, नासमझ! चूहे कभी बरसते ही नहीं। हम भी सपने देखते हैं; हमेशा हड्डियां बरसती हैं। और हमारे शास्त्रों में भी लिखा हुआ है कि चूहे कभी नहीं बरसते – जब बरसती हैं, हड्डियां बरसती हैं; मूर्ख बिल्ली, अगर सपना ही देखना था तो हड्डी बरसने का देखना था।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कुत्ते के लिए हड्डी अर्थपूर्ण है। कुत्ते काहे के लिए चूहे बरसायें ! लेकिन बिल्ली के लिए हड्डी बिलकुल बेकार है। वह कुत्ता उससे कहता है, सपना ही देखना था तो कम से कम हड्डी का देखती। यानी एक सपना देख रही है ...तो बेकार की बात है; फिर वह भी चूहे का देख रही है, और भी बेकार बात है।

तो मैं आपसे कहता हूं, सपना ही देखना हो तो दुख का क्यों देखना ? और जागना ही है, तो जहां तक बंने... जहां तक बने अपनी सामर्थ्य, अपनी शक्ति, अपने संकल्प का पूरा से पूरा जितना प्रयोग आप कर सकें, वह करें – और रत्ती भर दूसरे की प्रतीक्षा न करें कि वह सहायता पहुंचायेगा। सहायता मिलेगी, वह दूसरी बात है, आप प्रतीक्षा न करें कि सहायता मिलेगी; क्योंकि जितनी आप प्रतीक्षा करेंगे उतना ही आपका संकल्प क्षीण हो जायेगा। आप तो फिक्र ही छोड़ दें कि कोई सहायता करनेवाला है, आप तो अपनी पूरी ताकत अकेला समझ कर लगायें कि मैं अकेला हूं – हां, सहायता बहुत तरह से मिल जायेगी, लेकिन वह बिलकुल दूसरी बात है।

साधना में स्वावलंबी बनना सदा उपादेय

इसलिए मेरा जोर जो है वह निरंतर आपकी पूरी संकल्प शक्ति पर है, ताकि कोई और जरा सी भी बाधा आपके लिए न हो। और जब दूसरे से मिले तो वह आप की मांगी हुई न हो, और न आपकी अपेक्षा हो; वह ऐसे ही आ जाये जैसे हवा आती है और चली जाये।

इस वजह से मैंने कहा कि नुकसान पहुंचा। और जितने दिन वे जिंदा रहे, उतने दिन बहुत तकलीफ में रहे; क्योंकि जो वे कह रहे थे, उस कही हुई बात की दूसरे की आंखों में तो झलक मालूम पड़ती थी, क्योंकि वह चौंक गया है, खुश हुआ है, लेकिन खुद उन्हें पता था कि वह मुझे नहीं हो रहा है। इसलिए बड़ी कठिनाई की बात है न... कि मैं आपके लिए मिठाई की खबर लेकर आऊं और मुझे स्वाद भी न हो। बस एक दफे सपने में थोड़ा सा दिखाई पड़ा हो, फिर सपना टूट गया हो, फिर कहा गया हो कि अब सपना ही नहीं आयेगा दुबारा तुम्हें। बस, अब तुम लोगों तक खबर ले जाओ। तो विवेकानन्द का अपना कष्ट है, लेकिन वे सबल व्यक्ति थे। इस कष्ट को उन्होंने झेला। यह भी करुणा का हिस्सा है। लेकिन इसलिए आपको झेलना चाहिए, यह प्रयोजन नहीं है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विवेकानन्द को समाधि की मानसिक झलक

प्रश्न : विवेकानन्द को जो समाधि का अनुभव हुआ था, रामकृष्ण के संपर्क से, वह क्या प्रामाणिक था अनुभव, समाधि का ?

प्राथमिक कहो; प्रामाणिक तो उतना बड़ा सवाल नहीं है – प्राथमिक, अत्यंत प्राथमिक – जिसमें एक झलक उपलब्ध हो जाती है। और वह झलक, निश्चित ही, बहुत गहरी नहीं हो सकती – और आत्मिक भी नहीं हो सकती; बहुत गहरी नहीं हो सकती। बिलकुल ही जहां हमारा मन समाप्त होता है और आत्मा शुरू होती है, उस परिधि पर घटेगी वह घटना। साइकिक (मनोगत) ही होगी गहरे में, और इसलिए खो गयी। और उसको उससे गहरा होने नहीं दिया गया। उससे गहरा हो जाये तो रामकृष्ण डरे हुए थे। तो उससे गहरा हो जाये तो यह आदमी काम का न रह जाये। और उनको इतनी चिंता थी काम की कि उन्हें यह ख्याल ही नहीं था कि यह कोई जरूरी नहीं है... कि यह आदमी काम का न रह जाये! बुद्ध चालीस साल तक बोलते रहे हैं, जीसस बोलते रहे हैं, महावीर बोलते रहे हैं, कोई इससे कठिनाई नहीं आ जाती। मगर रामकृष्ण का भय स्वाभाविक था, उनको कठिनाई थी। तो जिसको जो कठिनाई होती है, वही उनके ख्याल में थी। इसलिए बहुत ही छोटी सी झलक उनको मिली। प्रामाणिक तो है; जितनी दूर तक जाती है उतनी दूर तक प्रामाणिक है, लेकिन प्राथमिक है, बहुत गहरी नहीं है। नहीं तो लौटना मुश्किल हो जाये।

प्रश्न : क्या समाधि का आंशिक अनुभव भी हो सकता है ?

आंशिक नहीं है, प्राथमिक है। इन दोनों में फर्क है। आंशिक अनुभव नहीं है यह। और समाधि का अनुभव आंशिक हो ही नहीं सकता, लेकिन समाधि की मानसिक झलक हो सकती है। अनुभव तो आध्यात्मिक होगा, झलक मानसिक हो सकती है। जैसे, मैं एक पहाड़ पर चढ़कर सागर को देख लूं। निश्चित ही मैंने सागर देखा, लेकिन सागर बहुत फासले पर है। मैं सागर के तट पर नहीं पहुंचा; मैंने सागर को छुआ भी नहीं; मैंने सागर का जल चखा भी नहीं; मैं सागर में उतरा भी नहीं; मैं नहाया भी नहीं, डूबा भी नहीं; मैंने एक पहाड़ की चोटी पर से सागर देखा और वापिस चोटी से खींच लिया गया। तो मेरे अनुभव को सागर का आंशिक अनुभव कहोगे ?

नहीं, आंशिक भी नहीं कह सकते, क्योंकि मैंने छुआ भी नहीं – जरा भी नहीं छुआ, एक इंच भी नहीं छुआ, एक बूंद भी नहीं छूई, एक बूंद भी चखी नहीं, लेकिन फिर भी क्या मेरे अनुभव को अप्रामाणिक कहोगे ? हां, देखा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तो है ! मेरे देखने में तो कोई कमी नहीं है, सागर मैंने देखा । सागर होकर नहीं देखा, डूबकर नहीं देखा, दूर किसी पीक से, किसी दूर शिखर से दिखाई पड़ गया ! तो तुम अपनी आत्मा को कभी अपने शरीर की ऊंचाई पर खड़े होकर भी देख लेते हो ।

शरीर की भी ऊंचाईयां हैं, शरीर के भी पीक एक्सपीरिएंसेस (चरम अनुभव) हैं । शरीर की भी कोई अनुभूति अगर बहुत गहरी हो तो तुम्हें आत्मा की झलक मिलती है । जैसे, अगर बहुत वेल-बीइंग का अनुभव हो शरीर में, तुम परिपूर्ण स्वस्थ हो, और तुम्हारा शरीर स्वास्थ से लबालब भरा है, तो तुम शरीर की एक ऐसी ऊंचाई पर पहुंचते हो जहां से तुम्हें आत्मा की झलक दिखाई पड़ेगी । और तब तुम अनुभव कर पाओगे कि नहीं, मैं शरीर नहीं हूं, मैं कुछ और भी हूं । लेकिन तुम आत्मा को जान नहीं लिये । लेकिन शरीर की एक ऊंचाई पर चढ़ गये ।

मन की भी ऊंचाइयां हैं । जैसे कि कोई बहुत गहरे प्रेम में – सेक्स में नहीं, सेक्स शरीर की ही संभावना है । और सेक्स भी अगर बहुत गहरा और पीक (शिखर) पर हो, तो वहां से भी तुम्हें आत्मा की एक झलक मिल सकेगी । लेकिन बहुत दूर की झलक – बिलकुल दूसरे छोर से । लेकिन प्रेम की अगर बहुत गहराई का अनुभव हो तुम्हें, और किसी को, जिसे तुम प्रेम करते हो, उसके पास तुम क्षण भर को चुप बैठे हो, सब सन्नाटा है, सिर्फ प्रेम रह गया है तुम्हारे दोनों के बीच डोलता हुआ... और कुछ शब्द नहीं हैं, कोई भांषा नहीं है, कुछ लेन-देन नहीं है, कुछ आकांक्षा नहीं है, सिर्फ प्रेम की तरंगें यहां से वहां पार होने लगी हैं, तो उस प्रेम के क्षण में भी तुम एक ऐसे शिखर पर चढ़ जाओगे जहां से तुम्हें आत्मा की झलक मिल जाये । प्रेमियों को भी आत्मा की झलक मिली है ।

एक चित्रकार एक चित्र बना रहा है... और इतना डूब जाये उस चित्र को बनाने में कि एक क्षण में परमात्मा हो जाये, स्रष्टा हो जाये । जब एक चित्रकार चित्र को बनाता है तो वह उसी अनुभूति को पहुंच जाता है कि अगर भगवान ने कभी दुनिया बनाई होगी तो पहुंचा होगा, उस क्षण में । तो उस पीक (शिखर) पर, लेकिन वह मन की है ऊंचाई । उस जगह से वह एक क्षण को स्रष्टा है, क्रियेटर है; एक झलक मिलती है उसको आत्मा की । इसलिए कई बार वह उसे समझ लेता है कि पर्याप्त हो गयी, वह भूल हो जाती ।

संगीत से मिल सकती है कभी, काव्य में मिल सकती है कभी, प्रकृति के सौंदर्य में मिल सकती है कभी, और बहुत जगह से मिल सकती है, लेकिन

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हैं सब से दूर की चोटियां। समाधि में डूबकर मिलती है। बाहर से तो बहुत शिखर हैं जिन पर चढ़कर तुम झांक ले सकते हो।

तो यह जो अनुभूति है विवेकानन्द की, यह भी मन के ही तल की है; क्योंकि मैंने तुमसे कहा कि दूसरा तुम्हारे मन तक आंदोलन कर सकता है। तो एक पीक (शिखर) पर चढ़ा दिया है...

समाधि की मानसिक झलक भी बहुत महत्त्वपूर्ण

यानी ऐसा समझो कि एक छोटा बच्चा है, मैंने उसे कंधे पर बिठा लिया और उसने देखा, और मैंने उसे कंधे से नीचे उतार दिया; क्योंकि मेरा शरीर उसका शरीर नहीं हो सकता है। उसके पैर तो जितने बड़े हैं उतने ही बड़े हैं। अपने पैर से तो जब वह खुद बड़ा होगा, तब देखेगा, लेकिन मैंने कंधे पर बिठाकर उसको कुछ दिखा दिया; वह कह सकता है जाकर कि मैंने देखा। फिर भी शायद लोग उसका भरोसा भी न करें; वे कहें, तुने देखा कैसे होगा! क्योंकि तेरी तो ऊंचाई नहीं है इतनी कि तू देख सके। लेकिन किसी के कंधे पर क्षण भर बैठकर देखा जा सकता है।

पर वह है संभावना सब मन की, इसलिए वह आध्यात्मिक नहीं है। इसलिए अप्रामाणिक नहीं कहता हूं, लेकिन प्राथमिक कहता हूं। और प्राथमिक अनुभूति शरीर पर भी हो सकती है, मन पर भी हो सकती है। आंशिक नहीं है वह, है तो पूरी, पर मन की पूरी अनुभूति है वह। आत्मा की पूरी अनूभूति नहीं है। आत्मा की पूरी होगी तो वहां से लौटना नहीं है, वहां फिर कोई चाबी नहीं रख सकता है तुम्हारी। और वहां पर तो फिर कोई यह नहीं कह सकता कि हम जब चाबी लौटायेंगे तब होगा। वहां पर तो फिर किसी का कोई बस नहीं है। इसलिए वहां अगर किसी को काम लेना है तो उसके पहले ही उसे रोक लेना पड़ता है; उसे उस तक नहीं जाने देना पड़ता है, नहीं तो फिर कठिनाई हो जायेगी।

है तो प्रामाणिक, लेकिन प्रामाणिकता जो है वह साइकिक (मनोगत) है, स्पिरिचुअल (आध्यात्मिक) नहीं है। वह भी छोटी घटना नहीं है, क्योंकि सभी को वह नहीं हो सकती है; उसके लिए भी मन का बड़ा प्रबल होना जरूरी है। वह भी सबको नहीं होगी।

प्रश्न : विवेकानन्द का उन्होंने शोषण किया, क्या ऐसा कहा जा सकता है?

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कहने में कोई कठिनाई नहीं है। लेकिन यह शब्द सिर्फ सूचक नहीं है, उसमें निंदा भी है। इसलिए नहीं कहना चाहिए। शोषण शब्द में निंदा है, गहरे में उसमें कंडमनेशन (निंदा) है। शोषण नहीं किया; क्योंकि रामकृष्ण को कुछ भी नहीं लेना-देना है विवेकानन्द से, लेकिन विवेकानन्द के द्वारा किसी को कुछ मिल सकेगा, यह ख्याल है। इस अर्थ में शोषण किया कि उपयोग तो कियां, उपयोग तो किया ही। लेकिन उपय़ोग और शोषण में बहुत फर्क है। और शोषण शब्द में जहां मैं अहंकेंद्रित अपने अहंकार के लिए कुछ खींच रहा हूं और उपयोग कर रहा हूं वहां तो शोषण हो जाता है, लेकिन जहां मैं जगत, विश्व, सबके लिए कुछ कर रहा हूं, वहां शोषण का कोई कारण नहीं है। और फिर यह भी तां ख्याल में नहीं है तुम्हें कि अगर रामकृष्ण वह झलक नहीं दिखाते तो विवेकानन्द को वह भी हो जाती, यह भी थोड़े ही पक्का है... इसी जन्म में ही जाती, यह भी थोड़े ही पक्का है। और इस बात को जो जानते हैं, वे तय कर सकतें हैं।

मेरी समझ है कि यही सत्य है, लेकिन अब इसके लिए कोई प्रमाण नहीं जुटाये जा सकते हैं। रामकृष्ण का यह कहना है कि मृत्यु के तीन दिन पहले तुझे चाबी वापिस लौटा दूंगा, कुल इसका कारण इतना भी हो सकता है कि रामकृष्ण की समझ में विवेकानन्द अपने ही आप प्रयास करते तो मरने के तीन दिन पहले समाधि को उपलब्ध हो सकते थे। रामकृष्ण का ऐसा ख्याल है कि अगर यह आदमी अपने आप ही चलता है तो मरने के तीन दिन पहले उस जगह पहुंच जाता। तो कहा कि उस दिन चाबी लौटा देंगे। वे भी चाबी कैसे लौटायेंगे, क्योंकि रामकृष्ण तो मर गये; चाबी लौटानेवाला भी मर गया, लेकिन चाबी लौट गयी तीन दिन पहले। तो इसकी बहुत संभावना है, क्योंकि तुम्हारे व्यक्तित्व को जितना तुम नहीं जानते, उतना, जो जितनी गहराइयों में गया है उतनी गहराइयों में तुम्हें जान सकता है; और यह भी जान सकता है कि तुम अगर अपने ही मार्ग से चलते रहो तो कब पहुंचोगे।

स्वभावतः अगर मैं एक यात्रा पर गया और एक पहाड़ चढ़ गया, उस पहाड़ का रास्ता मुझे मालूम है, सीढ़ियां मुझे मालूम हैं, समय कितना लगता है वह मुझे मालूम है, कठिनाईयां कितनी हैं वे मुझे मालूम हैं; मैं तुम्हें पहाड़ चढ़ते देख रहा हूं; मैं जानता हूं कि तीन महीने लग जायेंगे; समझ रहे हो न? मैं जानता हूं कि तुम जिस रफ्तार से चल रहे हो, जिस ढंग से चल रहे हो, जिस ढंग से भटक रहे हो, उसमें इतना समय लग जायेगा। तो बहुत गहरे में

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

उठाकर, पहाड़ के ऊपर जो है उसकी झलक दिखा दी है और तुम्हें उसी जगह छोड़ दिया है और कहा है कि तीन महीने बाद रास्ता मिल जायेगा; अभी तीन महीने तक रास्ता नहीं मिलेगा।

तो इतना... भीतर इतना सूक्ष्म है बहुत सा – और इतना कांपलेक्स (जटिल) है कि तुम्हें एकदम से ऊपर से नहीं दिखाई पड़ता, ख्याल में नहीं आता।

अब जैसे अभी कल निर्मल गयी घर वापिस तो उसको किसी ने कहा कि त्रेपन वर्ष की उम्र में वह मर जायेगी। तो मैंने उसकी गारन्टी (जिम्मेदारी) ले ली कि त्रेपन वर्ष में नहीं मरेगी। अब यह गारन्टी पूरी मैं नहीं करूंगा, पर यह गारन्टी पूरी हो जायेगी। लेकिन अगर बच गयी त्रेपन वर्ष के बाद, तो वह कहेगी कि मैंने गारन्टी पूरी की। विवेकानन्द कहेंगे कि चाबी तीन दिन पहले लौटा दी। किसको चाबी लौटानी है ?

प्रश्न : ऐसा भी हो सकता है कि रामकृष्ण जानते रहे हों कि विवेकानन्द को साधना की लंबी यात्रा बिना सफलता के करनी है जिसमें उन्हें बहुत दुख भी होगा। इसलिए उन्होंने दुख दूर करने के लिए पहले ही विवेकानन्द को समाधि की एक झलक बता दी ?

'ऐसा भी हो सकता है', ऐसा करके कभी सोचना ही मत, क्योंकि इसका कोई अंत नहीं है। ऐसा भी हो सकता है, ऐसा सोचने का कोई मतलब नहीं होता। इसलिए मतलब नहीं होता कि फिर तुम कुछ भी सोचती रहोगी, और उसका कोई अर्थ नहीं। इसलिए ऐसा कभी मत सोचना कि ऐसा भी हो सकता है, ऐसा भी हो सकता है, ऐसा भी हो सकता है। जितना हो सकता है पता हो, उतना ही सोचना। इससे कोई मतलब नहीं है, क्योंकि वह बिलकुल ही अर्थहीन रास्ते हैं जिन पर हम कुछ भी सोचते रहें, उससे कुछ होगा नहीं। और उससे एक नुकसान होगा, वह नुकसान यह होगा कि 'जैसा है', उसका पता चलने में बहुत देर लग जायेगी। इसलिए हमेशा इसकी फिक्र करना कि 'कैसा है'; और 'जैसा है', उसको जानना हो तो ऐसा हो सकता है, ऐसा हो सकता है, ऐसा हो सकता है, यह अपने मन से काट डालना बिलकुल। इनको जगह ही मत देना। न मालूम हो तो समझना कि मुझे मालूम नहीं कि 'कैसा है।' लेकिन यह अज्ञान की जो स्थिति है कि मुझे मालूम नहीं है, इसे इस ज्ञान से मत ढांक लेना कि ऐसा भी हो सकता है; क्योंकि हम ऐसा ढांके हुए हैं बहुत सी बातें। हम सब लोग इस तरह सोचते रहे हैं। इससे बचो तो हितकर है।

बंबई, रात्रि, दिनांक 4 जुलाई, 1970.

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ओशो
का हिन्दी साहित्य

ओशो हमारे युग के संबुद्ध रहस्यदर्शी हैं। 21 वर्ष की उम्र में वे बुद्धत्व को उपलब्ध हुए। सागर विश्वविद्यालय से दर्शनशास्त्र में एम. ए. की उपाधि प्रथम श्रेणी में प्रथम रहकर प्राप्त करने के बाद वे जबलपुर विश्वविद्यालय में प्राध्यापक रहे। उन्हीं दिनों ओशो देश भर में घूम-घूम कर प्रवचन देते रहे। उन्हें हजारों-लाखों लोग सुनने आते। उन्होंने अपने प्रवचनों में रूढ़िवादी धार्मिक नेताओं को चुनौती दी तथा परंपरागत धारणाओं पर प्रहार किया। जिसके कारण वे विवादास्पाद बने रहे।

ओशो ने अपने प्रवचनों में मानव चेतना के विकास के हर संभव पहलू पर बोला है। हिंदी व अंगरेजी भाषाओं में दिये गये ये मूल प्रवचन 650 पुस्तकों में प्रकाशित हुए हैं जिनका विश्व की 35 भाषाओं में अनुवाद हुआ है। ये प्रवचन आडियो और वीडियो टेप पर भी उपलब्ध हैं। ओशो के सान्निध्य में पूना में सत्य के खोजियों का जो कम्यून खड़ा हुआ वह आज भी फल-फूल रहा है। विश्व भर से हजारों-हजारों शिष्य एवं साधक समूचे वर्ष यहां ध्यान तथा अन्य कार्यक्रमों में भाग लेने के लिए आते रहते हैं।

उपनिषद

सर्वसार उपनिषद
कैवल्य उपनिषद
अध्यात्म उपनिषद
कठोपनिषद
आत्म-पूजा उपनिषद
केनोपनिषद
असतो मा सद्गमय
मेरा स्वर्णिम भारत
(विविध उपनिषद-सूत्र)

कृष्ण

गीता-दर्शन अध्याय 1-2
गीता-दर्शन अध्याय 3
गीता-दर्शन अध्याय 4-5
गीता-दर्शन अध्याय 6
गीता-दर्शन अध्याय 7-8
गीता-दर्शन अध्याय 9-10
गीता-दर्शन अध्याय 11
गीता-दर्शन अध्याय 12
गीता-दर्शन अध्याय 13-14

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

गीता-दर्शन अध्याय 15-16
गीता-दर्शन अध्याय 17
गीता-दर्शन अध्याय 18
कृष्ण-स्मृति

महावीर
महावीर-वाणी भाग 1
महावीर-वाणी भाग 2
महावीर-वाणी (पुस्तिका)
जिन-सूत्र भाग 1
जिन-सूत्र भाग 2
जिन-सूत्र भाग 3
जिन-सूत्र भाग 4
महावीर या महाविनाश
महावीर : मेरी दृष्टि में
ज्यों की त्यों धरि दीन्हीं चदरिया

बुद्ध
एस धम्मो सनंतनो भाग 1
एस धम्मो सनंतनो भाग 2
एस धम्मो सनंतनो भाग 3
एस धम्मो सनंतनो भाग 4
एस धम्मो सनंतनो भाग 5
एस धम्मो सनंतनो भाग 6

लाओत्से
ताओ उपनिषद भाग 1
ताओ उपनिषद भाग 2
ताओ उपनिषद भाग 3
ताओ उपनिषद भाग 4
ताओ उपनिषद भाग 5
ताओ उपनिषद भाग 6

कबीर
सुनो भई साधो
कहै कबीर दीवाना
कहै कबीर मैं पूरा पाया
मगन भया रसि लागा
घूंघट के पट खोल
न कानों सुना न आंखों देखा
(कबीर व फरीद)

अष्टावक्र
महागीता भाग 1
महागीता भाग 2
महागीता भाग 3
महागीता भाग 4
महागीता भाग 5
महागीता भाग 6

शांडिल्य
अथातो भक्ति जिज्ञासा भाग 1
अथातो भक्ति जिज्ञासा भाग 2

मीरा
पद घुंघरू बांध
झुक आई बदरिया सावन की

दादू
सबै सयाने एक मत
पिव पिव लागी प्यास

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जगजीवन
नाम सुमिर मन बावरे
अरी, मैं तो नाम के रंग छकी

सुंदरदास
हरि बोलौ हरि बोल
ज्योति से ज्योति जले

धरमदास
जस पनिहार धरे सिर गागर
का सोवै दिन रैन

मलूकदास
कन थोरे कांकर घने
रामदुवारे जो मरे

दरिया
कानों सुनी सो झूठ सब
अमी झरत बिगसत कंवल

पलटू
अजहूं चेत गंवार
सपना यह संसार
काहे होत अधीर

अन्य रहस्यवादी
भक्ति-सूत्र (नारद)
शिव-सूत्र (शिव)
भजगोविन्दम् मूढ़मते
(आदिशंकराचार्य)
एक ओंकार सतनाम (नानक)
जगत तरैया भोर की (दयाबाई)
बिन घन परत फुहार (सहजोबाई)
नहीं सांझ नहिं भोर (चरणदास)
संतो, मगन भया मन मेरा (रज्जब)
कहै वाजिद पुकार (वाजिद)
मरौ हे जोगी मरौ (गोरख)
सहज-योग (सरहपा-तिलोपा)
बिरहिनी मंदिर दियना बार (यारी)
दरिया कहै सबद निरबाना
(दरियादास बिहारवाले)
प्रेम-रंग-रस ओढ़ चदरिया (दूलन)
हंसा तो मोती चुगैं (लाल)
गुरु-परताप साध की संगति (भीखा)
मन ही पूजा मन ही धूप (रैदास)
झरत दसहुं दिस मोती (गुलाल)
जरथुस्त्र : नाचता-गाता मसीहा
(जरथुस्त्र)
समाधि के सप्त द्वार (ब्लावट्स्की)
साधना-सूत्र (मेबिल कॉलिन्स)

झेन, सूफी और
उपनिषद की कहानियां
बिन बाती बिन तेल
सहज समाधि भली
दीया तले अंधेरा

प्रश्नोत्तर
नहीं राम बिन ठांव
प्रेम-पंथ ऐसो कठिन

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

उत्सव आमार जाति, आनंद आमार गोत्र
मृत्योर्मा अमृतं गमय
प्रीतम छबि नैनन बसी
रहिमन धागा प्रेम का
उड़ियो पंख पसार
सुमिरन मेरा हरि करैं
पिय को खोजन मैं चली
साहेब मिल साहेब भये
जो बोलैं तो हरिकथा
बहुरि न ऐसा दांव
ज्यूं था त्यूं ठहराया
ज्यूं मछली बिन नीर
दीपक बारा नाम का
अनहद में बिसराम
लगन महूरत झूठ सब
सहज आसिकी नाहिं
पीवत रामरस लगी खुमारी
रामनाम जान्यो नहीं
सांच सांच सो सांच
आपुई गई हिराय
बहुतेरे हैं घाट
कोंपलें फिर फूट आईं
फिर पत्तों की पांजेब बजी
फिर अमरित की बूंद पड़ी
मूलभूत मानवीय अधिकार
नया मनुष्य : भविष्य की एकमात्र आशा
चेति सकै तो चेति
क्या सोवै तू बावरी
सत्यम् शिवम् संदरम
रसो वै सः
सच्चिदानंद
पंडित-पुरोहित और राजनेता
मानव आत्मा के शोषक
ॐ मणि पद्मे हुम्
हरि ॐ तत्सत्
ॐ शांतिः शांतिः शांतिः
एक महान चुनौती : मनुष्य का स्वर्णिम भविष्य
मैं धार्मिकता सिखाता हूं, धर्म नहीं
एक एक कदम
चल हंसा उस देस
कहा कहूं उस देस की
पंथ प्रेम को अटपटो

ध्यान, साधना, योग
ध्यानयोग : प्रथम और अंतिम मुक्ति
रजनीश ध्यान योग
हसिबा, खेलिबा, धरिबा ध्यानम्
नेति-नेति
मैं कहता आंखन देखी
पतंजलि : योग-सूत्र भाग 1
पतंजलि : योग-सूत्र भाग 2

साधना-शिविर
साधना-पथ
ध्यान-सूत्र
जीवन ही है प्रभु
माटी कहै कुम्हार सूं
मैं मृत्यु सिखाता हूं
जिन खोजा तिन पाइयां

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तंत्र
संभोग से समाधि की ओर
तंत्र-सूत्र भाग 1
तंत्र-सूत्र भाग 2
तंत्र-सूत्र भाग 3
तंत्र-सूत्र भाग 4
तंत्र-सूत्र भाग 5
तंत्र-सूत्र भाग 6
तंत्र-सूत्र भाग 7
तंत्र-सूत्र भाग 8

बोध-कथा
मिट्टी के दीये
पत्र-संकलन
क्रांतिबीज
पथ के प्रदीप
अंतर्वीणा
प्रेम की झील में अनुग्रह के फूल

राष्ट्रीय और सामाजिक समस्याएं
देख कबीरा रोया
स्वर्ण पाखी था जो कभी और
अब है भिखारी जगत का
शिक्षा में क्रांति
नये समाज की खोज

ओशो के संबंध में
भगवान श्री रजनीश : ईसा मसीह के
पश्चात सर्वाधिक विद्रोही व्यक्ति

ओशो के साहित्य की समस्त जानकारी के लिए
सम्पर्कसूत्र :

साधना फाउंडेशन 17, कोरेगांव पार्क, पूना-411001
(महाराष्ट्र) फोन : 660963

ओशो के आडियो एवं वीडियो प्रवचन के लिए

सम्पर्क सूत्र :

रेबल डिस्ट्रिब्यूशन प्रा. लि.

17 कोरेगांव पार्क, पूना-411001

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ओशो टाइम्स इंटरनेशनल

ओशो के संदेश का हिन्दी पाक्षिक

एक प्रति का मूल्य 5 रुपये वार्षिक शुल्क 120 रुपये

ओशो दर्शन

एक विशिष्ट द्विभाषी (हिंदी, अंगरेजी) त्रैमासिक पत्रिका

एक प्रति का मूल्य 35 रुपये

वार्षिक शुल्क 140 रुपये (रजिस्टर्ड डाक से)

अपना डिमांड ड्राफ्ट या मनीआर्डर

'ताओ पब्लिशिंग प्रा.लि.'

50, कोरेगांव पार्क, पूना-411001 (महाराष्ट्र) के नाम से भेजें

ओशो के विषय में अधिक जानकारी के लिए सम्पर्कसूत्र :

ओशो कम्यून इंटरनेशनल

17, कोरेगांव पार्क, पूना-411001 (महाराष्ट्र) फोन : 660963

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पुस्तक समीक्षा

मैं मृत्यु सिखाता हूं

केवल जीवन की पूजा करने वाले, सुख सुविधाओं की कामना करने वाले मृत्यु को जीवन का दुश्मन समझकर उसके विरोध मे बोलते हैं और यथा संभव मौत को अपने से दूर रखने की कोशिश करते हैं। लेकिन ओशो कहते हैं- "मै मृत्यु सिखाता हूं, लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि मै जीवन का विरोधी हूं।" ओशो के लिए जीवन और मृत्यु एक ही सिक्के के दो पहलू है, एक ही तराजू के दो पलड़े है। मृत्यु के भय से त्रस्त लोगों के भाग भागकर जीवन के पलड़े में ही घुसने और उसी में सवार रहने की कोशिश करना अपने जीवन का लक्ष्य बंना लिया है, जिसमे जीवन का पलडा भारी हो गया और सन्तुलन बिगड़ गया।

मृत्यु से बचने के लिए मनुष्य ने क्या-क्या अपराध नही कियें। स्वंय को जीवित रखने के लिए ही तानाशाहों ने हजारो लाखों लोगों को मौत के घाट उतार दिया, लाखों को अमानवीय यातनाएं दीं, लेकिन अपने आपको मौत से वे फिर भी न बचा सकें।

मृत्यु के यदि इसी रहस्य को मनुष्य समझ ले तो जीवन आसान सहज हो जाए। जीवन के मोह से यदि चिपकना कम हो जाए तो अपराध भी कम हों। यदि आप मृत्यु का रहस्य जान लें तो आप भी उसी अवस्था में होंगे जहां सिद्ध लोग होते हैं। इसलिए जब ओशो कहते हैं कि मै मृत्यु सिखाता हूं तो मै समझता हूं कि यही सच्चा जीवन-दर्शन है। यदि जीवन को सहज, आनंद, मुक्ति और प्रेम के साथ जीना है तो उसके लिए मृत्यु के रहस्य को जानना आवश्यक है। यह पुस्तक आपको जीवन और मृत्यु का रहस्य सिखाने के लिए ओशों की एक अनुपम रचना है

मैं मृत्यु सिखाता हूं। लेखक-ओशो। प्रकाशक-डायमंड पाकेट बुक्स (प्रा.)लि. नयी दिल्ली, पृष्ठ 343, मूल्य 60/-

■ सोमदत्त शर्मा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पुस्तक समीक्षा

एक ओंकार सतनाम

एक ओंकार सतनाम, नानक वाणी पर ओशो की यह प्रवचनमाला एक अनूठी पुस्तक है। ओशो ने गुरु नानक देव जी के उपदेशों को, जो आज के हिंसा के माहौल में भुला दिये गए हैं, उन्हें पुनर्जीवित करके हमारे देश और समूची मानवता के सामने रखा है।

गुरु नानक के ये उपदेश केवल पूजा पाठ तथा अन्य धार्मिक अनुष्ठानों के लिए ही नही हैं। ये तो जीवन को रुपांतरित करके ध्यान, प्रेम, अहिंसा और शांति के पथ पर चलने के लिए हैं।

आज पंजाब ही नहीं, भारत और पूरा विश्व ही गुरु नानक की शिक्षा को भुला बैठा है। जगह-जगह पर होने वाले साम्प्रदायिक दंगें, जगह-जगह भडक उठने वाली हिंसा राजनैतिक शक्तियों का आपस में टकराव जिसके परिणाम स्वरुप होने वाला नरसंहार इस बात की ओर स्पष्ट संकेत करता है कि आज के मानव के लिए गुरु नानक की अहिंसा, सद्भावना और प्रेम की शिक्षा कितनी आवश्यक है।

ओशो ने जिस सरल और सुबोध भाषा में गुरु नानक की वाणी जपुजी साहब की इतनी सटीक व्याख्या प्रस्तुत करके आज की पीडित मानवता को सुख, शांति, अहिंसा, प्रेम और आपसी भाई चारे की नयी राह दिखाई है।

एक ओंकार सतनाम, लेखक-ओशो, प्रकाशक-डायमंड पाकेट बुक्स (प्रा.) लि. नयी दिल्ली, पृष्ठ 439, मूल्य 80 रुपये।

■ सोमदत्त शर्मा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पुस्तक समीक्षा

प्रेम के द्वार पर दस्तक

प्रत्येक व्यक्ति सारा जीवन प्रेम के द्वार पर दस्तक देता है। इस प्रेम को पाने और देने के लिए ही सारे जीवन की खोज है। लेकिन सामान्य व्यक्ति ऐसी वस्तुओं में अटक जाते हैं जो छोटी हैं, जल्दी ही चूक जाती है और वे ऊब जाते हैं। जब तक प्रेम विराट से न लगे तब तक हम बार-बार प्रेम के विषय बदलते रहेंगे। सिर्फ परमात्मा का प्रेम कभी न चुकेगा।

इस प्रेम को पाने के मार्ग में सबसे बड़ी समस्या है अहंकार की। तुमने अगर कहा कि, 'मैं हूं' तो प्रेम द्वार बंद कर लेता है। प्रेम का अर्थ ही है कि तुम दूसरे से मिलने को राजी हो। दूसरे को अपने में लीन हो जाने के लिए आमंत्रण प्रेम है। प्रेम में सारी सीमाएं हट जाती है— भीतर का दीया प्रज्ज्वलित हो उठता है।

इस पुस्तक में संग्रहित पांच प्रवचन इस भावना के प्रतीक हैं। वे कहते हैं— 'प्रेम गली अति सांकरी जा में दो न समाहिं', 'कृत्य नहीं भाव है महत्वपूर्ण', 'द्वैत के विसर्जन से एक स्वरता का जन्म' होता है, 'सत्य और असत्य के बीच चार अंगुल का अंतर' है तथा 'श्रद्धा की आंख से जीवित ज्योति की पहचान' की जा सकती है।

□ ध्यान : एक शून्य गगन

प्रकाशक : डायमंड पॉकेट बुक्स, 2715, दरिया गंज, नई दिल्ली; मूल्य : 12 रुपये।

ओशो के साथ ध्यान मुद्रा में बढ़ने का अर्थ है मन के आकाश में विचार की बदलियों का समापन।

ओशो का विचार है—तुम अगर उद्विग्न हो, परेशान हो, संतप्त हो तो उसका एक ही कारण है कि परिधि के साथ तुमने को एक समझा। अनंत जन्मों से तुम वहीं परिधि पर खड़े हारते चले आ रहे हों। वहां तो कोई भी खड़ा रहेगा तो हवाएं छुयेंगी। दुःख आयेंगे। सुख आयेंगे और तुम इनसे प्रभावित हुए बिना रह ही नहीं सकते। इसके लिए आवश्यक है अकंप चित में सत्य का उदय।

इस पुस्तक में ओशो के पांच प्रवचन संकलित हैं—शरीर से तादात्म्य के कारण आत्मिक दीये के तले अंधेरा, अकंप, चित में सत्य का उदय, समाज की उपेक्षा कर स्वयं में छिपे ध्यान स्रोत की खोज करें, मृत शहरों से जीवित की प्राप्ति असंभव, मृत्यु के सतत स्मरण से अमृत की उपलब्धि।

—डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पुस्तक समीक्षा

रजनीश ध्यान योग

☐ प्रकाशक : डायमंड पॉकेट बुक्स, 2715, दरिया गंज, नई दिल्ली; मूल्य : 16 रुपये।

'रजनीश ध्यन योग' ओशो रजनीश की एक नयी पुस्तक है जो ध्यान के विषय में है। ध्यान की जो परिभाषा रजनीश ने दी है वह परम्परागत परिभाषाओं से भिन्न है। रजनीश के लिए ध्यान का उद्देश्य है अतीत को मिटाना और भविष्य को भी। चूंकि विचारों की गति भविष्य और अतीत के बीच ही सीमित है इसलिए ध्यान का अर्थ मस्तिष्क को विचारों से भी मुक्त करना है। ध्यान का यही क्षण, ध्यान की यही स्थिति, रजनीश के अनुसार नित्य-जीवन, का चिर-नवीन क्षण है जो कभी पुराना नहीं पड़ता।

'रजनीश ध्यान योग' में रजनीश के पूरे साहित्य से ध्यान-विधि एवं ध्यान-साधना सामग्री को संचित किया गया है। रजनीश की शैली की खूबी यह है कि वे जटिल से जटिल विषय को भी सरस और मनोरंजक तरीके से प्रस्तुत कर पाने में सफल होते हैं। ध्यान के मनोवैज्ञानिक महत्व ,आज के कठिन संयम में जीवन को सरल बनाने में ध्यान की उपयोगिता एवं इस विषय के बारे में प्रश्नों के संबंध में रजनीश ने गूढ़ लेकिन सरल व्याकरण-

रजनीश की अन्य पुस्तकों की तरह इस पुस्तक का भी उद्देश्य है लोगों के मन में उनके जीवन के बारे में कुतूहल पैदा करना और फिर उन्हें अपने जीवन के रहस्य के भीतर उतरने के लिए प्रेरित करना।

परम प्रेम रूपा भक्ति (नारद भक्ति सूत्र)

☐ लेखक : ओशो (भगवान रजनीश), प्रकाशक : डायमण्ड पाकेट बुक्स प्रा. लि., मूल्य 12 रुपये।

पुस्तक में नारद भक्ति सूत्र को केन्द्र बिंदु बनाकर, ओशो ने बड़ी कुशलता से मानव जीवन रहस्यों को उकेरा है। यहां वे कहते हैं जब मनुष्यता के सामने दो ही विकल्प हैं, 'आत्महत्या या नयी चेतना में छलांग, ओशो ने नयी चेतना में छलांग पर पुस्तक में जो कुछ लिखा है, उसके माध्यम से नयी पीढ़ी आकर्षित हुए बिना नहीं रह सकती। प्रेम को इन्होंने सर्वोपरि माना व मानकर उस एक अपरिमेय सत्ता का वास्तविक स्वरूप प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया है। पुस्तक तर्कसंगत है।

डा. गिरिराज शरण अग्रवाल

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

OSHO BOOKS
PUBLISHED BY
DIAMOND POCKET BOOKS

- Bauls : The Dancing Mystics
- Bauls : The Seekers of the Path
- Bauls : The Mystics of Celebration
- Bauls : The Singing Mystics
- Eternal Celebration
- The Greatest Gamble
- Here & Now
- Towards the Unknown
- A Song Without Words
- Inner Harmony
- Sing, Dance, Rejoice
- Secret of Disciplehood
- Freedom from the Mind
- Life A Song, A Dance
- Laughter is my Message
- Meeting the Ultimate
- A Taste of the Divine
- One Earth One Humanity
- The Master is a Mirror
- Rising in Love
- The Forgotten Languge of the Heart
- Tantra Vision : The Secret of The Inner Experience
- Tantra Vision : An invitation of Silence
- Tantra Vision : Beyond The Barriers of Wisdom
- Tantra Vision : The Door to Nirvana
- The cessation of Mind
- The Birth of Being
- The Alchemy of Enlightenment
- From Ignorance to
- Innocence
- The Mystery Beyond Mind
- The Centre of the Cyclone
- Be Oceanic
- Ecstasy : The Languge of Existence
- Fly Without Wings
- Vedanta : An Art of Dying
- Vedanta : The First Star in The Evening
- Vedanta : The Supreme Knowledge
- Vedanta : The Ultimate Truth
- On War & Peace
- Meditation The Ultimate
- Adventure
- Love and Meditation
- Be Silent & know
- Turning in
- The way of the white clouds

DIAMOND POCKET BOOKS (P) Ltd
2715, DARYA GANJ NEW DELHI 110002

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

डायमंड पाकेट बुक्स में ओशो का अलौकिक साहित्य

एक ओंकार सतनाम
मैं मृत्यु सिखाता हूँ
संभोग से समाधि की ओर- I-IV
मिट्टी के दीये
साधना सूत्र : हेरत हेरत हे सखी
साधना सूत्र : आत्मा का कमल
सधना सूत्र : हृदय संगीत
रजनीश ध्यान योग
चेति सकै तो चेति
एक महान चुनौती : मनुष्य का सवर्णिम भविष्य
सहज जीवन के स्वर
सहज जीवन के सूत्र
जीवित मन्दिर जीवन क्रांति
हरि ओं३म् तत्सत्
ओं३म् मणि पद्मे हुम्
ओं३म् शांतिः शांतिः शांतिः
शून्य समाधि
सम्बोधि के क्षण
शून्य का दर्शन अमृत की दिशा
सम्भावनाओं की आहट
बहुतेरे हैं घाट
मैं धार्मिकता सिखाता हूं धर्म नहीं
नये समाज की खोज
एक एक कदम प्रार्थना के बीज
आकाश भर आनन्द
साधना के आयाम
सहज योग : अभी और यहीं
सहज योग : ध्यान और प्रेम
सहज योग : साक्षी और प्रेम
सहज योग : प्रार्थना और आनन्द
सहजयोग : महाक्रान्ति
योग-सूत्र : अहंकार और समर्पण
योग-सूत्र : बुद्धों का मनोविज्ञान
योग-सूत्र : नींद, स्वप्न और बोध
योग सूत्र : समाधि के दो रूप
योग-सूत्र : एक वैज्ञानिक दृष्टि
योग-सूत्र : आंतरिक अनुष्ठान
योग-सूत्र : प्रज्ञा और समाधि
योग-सूत्र : सद्गुरु को समर्पण
ध्यान सूत्र : अन्तिम यात्रा
ध्यान सूत्र : एक अपूर्व अभियान
प्रभु की पगडंडियाँ
शिक्षा : नये प्रयोग
शिक्षा और विद्रोह
शिक्षा और जागरण
शिक्षा में क्रान्ति साधना पथ
भारत के जलते प्रश्न
धर्म और राजनीति
स्वर्णिम भारत
प्रेम है द्वार सत्य का
दिया बले अगम का
शून्यता है महामुक्ति
मुक्त गगन के पंछी
जीवन संगीत सहजै रहिबा
सतगुर मिलै ते उबरै
सबद भया उजियाला
हंसे खेलै न करे मन भंग
उपनिषद-शून्य संवाद
एकमात्र उपाय : जागो
क्रान्ति सूत्र : साक्षी भाव
इक साधे सब सधे
भारत एक अनूठी संपदा
गीता : कृष्णा का योग विज्ञान
गीता : मनोविज्ञान का परम शास्त्र
गीता : विज्ञान, कला, अध्यात्म
गीता : समस्त योगों का सार
भक्ति : परम प्रेम रूपा
भक्ति : विराट का अनुभव
भक्ति : शून्य की झील में प्रेम का कमल
भक्ति : निराकार से एकाकार
भक्ति : जीवन रूपांतरण की कला
अस्वीकृति में उठा हाथ
नयी क्रान्ति की रूपरेखा
विचार क्रान्ति
गांधी पर पुनर्विचार
दिया अमृत पाया जहर
कुंडलिंनी और तंत्र
कुंडलिनी और सात शरीर
कुंडलिनी जागरण और शक्तिपात
कुंडलिनी यात्रा
साक्षी कृष्ण और रासलीला
कृष्ण : साधना रहित सिद्धि
कृष्ण और हंसता हुआ धर्म
ऐसी भक्ति करे रैदासा
दरिया झूठ सो झूठ है
जात हमारी ब्रहम है
सुखिया सब संसार
दुखिया दास कबीर
जित देखूं तित तूं
जोतहिं जोति समानी
बोलै शेख फरीद
सत भाषै रैदास
क्या मेरा क्या तेरा
मन लागा यार फकीरी में
कृष्ण गुरु भी सखा भी
कृष्ण जिज्ञासा खोज उपलब्धि
शिव साधना शिव दर्शन
निरगुन का बिसराम
लिखा लिखी की है नहीं
गुरु गोविन्द दोउ खड़े
हीरा पायो गांठ गठियायो
मेरे तो गिरधर गोपाल
राम नाम रस पीजै
राम नाम निज औषधि
दादू सहजे देखिए
नहीं जोग नहीं जाप
तेरा साईं तुज्झ में
आपुई गई हिराय

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

OSHO BOOKS
PUBLISHED BY
DIAMOND POCKET BOOKS

Bauls : The Dancing Mystics
Bauls : The Seekers of the Path
Bauls : The Mystics of Celebration
Bauls : The Singing Mystics
Eternal Celebration
The Greatest Gamble
Here & Now
Towards the Unknown
A Song Without Words
Inner Harmony
Sing, Dance, Rejoice
Secret of Disciplehood
Freedom from the Mind
Life a Song, a Dance
Laughter is my Message
Meeting the Ultimate
A Taste of the Divine
One Earth One Humanity
The Master is a Mirror
Rising in Love
The Forgotten Language of the Heart
The Alchemy of Enlightenment
From Ignorance to Innocence
The Mystery Beyond Mind
The Centre of the Cyclone
Be Oceanic
Ecstasy : The Language of Existence
Fly Without Wings
Vedanta : An Art of Dying
Vedanta : The First star in The Evening
Vedanta : The Supreme Knowledge
Vedanta · The Ultimate Truth
On War & Peace
Be Silent And Know
Meditation : The Ultimate Adventre
Love And Meditation
Turning in
Tantra Vision : The Secret of the Inner Experience
Tantra Vision : An Invitation to Silence
Tantra Vision : Beyond the Barriers of Wisdom
Tantra Vision : The Door To Nirvana

DIAMOND POCKET BOOKS

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

A.H.W.
Sameer Series

ओशो रजनीश

ओशो रजनीश अद्वैत का माधुर्य हैं, समग्रता का सौंदर्य हैं; जगत के समस्त विरोधाभासों का काव्य हैं। उनका होना, न-होने को अपने में समाहित किये हुए है। वे शून्य हैं और पूर्ण भी। वे स्वयं संदेश हैं – अनादि के, अनंत के, सनातन के, भगवत्ता के।

उनकी प्रत्येक भाव-भंगिमा बड़ी अनूठी और मधुरिमा-युक्त है। उनका चलना होता है तो जैसे स्वयं नृत्य झंकृत हो रहा है। उनका बैठना होता है तो मानो अस्तित्व और अनस्तित्व मिलकर सूक्ष्म संगीत का सुमधुर ताना-बाना बुन रहे हैं। उनका उठना होता है तो जैसे अनाहत की आहट हो रही है। उनका मुखर होना होता है तो जैसे अमृत-वाणी का प्रबल प्रवाह चला आ रहा है। वे पलकें बंद करते हैं, तो मानो अनंत अस्तित्व की लीला में समा रहे हैं। वे पलकें खोलते हैं तो जैसे सागर लहरों की क्रीड़ा का निनाद सुन रहा है। वे चले जाते हैं तो जैसे सब ठहर जाता है, सहम जाता है।

उनके आलोक की रश्मियां हमारे अंधकार के साथ आंख-मिचौली खेलती हैं। हमारा अंधकार उनके आलोक से ही उनको देख पाता है क्षण भर को,और तब वह क्षण भी विराट हो जाता है। हमारी वेदना उन तक जाती है तो वे अपनी संवेदना का संस्पर्श देकर लौटा देते हैं। हसारी उदासी उन तक जाती है तो आनंद की गहराई लेकर लौट आती है।

उनके आशीष अहिर्निश बरस रहे हैं। हमारे प्राणों में जब भी अभीप्सा की आग जलती है और हम समर्पित होते हैं तो उनके मेघ खिंचे आते हैं, हम पर बरस जाते हैं।

उनकी करुणा अपार है!

15/-

डायमंड पाकेट बुक्स

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal